देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८६/२

9 772395 711007
Impact Factor
8.642

ISSN : 2395-7115
April 2026
Vol.-23, Issue-4

# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Editor :
Dr. Naresh Sihag
Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

**AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL**

**https://doi.org/10.5281/zenodo.18964167**

**Vol. 23** **ISSUE-4, Part-2** **(अप्रैल 2026)** **ISSN : 2395-7115**

*प्रेरणा :*

**चौ. एम. सिहाग**

*सम्पादक :*

**डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल'**, एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल

*कार्यकारी सम्पादक :*

**प्रो. शकुन्तला चौहान**

शामली, उत्तर प्रदेश।

**प्रकाशक :**

**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)**

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

**सम्पादकीय सम्पर्क :**
**डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट**
**202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,**
**भिवानी-127021 (हरियाणा)**
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

*Published by :*
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

_Disclaimer :_
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

*Printed by :* Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

# बोहल शोध मंजूषा परिवार*

## मानद संरक्षक

**डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'**
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

**डॉ. विश्वबंधु शर्मा**
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

**डॉ. विनोद तनेजा**
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

## सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
**डॉ. रेखा सोनी**
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
**डॉ. सुशीला आर्या**
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
**समुन्द्र सिंह**
भिवानी, हरियाणा।

## विधि विशेषज्ञ

**डॉ. रामफल दलाल**, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

**अजीत सिहाग**, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

**चरणवीर सिंह**, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

## विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

**डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

**डिल्लीराम शर्मा संग्रौला**
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

**डॉ. संजय एल. मादार**
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

**डॉ. गीता दहिया**, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

**डॉ. इस्पाक अली**
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

**डॉ. मो. रियाज़ खान**
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

**डॉ. वनिता कुमारी**
च. दादरी (हरियाणा)

**श्री सहदेव समर्पित**
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

**डॉ. अंजली उपाध्याय**
उत्तर प्रदेश

**डॉ. लता एस. पाटिल**
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

**प्रो. अमनप्रीत कौर**
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

**डॉ. वर्षा रानी**
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

**प्रो. कमलेश चौधरी**
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

**डॉ. किरण गिल**
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

**डॉ. सविता घुड़केवार**
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

**डॉ. परमजीत कौर**
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

**डॉ. राजकुमारी शर्मा**
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

**डॉ. श्रीविद्या एन.टी.**
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

**डॉ. बी. संतोषी कुमारी**
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

**श्री राकेश ग्रेवाल**
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

**डॉ. पंडित बन्ने**
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

**डॉ. करमजीत कौर**
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

**श्री राकेश शंकर भारती**
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

**डॉ. उमा सैनी**
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

**डॉ. मनमीत कौर**
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

**डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी**
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

**डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां**
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

**डॉ. शबाना हबीब**
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

**डॉ. शिवकरण निमल**
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

**डॉ. राधाकृष्णन गणेशन**
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

**डॉ. मानसिंह दहिया**
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

**डॉ. नीलम आर्या**
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

**डॉ. रवि सुण्डयाल**
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

**प्रो. नरेन्द्र सोनी**
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

**डॉ. रोहतास**
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

**प्रो. सत्यबीर कालोहिया**
पूर्व प्राचार्य,
कैलिफोर्निया।

**पठान चिन्ना जानी**
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

**डॉ. वैशाली सिंह**
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

**डॉ. रेखा रानी**
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

**डॉ. के.के. मल्हौत्रा**
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

**डॉ. अंकिता चतुर्वेदी**, प्रवक्ता
भीमसेन डिग्री कॉलेज
(आगरा यूनिवर्सिटी)

**शिओंग छन श्यू**
चीन

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)



**Table 2**

**Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score**

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

| S.N. | Academic/Research Activity | Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences | Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines |
|---|---|---|---|
| 1. | **Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals** | 08 per paper | 10 per paper |
| 2. | **Publications (other than Research papers)** | | |
| | **(a) Books authored which are published by ;** | | |
| | International publishers | 12 | 12 |
| | National Publishers | 10 | 10 |
| | Chapter in Edited Book | 05 | 05 |
| | Editor of Book by International Publisher | 10 | 10 |
| | Editor of Book by National Publisher | 08 | 08 |
| | | | |
| | | | |
| | **(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties** | | |
| | Chapter or Research paper | 03 | 03 |
| | Book | 08 | 08 |
| 3. | **Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula** | | |
| | **(a) Development of Innovative pedagogy** | 05 | 05 |
| | **(b) Design of new curricula and courses** | 02 per curricula/course | 02 per curricula/course |

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

## अनुक्रमाणिका - अप्रैल 2026


| क्र. | विषय | लेखक | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| 1. | सम्पादकीय | डॉ. नरेश सिहाग | 09-09 |
| 2. | 'आपका बंटी' की प्रासंगिकता : एक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक अध्ययन | डॉ. सुनीता देवी | 10-14 |
| 3. | प्रधानमंत्री आवास योजना और गरीबों का सशक्तिकरण : विकसित भारत 2047 की ओर | जगदीश कुमार धुर्वे, डॉ. राखी सक्सेना | 15-19 |
| 4. | **Indian Diaspora as a Bridge of Soft Power in Africa** | **Rakesh Kumar Sharma, Dr. Laxmi Kumari** | **20-27** |
| 5. | गरीबी व पलायान रोकने में मनरेगा की प्रासंगिकता | अनूप कुमार, डॉ. शैलेन्द्र कुमार | 28-31 |
| 6. | भाषा एवं साहित्य शिक्षण में तकनीक और डिजिटल माध्यम | डॉ. कुमकुम श्रीवास्तव | 32-37 |
| 7. | महामति प्राणनाथ की यात्रा वृत्तांतों में लोक चेतना | नीलेश कुमार प्रजापति, डॉ. जी. पी. अहिरवार | 38-45 |
| 8. | हिन्दी प्रदेश की बोलियाँ, उपभाषाएँ तथा जनजातीय भाषाएँ : एक अध्ययन | कपिल कुमार, डॉ. नीलम राणा | 46-53 |
| 9. | **A Comparative Study of Job Stress among Physical Education Teachers of Rajasthan** | **Dr. Gajender Singh Saroha, Kailash Chand Haritwal** | **54-57** |
| **10.** | **A Comparative Study of Anthropometric Characteristics of Softball Players in Rajasthan** | **Dr. Shipra Chakraborty, Rajendra Kumar Palsaniya** | **58-60** |
| **11.** | वर्तमान समय में सोशल मीडिया द्वारा ब्रांडिंग को दी जाने वाली नई दिशाएं और आकार : एक विस्तृत अकादमिक अध्ययन | **Dr. Sushil Kumar Daiya, Hema** | **61-64** |
| **12.** | **Patterns and Socio-Economic Implications of Migration : A Case Study of Gorakhpur District** | **Chandan Kumar Yadav, Prof. Pawan Kumar Yadav** | **65-71** |
| 13. | भारतीय ज्ञान परंपरा का सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्व | डॉ. नरेश कुमार | 72-77 |
| 14. | आधुनिक पारिवारिक विघटन के संदर्भ में 'आपका बंटी' की प्रासंगिकता | जयविर वाशिष्ठ | 78-85 |
| 15. | जनजातीय समुदायों में परंपरागत ज्ञान, स्वच्छता और स्वास्थ्य व्यवहार का समाजशास्त्री विश्लेषण | विशाल चन्द | 86-91 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 16. | **Sub-Categorization in OBC Quota & the pursuit of Justice : Revisiting the Karpoori Thakur Formula in Context of Bihar** | **Kuldeep Singh** | **92-107** |
| 17. | झारखंड में जनजातियों की पारंपरिक आजीविका के स्रोत (कृषि, वन उत्पाद, शिकार, मछली पकड़ना इत्यादि) से संबंधित चुनौतियों का भौगोलिक विश्लेषण | असित दिवाकर | 108-115 |
| 18. | अभिलेख : आर्थिक पक्षों के प्रमाण | कु. महिमा प्रजापति | 116-121 |
| 19. | **Comparative study of academic achievement and learning styles of CBSE and State Board students** **CBSE** और राज्य बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं अधिगम शैली का तुलनात्मक अध्ययन | डॉ. महेश कुमार शर्मा | 122-125 |
| 20. | राजस्थान की प्रसिद्ध महिला चित्रकार डॉ. वीरबाला भावसार का व्यक्तित्व व कृतित्व | अमनदीप कौर, डॉ. सोनिया रानी | 126-129 |
| 21. | साहित्य में स्त्री का आत्म-प्रतिबिंब | देवार्चन चक्रवर्ती | 130-133 |
| 22. | नानपारा रियासत : एक अध्ययन | मो. नसरूल मुस्तफ़ा खान, डॉ. तबस्सुम फरखी | 134-139 |
| 23. | श्रीरामचरितमानस का भारतीय परम्परा पर सांस्कृतिक प्रभाव | पूनम, प्रोफेसर संजीव कुमार | 140-144 |
| 24. | 'परिंदे' कहानी : अस्तित्व, आधुनिक चेतना और अकेलापन | मालती देवी | 145-148 |
| 25. | ज्ञानप्रकाश विवेक के साहित्य में धार्मिक विघटन | सुमन लता, डॉ. सुनीता सिंह | 149-154 |
| 26. | वाराणसी में घाटों पर काम करने वाले बच्चों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन | प्रोफेसर(डॉ.)चन्द्रशेखर सिंह | 155-162 |
| 27. | भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में ध्यानयोग : आचार्य रजनीश (ओशो) के विशेष संदर्भ में | प्रीति रानी | 163-174 |
| 28. | स्वामी दयानंद सरस्वती के सत्यार्थ प्रकाश में निहित शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में उपादेयता | प्रीति मीणा, डॉ. मन्जू देवी | 175-177 |
| 29. | समकालीन हिंदी कहानियों में वर्णित वृद्ध विमर्श की परिकल्पना | डॉ. नीतू शर्मा | 178-181 |
| 30. | भारतीय साहित्य में अनुवाद की भूमिका | लेफ्टिनेंट(डॉ.)शबाना हबीब | 182-192 |

## संपादकीय...

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और आधुनिक विज्ञान के अंतर्संबंधों पर केंद्रित बोहल शोध मंजूषा का यह अप्रैल 2026 अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। यह अंक विशेष रूप से उस विमर्श को आगे बढ़ाने का प्रयास है, जिसमें परंपरा और आधुनिकता का समन्वय केवल सैद्धांतिक न होकर व्यवहारिक और प्रासंगिक रूप में सामने आए।

आज का युग तीव्र परिवर्तन का युग है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विस्तार ने मानव जीवन को अभूतपूर्व सुविधाएँ प्रदान की हैं, परंतु इसके साथ ही अनेक जटिल प्रश्न भी उत्पन्न हुए हैं – मानवीय मूल्यों का क्षरण, सांस्कृतिक असंतुलन, और प्रकृति से बढ़ती दूरी। ऐसे समय में भारतीय ज्ञान परम्परा केवल अतीत की विरासत नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक दिशा–सूचक के रूप में हमारे सामने आती है। वेदों, उपनिषदों, आयुर्वेद, दर्शन और लोक परंपराओं में निहित ज्ञान आज भी जीवन के समग्र विकास की प्रेरणा देता है।

इस अंक का एक प्रमुख आकर्षण आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) विशेष विमर्श है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने शिक्षा, चिकित्सा, साहित्य, और सामाजिक संरचनाओं में नई संभावनाओं के द्वार खोले हैं। किंतु यह भी आवश्यक है कि हम AI को केवल तकनीकी उपकरण न मानकर, नैतिकता और मानवीय संवेदनाओं के साथ जोड़कर देखें। भारतीय चिंतन में 'बुद्धि' और 'विवेक' का जो संतुलन बताया गया है, वही आज AI के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक हो उठता है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी भारतीय ज्ञान परम्परा का पुनर्पाठ अत्यंत आवश्यक है। नई शिक्षा नीति में जिस प्रकार मातृभाषा, बहुभाषिकता, और समग्र विकास पर बल दिया गया है, वह हमारे प्राचीन शिक्षा दर्शन की ही पुनर्प्रतिष्ठा है। शिक्षा केवल सूचना का संप्रेषण नहीं, बल्कि व्यक्ति के व्यक्तित्व, चरित्र और चिंतन का निर्माण है–यह भाव इस अंक के अनेक शोध पत्रों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

साहित्य, समाज का दर्पण होते हुए भी, केवल प्रतिबिंब नहीं देता, बल्कि दिशा भी प्रदान करता है। समकालीन हिंदी साहित्य में सामाजिक यथार्थ, स्त्री विमर्श, पर्यावरण चेतना, और डिजिटल युग की चुनौतियों पर जो गंभीर चिंतन हो रहा है, उसे इस अंक में स्थान दिया गया है। विशेष रूप से अंतर्जाल पर उभरते साहित्यकारों की रचनात्मकता और उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता इस अंक की विशिष्ट पहचान है।

विभिन्न पद्धति पर आधारित शोध लेख भी इस अंक की विशेषता हैं। वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता ने आयुर्वेद की प्रासंगिकता को पुनः स्थापित किया है। 'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्' की अवधारणा आज के समय में और अधिक सार्थक प्रतीत होती है।

हम इस अवसर पर सभी विद्वान लेखकों, शोधार्थियों, समीक्षकों और पाठकों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग से यह अंक संभव हो सका। आपका सतत मार्गदर्शन और रचनात्मक सहयोग ही इस शोध पत्रिका की वास्तविक शक्ति है।

अंततः, हमारा यह प्रयास है कि बोहल शोध मंजूषा केवल एक शोध पत्रिका न रहकर, एक वैचारिक मंच बने– जहाँ संवाद, विमर्श और नवाचार का सतत प्रवाह बना रहे। हम आशा करते हैं कि यह अंक पाठकों के ज्ञानवर्धन के साथ–साथ चिंतन को भी प्रेरित करेगा।

आपके सुझावों और प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी। **–संपादक**

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 10-14
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# 'आपका बंटी' की प्रासंगिकता : एक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक अध्ययन

**डॉ. सुनीता देवी**
सहायक प्रोफेसर हिंदी, गुरु गोरखनाथ जी राजकीय महाविद्यालय, हिसार, हरियाणा।

**सारांश :–**

आपका बंटी (1971) हिंदी साहित्य में बाल–मन, पारिवारिक विघटन और सामाजिक परिवर्तन का अत्यंत महत्वपूर्ण दस्तावेज है। वर्तमान युग में जहाँ पारिवारिक संरचनाएँ बदल रही हैं, तलाक और अलगाव के मामले बढ़ रहे हैं तथा बच्चों पर उनके मानसिक प्रभाव अधिक गहरे रूप में सामने आ रहे हैं– ऐसे समय में यह उपन्यास और भी प्रासंगिक हो जाता है। प्रस्तुत शोध–पत्र में उपन्यास की विषयवस्तु, मनोवैज्ञानिक दृष्टि, स्त्री–पुरुष संबंध, बाल–मन की पीड़ा, बदलते पारिवारिक मूल्य तथा वर्तमान सामाजिक परिदृश्य में इसकी सार्थकता व प्रासंगिकता का विश्लेषण किया गया है।

**प्रस्तावना :–**

वह साहित्य जिसे बच्चों के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर लिखा गया हो, बालकों के लिए, बालकों के नजरिये से, बालकों की भाषा में लिखा गया साहित्य बाल साहित्य कहलाता है। संस्कार युक्त, ज्ञानवर्धक तथा बाल मनोविज्ञान पर आधारित यह साहित्य अपनी विशेष पहचान रखता है। बाल मनोविज्ञान के अनुसार बालक की मानसिक संरचना, भावनात्मक विकास, कल्पनाशक्ति, नैतिक बोध और सामाजिक चेतना उसके परिवेश तथा साहित्यिक अनुभवों से गहराई से प्रभावित होती है। हिंदी साहित्य में चित्रित बाल साहित्य पर आधारित कहानियाँ, कविताएँ, गीत, नाटक और लोककथाएँ बाल मन के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। बाल मन की पीड़ा पर आधारित मन्नू भण्डारी द्वारा रचित 'आपका बंटी' नामक उपन्यास भी हिन्दी अपनी एक अनूठी पहचान लिए हुए है।

हिंदी साहित्य में मन्नू भंडारी का नाम उन लेखिकाओं में आता है जिन्होंने स्त्री–स्वर, पारिवारिक यथार्थ और मनोवैज्ञानिक अनुभूतियों को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। 'आपका बंटी' उनका सर्वाधिक प्रसिद्ध और चर्चित उपन्यास है। यह उपन्यास एक छोटे बच्चे 'बंटी' की दृष्टि से टूटते हुए परिवार की त्रासदी को सामने लाता है। आज के युग में जब परिवारों के स्वरूप, संबंधों की परिभाषा और सामाजिक अपेक्षाएँ तेजी से बदल रही हैं तो इस उपन्यास का अध्ययन व विश्लेषण करना और भी अधिक महत्वपूर्ण दिखाई देता है।

**बीज शब्द :** स्वातंत्र्योत्तर, परवरिश, बाल विमर्श, बाल मनोविज्ञान, बचपन, आत्म–मंथन, कर्तव्यबोध, स्त्री–विमर्श।

**उपन्यास की मनोवैज्ञानिक और सामाजिक प्रासंगिकता का विश्लेषण :–**

मन्नू भंडारी का उपन्यास 'आपका बंटी' बाल–मन की संवेदनशील परतों को अत्यंत मार्मिकता से उद्घाटित करता है। इस उपन्यास का केंद्रीय पात्र 'बंटी' उर्फ अरुण बत्रा है, जो मात्र नौ वर्ष का, चौथी कक्षा में अध्ययनरत एक बालक है। संपूर्ण कथा का केंद्र बंटी ही है – घटनाएँ उसी के इर्द–गिर्द घटित होती हैं और उन घटनाओं के प्रति उसकी प्रतिक्रियाएँ उपन्यास को गहराई प्रदान करती हैं। यह कृति बाल–मनोविज्ञान के विविध पक्षों को पाठकों के समक्ष सजीव रूप में प्रस्तुत करती है।

बंटी का जीवन अन्य बच्चों की भाँति सामान्य नहीं है। यद्यपि वह एक संपन्न परिवार का इकलौता पुत्र है, फिर भी उसका बचपन अभावों और मानसिक पीड़ाओं से ग्रस्त है। उसके माता–पिता कई वर्षों से अलग रह रहे हैं, जिसका गहरा प्रभाव उसके कोमल मन पर पड़ता है। माता–पिता का दांपत्य जीवन टूटने की कगार पर है। सात वर्षों के वैवाहिक जीवन में बंटी के पिता अजय और माता शकुन के बीच वह आत्मीय संबंध विकसित नहीं हो सका, जो किसी भी पारिवारिक जीवन की नींव होता है। इस विघटन का संपूर्ण दुष्प्रभाव बंटी के जीवन में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

वर्तमान समय में बाजारवाद का प्रभाव लोगों के अंदर इस हद तक घर कर गया है कि उन्हें अपने बिखरते परिवार की भी फिक्र नहीं रहती। इस पुरुष प्रधान समाज में स्त्रियों की आत्मनिर्भरता कभी–कभी परिवार विच्छेद के रूप में उभरकर सामने आती है, जिसका प्रभाव सबसे ज्यादा बच्चों की मानसिकता पर पड़ता है, फलस्वरूप एक मासूम सा बचपन मुरझाकर रह जाता है। इस उपन्यास के प्रमुख पात्र अजय और शकुन के बीच आए दिन झगड़े होते रहते हैं जिसके कारण वह दोनों अपनी अपनी जिंदगी में किसी और को जगह दे देते हैं, संबंध स्थापित कर लेते हैं और फिर एक दिन इस रोजमर्रा के लड़ाई–झगड़े से छुटकारा पाने व अपनी खुशियों की तलाश में तलाक ले लेते हैं और उनके इस निर्णय का शिकार बंता है उनका मासूम बच्चा बंटी। पीड़ित बच्चा बंटी अपने माता–पिता की कलह से उत्पन्न दुःख की अधिकता के कारण भयभीत रहने लगा। मन्नू भंडारी ने भी अपने उपन्यास में इसका जिक्र किया है :–

"बंटी के मन का दुख और गुस्सा धीरे–धीरे डर में बदलने लगा। केवल डर ही नहीं, एक आतंक, कैसी–कैसी शक्लें उभरने लगी उस अंधेरे कमरे में।"[1]

प्रस्तुत उपन्यास आधुनिक समाज की उस व्यवस्था से पर्दा उठाता है जिसमें लोग अपनी स्वार्थपरता हेतु बच्चों की भावनाओं को अनदेखा ही नहीं करते बल्कि उनकी अवहेलना करने से भी गुरेज नहीं करते। यह केवल अजय, शकुन और बंटी की की दास्ताँ नहीं है अपितु वर्तमान युग में तो यह घर–घर की कहानी प्रतीत होती है। इस उपन्यास के शिल्प में गतिशीलता है, क्योंकि यहाँ संघर्ष घटनाओं में न चलकर विचारों में चलता है। उपन्यास की कथा बंटी, उसके माता–पिता (शकुन और अजय) तथा उनके अलगाव के इर्द–गिर्द घूमती है। अजय और शकुन के बीच मतभेद बढ़ते हैं और अंततः दोनों अलग हो जाते हैं। इस टूटन का सबसे अधिक प्रभाव बंटी पर पड़ता है जो अपने मासूम मन में माता–पिता के झगडे, अलगाव और असुरक्षा को गहराई से महसूस करता है। मन्नू भंडारी लिखती हैं, बंटी की आँखों में अपने घर को दो हिस्सों में बँटते देखना किसी भयावह स्वप्न की तरह था।

"अपने घर से उखड़कर बंटी जैसे हर जगह से उखड़ गया, क्लास में बैठा रहता है तो मन में घर तैरता रहता है – ममी, अमी, मम्मी का कमरा, कमरे का जादू और भी जाने क्या–क्या" ।[2]

यह वाक्य उपन्यास की केंद्रीय पीड़ा को अभिव्यक्त करता है। यह पूर्णतः सत्य है कि जब परिवार टूटता है, तो उसमें सबसे अधिक टूटता है बच्चा।

आपका बंटी उपन्यास की सबसे बड़ी शक्ति उसकी मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टि है। बंटी की प्रतिक्रियाएँ, उसका मौन, उसका गुस्सा, उसकी उलझन ये सब वर्तमान मनोविज्ञान की दृष्टि से भी पूरी तरह प्रमाणिक हैं। वर्तमान युग में भी, अकेलापन, माता–पिता के तलाक, स्टेप–पैरेंट के आने, दोहरे घरों में रहने व भावनात्मक असुरक्षा जैसी समस्याएँ बच्चों में बढ़ती जा रही हैं। इसलिए अपने समय से कई दशक आगे, यह उपन्यास इन जटिलताओं को बड़ी स्पष्टता से सामने लाता है। मन्नू भंडारी ने इस दशा का सजीव चित्रण किया है, वह लिखती हैं –

"बंटी के अंदर जमा रोष किसी ज्वालामुखी की तरह था, जो फटता नहीं था–बस जलता रहता था।"[3]

आज के बच्चों में एंग्जाइटी, डिप्रेशन और व्यवहारगत समस्याएँ तेजी से बढ़ रही हैं, जो समकालीन प्रासंगिकता को साबित करती हैं। दूसरे को दुःख देकर आत्म–संतुष्टि प्राप्त करना पर–पीड़न कहलाता है, तो स्वयं को कष्ट देकर सुख का आभास आत्म–पीड़न है। बंटी भी पेड़ पर चढ़कर, सामान इधर–उधर फेंककर तथा डॉ० जोशी को पापा न कहकर शकुन को भयभीत और परेशान कर आत्म–संतुष्टि का प्रयास करता है। मम्मी द्वारा अलग सुला दिये जाने पर उसे दुःख और क्षोभ होता है जो धीरे–धीरे भय में बदल जाता है, फलस्वरूप वह रात में बिस्तर पर ही सू–सू करने जैसी असामान्य क्रिया कर बैठता है। यह उसके मन में छिपे प्रतिशोध का ही प्रमाण है। अपनी माँ का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए वह कई उल्टी–सीधी हरकतें भी करता है। एक ओर जहाँ उसे मम्मी का प्रिंसिपल वाला रूप पसंद नहीं वहीं दूसरी ओर वह मीरा को भी मम्मी नहीं स्वीकारता। संवेदनशीलता के कारण उत्पन्न संकोच बंटी को हमेशा अंदर ही अंदर मथता रहता है, आंदोलित करता है और वह कुछ कह नहीं पाता। यह सब आत्ममंथन का विषय है। बच्चे की छट–पटाहट देखिये :–

"नहीं, ये मम्मी नहीं हैं। मम्मी की बाँहें, मम्मी का छूना.......और एकाएक ही बड़ी जोर से मम्मी की याद आने लगी।"[4]

यह केवल एक बालक की कहानी नहीं है, बल्कि वह टूटते परिवार, बिखरते रिश्तों और उनके बीच पिसते एक मासूम मन की करुण गाथा है, जो पाठक को भीतर तक उद्वेलित कर देती है। डॉ. राजेन्द्र यादव के अनुसार "मन्नू ने 'आपका बंटी' उपन्यास में इन तीनों को लिया है – टूटते वैवाहिक सम्बन्धों में संतान की मनोवैज्ञानिक स्थिति, वैवाहिक संबंध भी टूटने–जुड़ने की प्रक्रिया से गुजरेंगे और इस असुरक्षित दुनिया में स्त्री अपने मानसिक प्रलय की कथाएँ भी खुलकर बयान करेंगी – मगर इस सबकी मनोवैज्ञानिक दहशत भुगतनी होगी बंटी यानि संतान को" ।[5] शकुन के चरित्र के माध्यम से मन्नू भंडारी ने नारी–स्वतंत्रता, आत्मसम्मान और पितृसत्ता के संकटों को भी उजागर किया है। आज के समय में घरेलू असमानता, महिला–स्वतंत्रता, करियर बनाम परिवार, जैसे प्रश्न भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। उपन्यास में वकील चाचा शकुन से कहते हैं :

"तुममें क्या कमी है? बुद्धिमान हो, पढ़ी–लिखी हो, प्रिंसिपल हो, सारे शहर में तुम्हारा मान–सम्मान है।"[6]

यह वाक्य वर्तमान युग की नारी के आत्मसम्मान की आधुनिक चर्चा का आधार बन सकता है। वर्तमान

युग में उपन्यास की प्रासंगिकता इस तथ्य से भी सिद्ध होती है कि आजकल तलाक और पारिवारिक विघटन के मामले बढ़ रहे हैं। परिवार के टूटने से बच्चों पर पड़ने वाला प्रभाव एक बड़ा सामाजिक प्रश्न है। बंटी का चरित्र आज के लाखों बच्चों की आवाज है। झगड़ा अजय और शकुन के बीच है मगर इस सबकी मनोवैज्ञानिक दहशत भुगतनी होगी बंटी यानी संतान को। आज इस आपा–धापी के युग में मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत अधिक चर्चा हो रही है। यह उपन्यास दिखाता है कि कैसे एक बच्चा असुरक्षित वातावरण, माता–पिता के विवाद, नई पारिवारिक संरचना के बीच मानसिक संघर्ष से गुजरता है। वह सोचने लगता है कि सब कुछ बदल गया है :– "आँसू–भरी आँखों के सामने डिब्बे की हर चीज, बैठे हुए अजनबी लोगों के चेहरे पहले धुँधले हुए, और धुँधले हुए और फिर एक–दूसरे में मिल गए। पापा का चेहरा भी उन्हीं में मिल गया और फिर धीरे–धीरे सारे चेहरे एक–दूसरे में गड्डमड्ड हो गए।"[7]

छोटे बच्चे मिट्टी के घड़े के समान होते हैं, उन्हें किसी भी रूप में बदला जा सकता है। बचपन में बच्चे जो देखते हैं, सुनते हैं, उसका उन पर जीवनभर के लिए गहरा प्रभाव पड़ता है। एक बच्चा अपने माता–पिता को लड़ते हुए या अलग होते हुए नहीं देख सकता। इसका दुष्प्रभाव उसके मन को तोड़कर रख देता है। शकुन डॉक्टर जोशी से दूसरा विवाह करती है, तो बंटी को अपना पुराना घर छोड़कर उसके साथ ही आना पड़ता है। इस नए घर में उसका कहीं भी मन नहीं लगता है। स्कूल हो या घर सब जगह वह अपने आपको अलग–थलग महसूस करता है। डॉक्टर जोशी तो उसे प्रॉब्लम चाइल्ड भी कह देते हैं। आगे चलकर बंटी अजय के पास कलकत्ता जाता है तो वहां भी यही स्थिति सामने आती है। ऐसा लगता है कि जैसे बगीचे के बड़े फूल के पेड़ फिर से उखाड़कर इस नए घर में नहीं लगाए जा सकते थे। उसी तरह शकुन के विवाह के बाद वह भी कहीं दूसरी जगह जड़ नहीं पकड़ पाया।

"बंटी के बाहर का ही नहीं, भीतर का भी जैसे सब कुछ थम गया। थम नहीं गया जैसे सब कुछ सहम गया। जिद, गुस्सा, रोना–चिल्लाना।"[8]

आज कितना बदल गया है समाज। हम यह पढ़ते, सुनते और संस्कारवश समझते आए हैं कि संतान के पैदा होने के पश्चात माता–पिता अपनी खुशियों को भूल जाते हैं और उसका पालन–पोषण, उसकी हंसी–खुशी ही माता–पिता की खुशी बन जाता है। उनका पूरा जीवन अपने बच्चे पर केंद्रित हो जाता है पर अब उनकी खुशियों के मायने बदल गए हैं। शिक्षा के कारण अधिकारों की जानकारी, पैसे का बोलबाला, भौतिकता की चकाचौंध, सोशल मीडिया के अधिक प्रयोग, अहं के भाव व एकल परिवारों की वजह से भी भावनात्मक दूरी और एकाकीपन बढ़ा है। हर व्यक्ति भाग रहा है, इधर–उधर सुकून तलाश रहा है भले ही इसके लिए उसे अपने परिवार की बलि ही क्यों न देनी पड़े और इसकी सजा भुगत रहे हैं निरपराध बच्चे और अहं के कारण उनके माता–पिता अपने बच्चों की कराह को भी नहीं सुन पाते। उपन्यास इस बदलती पारिवारिक संरचना के संकटों को सटीक रूप में प्रस्तुत करता है। गहन मनोवैज्ञानिक चित्रण, यथार्थवाद और संवेदना, सामाजिक सत्य का साहसिक चित्रण, बालमन की त्रासदी, तलाक एवम् लिव इन रिलेशनशिप के इस दौर में यह उपन्यास आधुनिक हिंदी साहित्य की धुरी है।

**निष्कर्ष :–**

आपका बंटी केवल एक परिवार की कहानी नहीं है, बल्कि आधुनिक समाज की टूटती हुई संरचनाओं

का दर्पण भी है। आज हमारा समाज गर्त की ओर जा रहा है, रिश्तों की मर्यादा को लांघकर उन्हें शर्मशार किया जा रहा है। जहां संतान की परवरिश के साथ–साथ उसे संस्कार देना भी माता–पिता का कर्तव्य है वहाँ वे स्वयं ही अपनी हदें भूलते जा रहे हैं। जब खेत का रखवाला ही उसकी बाड़ को खाने लगे तो फिर उस फसल की रक्षा कौन करे, इसीलिए वर्तमान समय में यह उपन्यास और भी प्रासंगिक हो जाता है। मन्नू भंडारी ने अत्यंत सजीव और मार्मिक ढंग से अनुभूतियों को शब्द दिए हैं। इसलिए यह उपन्यास आज भी उतनी ही सार्थकता के साथ पढ़ा जाता है और आगे भी सामाजिक अध्ययन, मनोविज्ञान एवं साहित्य के लिए उपयोगी रहेगा। यह उपन्यास पाठकों को झकझोर रख देता है और उनमें कर्तव्य बोध की भावना का संचार करता है। अतः यह निसंकोच रूप से कहा जा सकता है कि आपका बंटी उपन्यास आज के युग में भी प्रासंगिक है और यह शोध–पत्र पारिवारिक संरचनाओं का ताना–बाना बुनने और स्वच्छ व स्वस्थ समाज के निर्माण में सुधि पाठकों व शोधार्थियों का मार्गदर्शन करेगा।

**संदर्भ सामग्री :–**


1. भंडारी, मन्नू. आपका बंटी, पृष्ठ 135, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1971
2. वही, पृ. 150
3. वही, पृ. 112
4. वही, पृ. 191
5. राजेन्द्र यादव : आदमी की निगाह में औरत, पृ. 229, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली (2015)
6. वही, पृ. 44
7. वही, पृ. 208
8. वही, पृ. 163



मेल आइडी –devidrsunita@gmail.com

फोन नंबर –9813090945

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha
April 2026

ISSN : 2395-7115
Page No. : 15-19

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# प्रधानमंत्री आवास योजना और गरीबों का सशक्तिकरण : विकसित भारत 2047 की ओर

**जगदीश कुमार धुर्वे**, शोधार्थी
**डॉ. राखी सक्सेना,** सह प्राध्यापक एवं शोध निर्देशिका
वाणिज्य विभाग, कैरियर महाविद्यालय (स्वशासी) भेल, भोपाल (म.प्र.)

**सारांश :-**

भारत सरकार ने वर्ष 2047 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया है, जिसे विकसित भारत 2047 के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में सामाजिक, समावेशिता और आर्थिक सशक्तिकरण का महत्व अत्यंत आवश्यक है। पूर्व में संचालित आवास योजनाओं को पुनर्गठित कर प्रधानमंत्री आवास योजना को अप्रैल, 2015 में गरीबों और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के सशक्तिकरण के लिए शुरू की गई। इसका उद्देश्य गरीबों को किफायती, सुरक्षित और स्वामित्व वाले आवास प्रदान करना है।

प्रस्तुत शोध कार्य में वर्ष 2015–2025 तक के दौरान योजना के क्रियान्वयन, ग्रामीण और शहरी गरीबों के सशक्तिकरण के प्रभाव और आर्थिक-सामाजिक लाभों का विश्लेषण किया गया है।

इस शोध अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्रधानमंत्री आवास योजना के अन्तर्गत लगभग 4 करोड़ आवासों के माध्यम से गरीबों को सशक्त बनाया है, और यह विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

**बीज शब्द** : प्रधानमंत्री आवास योजना, गरीबों का सशक्तिकरण, आवास नीति, विकसित भारत 2047, ग्रामीण और शहरी विकास।

**प्रस्तावना :-**

इंसान की प्रमुख आवश्यकताओं में रोटी, कपड़ा के साथ-साथ आवास एक मूलभूत आवश्यकता है। आवास की कमी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार के द्वारा प्रधानमंत्री आवास योजना के द्वारा सुरक्षित, स्वामित्व और सामाजिक स्तर को बेहतर करने वाला आवास न केवल जीवन स्तर सुधारता है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समावेशिता में भी योगदान देता है। प्रधानमंत्री आवास योजना अप्रैल, 2015 में शुरू की गई थी। इसका लक्ष्य था "सबके लिए आवास", विशेष रूप से निम्न और मध्यम वर्ग के गरीब नागरिकों को किफायती घर उपलब्ध कराना।

प्रधानमंत्री आवास योजना ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में लागू है :-

- **प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण)** : ग्रामीण जनसंख्या जो गरीब व पिछडी है ऐसी जनसंख्या को पक्का आवास उपलब्ध कराना है।
- **प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी)** : शहरी जनसंख्या जो गरीब व आर्थिक रूप से कमजोर है उनके सुरक्षित आवास प्रदान करने के लिए क्रेडिट लिंक्ड सब्सिडी योजना और स्लम पुनर्विकास के माध्यम से पक्के आवास उपलब्ध कराये जा रहे है।

इस शोध का उद्देश्य है कि प्रधानमंत्री आवास योजना गरीबों के सशक्तिकरण और जीवन स्तर सुधार में कितनी प्रभावी रही है और इसका विकसित भारत 2047 में क्या योगदान है।

**साहित्य का पुनरावलोकन :-**

- **इंदिरा आवास योजना (1985–2015)** : भारत के ग्रामीण गरीबों व आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए पक्का आवास उपलब्ध कराना जिसके अन्तर्गत लगभग 3 करोड़ आवास प्रदान किए गये।
- **जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन (2005–2014)** : शहरी बुनियादी ढांचे का विकास और स्लम पुनर्विकास को मजबूत करना।
- **प्रधानमंत्री आवास योजना (2015–2025)** : इंदिरा आवास योजना का समेकित संस्करण, ग्रामीण और शहरी गरीबों के लिए किफायती आवास उपलब्ध कराना है।

अध्ययन दर्शाते हैं कि आवास योजनाओं का सशक्तिकरण पर सीधा प्रभाव होता है, विशेषकर महिलाओं के स्वामित्व, रोजगार सृजन, और जीवन स्तर सुधार में।

**शोध प्रविधि :-**

- **शोध अभिकल्प** : वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक
- **आंकडों का स्रोत** :
    - आवासन और शहरी कार्य मंत्रालय (प्रधानमंत्री आवास योजना रिपोर्ट)
    - नीति आयोग रिपोर्ट
    - आर्थिक सर्वेक्षण (2015–2025)
- **विश्लेषण विधि:**
    - तालिकाओं और टेक्स्ट-ग्राफ के माध्यम से तुलनात्मक अध्ययन
    - ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में निर्माण प्रगति का विश्लेषण
    - सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का मूल्यांकन

**आंकडों का विश्लेषण एवं परिणाम :-**

**प्रधानमंत्री आवास योजना आवास निर्माण की प्रगति (वर्ष 2015–2025)**

| वर्ष | प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण (आवास संख्या करोड़ में) | प्रधानमंत्री आवास योजना-शहरी (आवास संख्या करोड़ में) | कुल आवास |
|---|---|---|---|
| 2015 | 0.1 करोड़ | 0.05 करोड़ | 0.15 करोड़ |
| 2016 | 0.2 करोड़ | 0.1 करोड़ | 0.3 करोड़ |
| 2017 | 0.35 करोड़ | 0.18 करोड़ | 0.53 करोड़ |
| 2018 | 0.5 करोड़ | 0.25 करोड़ | 0.75 करोड़ |
| 2019 | 0.75 करोड़ | 0.45 करोड़ | 1.2 करोड़ |
| 2020 | 1.0 करोड़ | 0.6 करोड़ | 1.6 करोड़ |
| 2021 | 1.2 करोड़ | 0.75 करोड़ | 1.95 करोड़ |
| 2022 | 1.5 करोड़ | 0.85 करोड़ | 2.35 करोड़ |
| 2023 | 1.8 करोड़ | 0.95 करोड़ | 2.75 करोड़ |
| 2024 | 2.3 करोड़ | 1.05 करोड़ | 3.35 करोड़ |
| 2025 | 2.85 करोड़ | 1.18 करोड़ | 4.03 करोड़ |

**अवलोकन :** प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) आवास निर्माण प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) आवास की तुलना में तेज़ी से वृद्धि हुई है, जबकि शहरी क्षेत्र में क्रेडिट लिंक्ड सब्सिडी योजना ने मुख्य रूप से आवास की गति को बल दिया है।

## बजट और निवेश

| योजना | निवेश (₹ करोड़) |
|---|---|
| इंदिरा आवास योजना (1985–2015) | 70,000 |
| जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन (2005–2014) | 66,000 |
| PMAY (2015–2025) | 3,00,000 |

**अवलोकन :** प्रधानमंत्री आवास योजना में वर्ष 2015 से 2025 तक निवेश सबसे अधिक रहा, जिससे योजना का व्यापक रूप से विस्तार किया जाना सुनिश्चित हुआ है।

**प्रधानमंत्री आवास योजना के सामाजिक-आर्थिक प्रभाव :-**

1. **गरीबों का सशक्तिकरण :** लाभार्थियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार।
2. **महिला स्वामित्व :** अधिकांश घरों का अधिकार महिलाओं के नाम।
3. **रोजगार सृजन :** निर्माण और सहायक उद्योगों में लाखों लोगों को रोजगार मिला।
4. **जीवन स्तर में सुधार :** बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा में सुधार।

**प्रधानमंत्री आवास योजना के आवासों का राज्यवार विवरण**

| राज्य | प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण (आवास संख्या लाख में) | प्रधानमंत्री आवास योजना-शहरी (आवास संख्या लाख में) | कुल |
|---|---|---|---|
| उत्तर प्रदेश | 45 | 18 | 63 |
| महाराष्ट्र | 25 | 12 | 37 |
| बिहार | 38 | 9 | 47 |
| तमिलनाडु | 20 | 15 | 35 |
| मध्य प्रदेश | 32 | 10 | 42 |

**अवलोकन** :- तालिका अनुसार उत्तर प्रदेश और बिहार राज्य में ग्रामीण आवास निर्माण सबसे अधिक हुए है, जबकि महाराष्ट्र और तमिलनाडु राज्य में शहरी आवास निर्माण तेज़ी देखी जा सकती है।

**टेक्स्ट ग्राफ (एएससीआईआई प्रतिनिधित्व)**

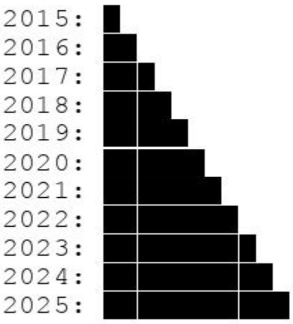


* प्रत्येक █ = 0.3 करोड़ घर

**विमर्श :-**

- प्रधानमंत्री आवास योजना ने गरीबों और कमजोर वर्गों को सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से सशक्त किया।
- ग्रामीण क्षेत्रों में निवेश ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था और रोजगार सृजन को बढ़ाया।
- शहरी क्षेत्र में क्रेडिट लिंक्ड सब्सिडी योजना ने गरीबों को घर स्वामित्व का अवसर दिया।
- डिजिटल निगरानी और GIS आधारित मॉनिटरिंग से योजना की दक्षता बढ़ी।

**निष्कर्ष :-**

प्रधानमंत्री आवास योजना गरीबों का सशक्तिकरण सुनिश्चित करती है और विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों के लिए आवश्यक सामाजिक और आर्थिक आधार प्रदान करती है।

**नीति सुझाव :-**

1. ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में निवेश का संतुलन।
2. महिलाओं और अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए विशेष प्रोत्साहन।
3. निर्माण गुणवत्ता और टिकाऊपन पर ध्यान।
4. डिजिटल निगरानी और डेटा एनालिटिक्स के माध्यम से कार्यक्षमता में सुधार।

**संदर्भ :-**

1. Ministry of Housing and Urban Affairs. (2024). PMAY Progress Report. Government of India.
2. NITI Aayog. (2023). Urban Development Report. Government of India.
3. World Bank. (2022). Affordable Housing Report. World Bank Publications.
4. Sen, A. (1999). Development as Freedom. Oxford University Press.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha April 2026

ISSN : 2395-7115
Page No. : 20-27

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# Indian Diaspora as a Bridge of Soft Power in Africa

**Rakesh Kumar Sharma,** Research Scholar

**Dr. Laxmi Kumari,** Assistant Professor (Research Director)

University Department of Political Science, Veer Kunwar Singh University, Ara, Bihar

**Abstract** :

The Indian diaspora in Africa has emerged as a significant conduit for India's soft power, playing a pivotal role in strengthening cultural, economic, and diplomatic ties between India and African nations. Unlike traditional state-centric diplomacy, diaspora-based engagement operates through informal networks, cultural affinity, and economic participation. This article analyzes the historical evolution, contemporary role, and strategic significance of the Indian diaspora in Africa during the period from 2000 to 2024, specifically in its capacity as a bridge for soft power. It argues that the diaspora not only reinforces India's global image but also fosters mutual development, cooperations, thereby further solidifying India-Africa relations.

***Keywords :*** Indian Diaspora, Soft Power, India-Africa Relations, Cultural Diplomacy, Diaspora Diplomacy, South-South Cooperation, People-To-People Contacts, Global Image.

**Introduction** :

In the realm of modern international relations, the significance of soft power-alongside traditional hard power-is steadily increasing. Soft power is the capacity through which a nation influences other countries via its culture, values, policies, and institutional influence, without resorting to coercion or the use of force (Nye, 2004). In this era of globalization and a multipolar world order, it has emerged as a crucial instrument of foreign policy. In the context of India-particularly regarding its relations with Africa-soft power has emerged as a pivotal pillar. Through its rich cultural heritage, democratic traditions, and historical linkages, India has endeavored to cultivate a positive and collaborative image among African nations-a process in which the Indian diaspora has played an immensely significant role (Lal, 2016; Alden, 2017).

A substantial population of Indian origin resides across Africa, concentrated primarily in countries such as South Africa, Kenya, Tanzania, Mauritius, and Uganda. The histories of these

communities are intertwined with the colonial era, when Indians were brought to the continent as laborers, traders, and artisans (Gregory, 1993; Desai & Vahed, 2010). Over time, these communities became an integral part of the local social fabric, establishing a strong identity for themselves across economic, social, and cultural spheres. Today, these diaspora communities are not confined merely to economic activities; rather, they serve as vibrant bridge connecting India and Africa. Through their cultural traditions, language, culinary practices, and social values, the Indian diaspora disseminates Indian cultural while simultaneously fostering a sense of affinity toward India within the local society. Furthermore, these communities reinforce cooperation between the two regions through their engagement in trade, investment, education, and social services. In several African nations, people of Indian origin occupy influential positions at both political and administrative levels, thereby bolstering mutual trust and strengthening bilateral ties. Thus, the Indian diaspora not only reinforces India's soft power but also makes a significant contribution toward making India-Africa relations enduring and profound (Lal, 2006; Biswas, 2008).

**Historical Background of Indian Diaspora in Africa** :

The presence of the Indian diaspora in African began in an organized manner during the 19$^{th}$ century, coinciding with colonial expansion, when the British Empire dispatched large numbers of people from India-primarily as indentured laborers-to East and Southern Africa to meet the growing demand for labor within its colonies. These laborers were primarily employed in railway construction (such as the Uganda Railway), mines, plantations, and other infrastructural projects. Concurrently, numerous merchant communities from the Gujrat and Kutch regions-particularly the Baniya and Ismaili groups-arrived in Africa voluntarily and established trading networks within local markets. Over time, these communities expanded their presence, ranging from retail trade to wholesale commerce, financial services, and industrial activities. Despite the racial stratification and discriminatory policies prevalent during the colonial era, the Indian community successfully preserved its communal solidarity and identity through education, religious institutions, social organizations, and professional networks (Gregory, 1993; Desai & Vahed, 2010).

In the post-independence era, the Indian diaspora faced a new landscape of socio-political changes. In many African nations, efforts to redistribute economic opportunities and promote local ownership under "Africanization" policies resulted in the Indian community enduring significant economic and social pressures in certain regions. For instance, events such as the expulsion of the Asian community from Uganda in the 1970s exemplify the challenges characteristic of this period. Nevertheless, Indian migrants demonstrated remarkable adaptability-in some instances through resettlement, and in others by fostering better integration with local societies. By the late 20$^{th}$ and

early 21st centuries, this community had successfully regrouped, establishing a strong presence across the sectors of trade, industry, education, healthcare, and services. Today, the Indian diaspora community in Africa is not only economically influential but also socially inclusive and politically active, serving as a vital bridge in strengthening historical continuity, cultural exchange, and developmental cooperation between India and African nations (Lal, 2006; Biswas, 2008).

**Diaspora as an Instrument of Soft Power** :

In today's global landscape, the Indian diaspora has emerged as an effective and multifaceted medium for India's soft power. Moving beyond the realm of formal diplomacy, this community reinforces a positive image of Inda across cultural, economic, political, and educational spheres. People of Indian origin settled in Africa maintain continuous engagement with local societies, thereby forging relationships that foster long-term trust and cooperation. Thus, the diaspora functions not merely as a social group, but as an informal yet influential instrument of India's foreign policy.

**1. Cultural Connectivity** :

The Indian diaspora in Africa plays a pivotal role in the dissemination of Indian culture. Through their daily lives, traditions, and social gatherings, this community keeps Indian Cultural values alive and shares them with the local society. Public celebrations of festivals such as Diwali, Holi, and Eid are not confined solely to the Indian community; rather, they witness the active participation of the local African population as well. Such cultural events foster mutual understanding, harmony, and social cohesion. Furthermore, cultural elements such as Yoga, Ayurveda, Indian cuisine, music, and cinema have garnered widespread popularity across Africa. Through Indian films and television programs, India's lifestyle, family values, and social traditions reach the local populace, thereby cultivating a positive perception of India. Thus, through cultural exchange, the diaspora establishes strong bonds at both emotional and social levels-a fundamental pillar of soft power (Lal, 2006; Hall, 1997).

**2. Economic Influence** :

The Indian diaspora plays a significant role in Africa's economy. This community is actively engaged across various sectors-including trade, industry, financial services, and investment-and serves as a bridge connecting local market with the international arena. Many entrepreneurs of Indian origin operate a wide spectrum of enterprises in Africa-raging form small and medium-sized industries to large-scale business ventures-thereby generating employment opportunities and accelerating economic growth. Furthermore, the diaspora community plays an instrumental role in strengthening trade relations between Indian and Africa. They serve as conduits connecting Indian companies with African markets, thereby fostering bilateral trade and investment. This economic cooperation establishes India's image

as a reliable and development-oriented partner-one whose engagement is grounded in partnership and mutual benefit rather than exploitation (Biswas, 2008; Alden, 2007).

**3. Political and Diplomatic Role** :

In numerous African nations, people of Indian origin occupy significant positions within the political, administrative, and public spheres. Their participation not only contributes to local governance structures but also serves to reinforce diplomatic ties between India and African countries. When members of the diaspora community engage in policy-making and administrative processes, they play a pivotal role in fostering greater understanding and cooperation between the two regions. Additionally, diaspora networks exert influence through the medium of "informal diplomacy". These communities facilitate dialogue and collaboration through various social, professional, and cultural platforms. By leading their support to India's foreign policy initiatives, they cultivate an atmosphere of goodwill and trust, thereby bolstering bilateral relations (Lal, 2006; Nye, 2004).

**4. Educational and Knowledge Exchange** :

The Indian diaspora community also makes substantial contributions to the realm of education and knowledge exchange. Teachers, doctors, engineers, and IT professionals of Indian origin working in Africa contribute to local human resource development by leveraging their skills and expertise. They not only provide education and training at the institutional level but also disseminate knowledge through professional networks and skill-development programs. Furthermore, various diaspora organizations and institutions promote scholarships, training programs, and educational collaboration, thereby strengthening educational ties between India and Africa. This form of knowledge exchange establishes India's image as a "knowledge partner" and further reinforces its soft power (Biswas, 2008; Nye, 2004).

**Diaspora and People-to-People Connectivity** :

In Africa, the Indian diaspora plays an immensely significant and influence role in strengthening people-to-people ties through the medium of soft power. This community serves as a vibrant social and cultural bridge between India and African societies, helping to bridge the mental, cultural, and emotional distances that exist between the two regions. The diaspora community's continuous engagement with local populations-whether through daily life, business activities, educational institutions, or social gatherings-fostering mutual trust, cooperation, and understanding. In particular, intermarriages, community engagement, joint participation in cultural festivals, and shared presence at religious events create a social milieu where Indian and African traditions intermingle seamlessly. Furthermore, shared public spaces-such as markets, schools, religious sites, social organizations, and cultural platforms-further reinforce these bonds by providing opportunities for regular dialogue

and interaction among diverse communities. This continuous interaction fosters the development of a hybrid cultural identity, characterized by a balanced synthesis of Indian and African cultural elements. This process not promote only cultural exchange but also strengthens social inclusion, tolerance, and mutual respect. Consequently, these people-to-people ties lay the foundation for long-term cooperation, enduring relationships, and deep diplomatic trust-making a pivotal contribution toward rendering India-Africa relations more robust, sustainable, and comprehensive.

**Case Studies** :

1. **Mauritius :** Mauritius presents a distinct and significant example of the Indian diaspora community in Africa, where people of Indian origin constitute the majority of the population. Indians, who arrived in the 19th century as indenture laborers, have over time profoundly influenced the social, cultural, and political fabric of this island nations. Today, Indian culture, languages (such as Hindi and Bhojpuri), religious traditions, and festivals occupy a significant place in Mauritius's national identity. Here, Indian festivals such as Diwali are celebrated at a national level, clearly reflecting the Indian cultural influence. From a political perspective as well as, leaders of Indian origin have played a pivotal role in the governance of Mauritius, fostering close ties between India and Mauritius. Furthermore, a strong partnership is evident between the two nations in the spheres of education, culture, and economic cooperation. Thus, Mauritius serves not only as an example of the historical presence of the Indian diaspora vur also as a powerful hub of India's soft power, thereby reinforcing India's positive image within Africa (Lal, 2006; Carter & Torabully, 2002).

2. **Kenya and Tanzania :** The history of the Indian diaspora community in the countries of East Africa-specially Kenya and Tanzania-is inextricably linked to the colonial era. Indians were brought to these regions primarily for railway construction and commercial activities. Over time, the Indian community carved out a significant niche for itself in the realm of trade and commerce, assuming a pivotal role within the local economies. Even today, merchants, entrepreneurs, and professionals of Indian origin remain active across various economic sectors in Kenya and Tanzania. In these nations, the Indian diaspora community contributes not only to economic development but also fosters social inclusion and cultural exchange. The participation of local communities in Indian festivals, cultural programs, and religious activities a positive perception of India. Furthermore, the diaspora community acts as an intermediary in strengthening trade and diplomatic relations between India and these nations. Thus, the Indian diaspora in Kenya and Tanzania reinforces India's soft power at both economic and cultural levels (Gregory, 1993; Biswas, 2008).

3. **South Africa :** the history of the Indian diaspora in South Africa has been profoundly significant and marked by struggle. In the 19th century, Indians were brought here as indentured laborers; however,

over time, they came to play a pivotal role in both the social and political spheres. Particularly during the apartheid era, the Indian community actively participated in the struggle for equality and justice, thereby making a significant contribution to South Africa's democratic development. In contemporary times, people of Indian origin in South Africa play influential roles across the fields of business, education, politics, and social services. They serve as a vital link in strengthening cultural and economic ties between India and South Africa. Indian culture, cuisine, music, and cinema enjoy widespread popularity here, thereby reinforcing India's soft power. Additionally, the diaspora community facilities the enhancement of trust and cooperation within bilateral relations. Thus, the Indian diaspora in South Africa is not only historically significant but also continues to play an active role in the deepening India-Africa relations in the present day (Desai & Vahed, 2010; Lal, 2006).

**Challenges and Limitations** :

Despite the significant role played by the Indian diaspora community in Africa as a source of soft power, this role is beset by numerous challenges and limitations. The most prominent issue relates to "perception"; in certain African societies, the Indian diaspora is perceived as economically dominant, a view that can engender resentment and social tension among local communities. Furthermore, complexities surrounding "identity" present a significant challenge. The diaspora community is often compelled to navigate a delicate balance between their Indian and African identities-a process that frequently gives rise to cultural dissonance and issues of representation. This situation can, in turn, impact their social inclusion and political participation.

Concurrently, the full and systematic utilization of the diaspora community's potential within India's foreign policy remains limited. Although efforts have been made to strengthen ties with the Indian diaspora, there remains a discernible lack of a clear and coordinated policy framework specifically tailored to the African context. On the other hand, global competition is emerging as a major challenge-particularly due to the growing economic and strategic presence of China, which has consolidated its position in Africa through large-scale investments and development projects. Amidts this competition, India's diaspora-based soft power often appears relatively weaker. Consequently, it is imperative for India to formulate policies that are more effective, coordinated, and strategic, thereby further bolstering the role of its soft power in Africa.

**Policy Implications** :

To effectively leverage the soft power potential of the Indian diaspora community in Africa, India must formulate a comprehensive and coordinated diaspora engagement policy that takes into account the unique circumstances and potential of communities of Indian origin settled across various African nations. This policy should encompass cultural, economic, and diplomatic dimensions, utilizing

diaspora networks to bolster cultural diplomacy; this would facilitate the widespread dissemination of Indian traditions, languages, arts, and values, thereby reinforcing India's positive global image. Concurrently, India should encourage diaspora-led investments and partnerships, thereby fostering both economic development within African and the strengthening of bilateral relations. Priority should also be accorded to scholarships, skill development programs, and institutional collaboration to reinforce educational and professional exchanges.

Furthermore, addressing challenges related to social inclusion and public perception is imperative to foster trust and cooperation between the diaspora community and local societies. Promoting cultural dialogue, community engagement, and social initiatives would prove beneficial in this regard. Additionally, within the context of global competition-particularly in light must render its soft power strategy more effective, adaptable, and strategic. Thus, through a balanced and forward-looking policy approach, India can further consolidate its soft power in Africa and ensure the establishment of enduring and sustainable partnerships.

**Conclusion** :

The Indian diaspora in Africa has emerged as a significant and influential conduit for India's soft power, connecting the two regions through cultural, economic, and historical ties. This community functions not merely as a diaspora group, but as a vibrant bridge that fosters trust, cooperation, and mutual understanding between India and African nations. Through their cultural traditions, social values, and economic activities, members of the Indian diaspora reinforce a positive image of India and forge close bonds with local societies. Thus, their role extends far beyond traditional diplomacy. Contributing significantly to the promotion of people-to-people connections, cultural exchange, and developmental cooperation. Furthermore, it is evident that the Indian diaspora can serves as a strategic assent in ensuring the long-term sustainability of India-Africa relations. However, challenges such as social perceptions, complexities regarding identity, policy limitations, and global competition still persist-issues that require resolution through effective policy and coordinated efforts. If India adopts a more structured, proactive, and forward-looking approach-one that integrates the diaspora community as a vital component of its foreign policy-it can further consolidate its soft power within Africa. Consequently, the relationship between India and Africa will not only deepen but also become more sustainable, balanced, and grounded in mutual benefit, thereby further strengthening India's standing on the global stage.

**References** :

1. Alden, C. (2007). *China in Africa.* Zed Books.
2. Beri, R. (2018). India's Africa policy in the 21st century: Deepening engagement. *Strategic*

*Analysis, 42(3)*, 199-210.

3. Biswas, A. (2008). Indian diaspora in Africa: A historical overview. *Journal of African Studies, 12(2)*, 45-60.
4. Desai, A., & Vahed, G. (2010). *Inside Indian indenture: A South African story, 1860-1914*. HSRC Press.
5. Gregory, R. G. (1993). *South Asians in East Africa: An economic and social history, 1890-1980*. Westview Press.
6. Hall, S. (1997). The work of representation. In S. Hall (Ed.), *Representation: Cultural representations and signifying practices*. Sage Publications.
7. High Commission of India. (2020). *India-Africa relations: Historical and contemporary perspectives*. Government of India.
8. Kragelund, P. (2010). The potential role of non-traditional donors' aid in Africa. *International Journal of Development Issues, 9(2)*, 107-120.
9. Lal, B. V. (2006). *The encyclopedia of the Indian diaspora*. University of Hawaii Press.
10. Mawdsley, E. (2012). *From recipients to donors: Emerging powers and the changing development landscape*. Zed Books.
11. Ministry of External Affairs. (2021). *India-Africa partnership: Facts and figures*. Government of India.
12. Nye, J. S. (2004). *Soft power: The means to success in world politics*. Public Affairs.
13. Pant, H. V. (2016). *Indian foreign policy: An overview*. Manchester University Press.
14. Taylor, I. (2012). *Chian and Africa: Engagement and compromise*. Routledge.

**Complete Postal Address :**
Village-Gangadhi, P.O.-Saisar, P.S.-Dinara, Dist.-Rohtas, Bihar, Pin-802213
**Email:** rockrakeshsharma96@gmail.com
**Contact Number:** 8709625817
**WhatsApp Number:** 8709625817

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 28-31
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# गरीबी व पलायान रोकने में मनरेगा की प्रासंगिकता

**अनूप कुमार** (शोधार्थी),
विश्वविद्यालय गांधी विचार विभाग,
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।
**डॉ. शैलेन्द्र कुमार,** (शोध निर्देशक और एसोसिएट प्रोफेसर)
राजनीति विज्ञान विभाग, जे. पी. महाविद्यालय, नारायणपुर।
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।

**प्रस्तावना :**

मनरेगा को केंद्र सरकार द्वारा 2005 में लागू किया गया था, भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए एक परिवर्तनकारी और अधिकार–आधारित दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। यह पिछली कल्याणकारी योजनाओं से एक महत्वपूर्ण बदलाव है, जो काफी हद तक विवेकाधीन और आपूर्ति–संचालित थीं। ग्रामीण परिवार जो अकुशल शारीरिक श्रम करने के लिए इच्छुक हैं, उन्हें वर्ष में कम से कम 100 दिनों के रोजगार की कानूनी गारंटी देकर, यह अधिनियम काम का अधिकार को एक न्यायोचित हक के रूप में संस्थागत बनाता है। कल्याण–उन्मुख प्रतिरूप से अधिकार–आधारित ढांचे की ओर यह बदलाव सामाजिक नागरिकता के प्रति एक गहरी प्रतिबद्धता को दर्शाता है, जिसमें राज्य अपने नागरिकों को न्यूनतम आजीविका सुरक्षा सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी लेता है।

**परिचय :**

मनरेगा कल्याणकारी अर्थशास्त्र की मानक नींव के साथ निकटता से जुड़ा हुआ है, जो बाजार की विफलताओं को ठीक करने और संसाधनों के न्यायसंगत वितरण को बढ़ावा देने के लिए राज्य के हस्तक्षेप पर जोर देता है। जैसा कि आर्थर सेसिल पिगू ने तर्क दिया है, कल्याणकारी अर्थशास्त्र सामाजिक कल्याण को बढ़ाने और अपूर्ण बाजारों से उत्पन्न होने वाली असमानताओं को कम करने के लिए सरकारी कार्रवाई को उचित ठहराता है।

मनरेगा सेन के क्षमता दृष्टिकोण सिद्धांतों को मूर्त रूप देता है, जो विकास को केवल आय में वृद्धि के बजाय व्यक्तियों की क्षमताओं और स्वतंत्रताओं के विस्तार के रूप में पुनर्परिभाषित करता है। सेन का तर्क है कि गरीबी को बुनियादी क्षमताओं के अभाव के रूप में समझा जाना चाहिए, जिसमें पर्याप्त आजीविका सुरक्षित करने की क्षमता भी शामिल है। गारंटीकृत रोजगार प्रदान करके, मनरेगा न केवल आय को बढ़ाता है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों के परिवारों की क्षमता, गरिमा और सामाजिक भागीदारी को भी बढ़ाता है। यह व्यक्तियों को अपने आर्थिक

जीवन पर अधिक नियंत्रण रखने में सक्षम बनाता है, जिससे यह वास्तविक मानव विकास में योगदान देता है। आर्थिक और वितरण संबंधी पहलुओं के अलावा, मनरेगा विकेंद्रीकृत शासन और सहभागी विकास के ढाँचे में गहराई से जुड़ा हुआ है। पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से इस अधिनियम का कार्यान्वयन विकास प्रक्रियाओं में स्थानीय स्व–शासन और सामुदायिक भागीदारी के महत्व को रेखांकित करता है। एलिनोर ओस्ट्रॉम के सामूहिक कार्रवाई के सिद्धांत के तहत, जो संसाधनों के प्रबंधन और सार्वजनिक वस्तुओं को पहुँचाने में विकेंद्रीकृत संस्थाओं की प्रभावशीलता पर प्रकाश डालता है। स्थानीय समुदायों के लिए योजना बनाने, उसे लागू करने और उसकी निगरानी शामिल करके, मनरेगा की पारदर्शिता, जवाबदेही और स्थानीय जरूरतों के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाता है। यह कार्यक्रम जल संरक्षण संरचनाओं, ग्रामीण संपर्क और भूमि विकास कार्यों जैसी टिकाऊ संपत्तियों के निर्माण के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्थाओं को मजबूत करने में योगदान देता है। ये हस्तक्षेप न केवल तत्काल रोजगार पैदा करते हैं, बल्कि दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता और स्थिरता को भी समर्थन देते हैं। इस योजना का दोहरा कार्य अल्पकालिक राहत और दीर्घकालिक विकास के साथ मेल को दर्शाता है, जो विकास की अर्थशास्त्र में संरचनात्मक परिवर्तन के व्यापक सिद्धांतों के अनुरूप है।

**गरीबी दूर करने में मनरेगा का प्रभाव :**

मनरेगा ने पिछड़े परिवारों के बीच आय सुरक्षा बढ़ाकर और उपभोग क्षमता को मजबूत करके ग्रामीण गरीबी कम करने में काफी मदद की है। सेन के क्षमता दृष्टिकोण से मेल खाता है, जो इस बात पर जोर देता है कि विकास से लोगों की क्षमता और आजादी बढ़नी चाहिए, न कि सिर्फ आय बढ़नी चाहिए। स्थानीय स्तर पर रोजगार के मौके देकर, मनरेगा लोगों की बुनियादी जरूरतें पूरी करने और आर्थिक जीवन में हिस्सा लेने की क्षमता को बढ़ाता है।

सेन ने गरीबी को सिर्फ कम आय के बजाय बुनियादी क्षमताओं की कमी के तौर पर देखा जाना चाहिए। इस संदर्भ के आधार पर मनरेगा काम, आय और सामाजिक सुरक्षा तक पहुँच पक्का करके क्षमताओं की कमी को कम करने के एक तरीके के तौर पर काम करता है। यह कार्यक्रम जॉन रॉल्स की न्याय की सिद्धांत को भी दिखाता है, खासकर अंतर सिद्धांत, जो सामाजिक और आर्थिक असमानताओं का फायदा सबसे कम सुविधा वाले लोगों को मिलना चाहिए। मनरेगा ग्रामीण क्षेत्र पर केंद्रित गरीब परिवारों के लिए अत्यधिक लाभदायक कार्यक्रम हैं, जो राज्य के दखल से पुनर्वितरणकारी न्याय पक्का करते हैं।

**ग्रामीण पलायन रोकने में मनरेगा का प्रभाव :**

मनरेगा के कारण ग्रामीण पलायन में कमी आई है। घर से 5 किलोमीटर के दायरे में रोजगार पैदा करके, यह ग्रामीण मजदूरों को रोजी–रोटी की तलाश में बाहर जाने की जरूरत को कम करता है। कार्ल पोलानी के अंतर्निहित अर्थव्यवस्था के अवधारणा से जोड़ा जा सकता है, जहाँ आर्थिक गतिविधियाँ सामाजिक रिश्तों और स्थानीय हालातों में जुड़ी होती हैं। मनरेगा गांव के समुदायों में रोजगार को शामिल करके स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूत करता है, जिससे सामाजिक ढाँचे स्थिर होते हैं। माइकल टोडारो की पलायन सिद्धांत बताती है कि पलायन उम्मीद के मुताबिक आय के अंतर से होता है। गांव में मजदूरी के मौकों को बेहतर बनाकर, मनरेगा इस अंतर को कम करता है, जिससे पलायन के लिए प्रोत्साहन कम होता है।

**कोरोना महामारी के दौरान मनरेगा :**

करोना महामारी (2020–21) के दौरान, मनरेगा ने तुरंत रोजगार के मौके देकर लौटने वाले प्रवासी मजदूरों को काम पर लगाने में अहम भूमिका निभाई। कीन्स के आर्थिक सिद्धांत को दिखाता है, जहाँ सार्वजनिक कार्यक्रम का इस्तेमाल आर्थिक मंदी के दौरान रोजगार और मांग बढ़ाने के लिए किया जाता है। जॉन मेनार्ड कीन्स ने इस बात पर जोर दिया कि रोजगार का स्तर बनाए रखने के लिए संकट के समय सार्वजनिक खर्च के जरिए सरकारी दखल जरूरी है। इस मामले में मनरेगा ने एक प्रति–चक्रीय राजकोषीय उपकरण के तौर पर काम किया। मनरेगा अपनी सफलताओं के बावजूद, कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जिसमें मजदूरी के भूगतान में देरी, भ्रष्टाचार, पारदर्शिता की कमी और खराब परिसंपत्ति गुणवत्ता शामिल हैं। इन मुद्दों का विश्लेषण मैक्स वेबर की नौकरशाही का सिद्धांत के जरिए किया जा सकता है, जो कठोर प्रशासनिक संरचना से उत्पन्न होने वाली अकुशलता को रेखांकित करता है । भ्रष्टाचार और नकली रोजगार कार्ड का होना, शासन में कमजोरियों को दिखाता है, जो विश्व बैंक के बताए सुशासन के उसूलों के उलट है, जिसमें जवाबदेही, पारदर्शिता और दक्षता पर जोर दिया गया है।

**सामाजिक समावेशन :**

मनरेगा ने महिलाओं, अनुसूचित जातियों और दूसरे पिछड़े समूह की भागीदारी को पक्का करके सबको साथ लेकर चलने वाले विकास को बढ़ावा दिया है। अंबेडकर के सामाजिक लोकतंत्र की अवधारणा से मेल खाता है, जो विकास के जरूरी हिस्सों के तौर पर बराबरी, आजादी और भाईचारे पर जोर देता है। इस कार्यक्रम ने कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाकर उन्हें आर्थिक रूप से मजबूत बनाया है, जिससे लैंगिक निष्पक्षता में मदद मिली है। मनरेगा अवसर बढ़ाने के लिए, समय पर मजदूरी का भुगतान, डिजिटल पारदर्शिता, कौशल एकीकरण और परिसंपत्ति गुणवत्ता में सुधार जैसे सुधारों की जरूरत है। कौशल विकास को जोड़ना गैरी बेकर की बताई मानव पूँजी सिद्धांत से मेल खाता है, जो लंबे समय तक उत्पादकता के लिए कौशल में निवेश पर जोर देता है। अगर संस्थागत मजबूती के साथ ठीक से लागू किया जाए, तो मनरेगा एक सुरक्षा–जाल कार्यक्रम से एक स्थायी आजीविका प्रारूप बन सकता है।

**निष्कर्ष :**

मनरेगा के सामाजिक–आर्थिक परिवेश में एक जरूरी और सहकारी ग्रामीण विकास कार्यक्रम है, जिसने कल्याणकारी शासन को नया रूप दिया है। यह केवल रोजगार देने तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और समावेशी विकास को भी बढ़ावा देता है। न्यूनतम दिनों के रोजगार की गारंटी देकर यह गरीबी और पलायन को कम करता है तथा आय के आधार पर सुरक्षा सशक्तिकरण को बढ़ावा देता है। सेन के सामर्थ्य दृष्टिकोण से मेल खाता है, जो विकास को लोगों की वास्तविक क्षमता के विस्तार के रूप में देखता है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराकर मजबूरी में होने वाले पलायन को भी कम करता है, जो माइकल टोडारो की पलायन सिद्धांत के अनुरूप है। साथ ही, यह महिलाओं, अनुसूचित जाति और सहकारी की भागीदारी बढ़ाकर सामाजिक समानता को प्रोत्साहित करता है, जो जॉन रॉल्स के अंतर का सिद्धांत को बरकरार रखता है। मनरेगा के तहत बनाए गए टिकाऊ ग्रामीण संपत्ति स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूत करते हैं, जिसे कार्ल पोलानी के विकासशील अर्थव्यवस्था सिद्धांत से समझा जा सकता है। आर्थिक संकट के समय, जैसे करोना

महामारी के दौरान यह कार्यक्रम रोजगार और मांग बनाए रखने में मदद करता है, जो जॉन मेनार्ड कीन्स के विचारों से मेल खाता है। अंततः, यदि इसमें कौशल विकास को और जोड़ा जाए, तो यह गैरी बेकर के मानव पूंजी सिद्धांत के अनुसार दीर्घकालिक आजीविका सुधार का मजबूत माध्यम बन सकता है।

**संदर्भ :**


1. अम्बेडकर, बी. आर.(1949)."संविधान सभा की बहसें". भारत सरकार. पृ. 121.
2. बेकर, जी. एस. (1964)."मानव पुंजी एक सैद्धांतिक और अनुभवजन्य विश्लेषण".शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 45.
3. कीन्स, जे. एम. (1936). "रोजगार, ब्याज और मुद्रा का सामान्य सिद्धांत" मैकमिलन. पृ. 129.
4. रॉल्स, जे. (1971). "न्याय का एक सिद्धांत". हार्वर्ड विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 83.
5. सेन, ए. (1999). "स्वतंत्रता के रूप में विकास". ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 87.
6. वेबर, एम. (1922). "अर्थव्यवस्था और समाज". कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 214.
7. विश्व बैंक. (1992). "शासन और विकास". विश्व बैंक प्रकाशन. पृ. 3.
8. बेकर, जी. एस. (1964). "मानव पूंजीरू एक सैद्धांतिक और अनुभवजन्य विश्लेषण". शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 45.
9. कीन्स, जे. एम. (1936). "रोजगार, ब्याज और मुद्रा का सामान्य सिद्धांत". मैकमिलन. पृ. 129.
10. रॉल्स, जे. (1971). "न्याय का सिद्धांत". हार्वर्ड विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 75.
11. सेन, ए. (1999). "स्वतंत्रता के रूप में विकास". ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस. पृ. 87.
12. वेबर, एम. (1922). "अर्थव्यवस्था और समाज". कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस। पृष्ठ 214।
13. ओस्ट्रोम, ई. (1990). "कॉमन्स पर शासन करना"। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस. प्र. 88.
14. रॉल्स, जे. (1971). "न्याय का एक सिद्धांत". हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। प्र. 75.
15. सेन, ए. (1999)। "स्वतंत्रता के रूप में विकास"। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। प्र. 87.



मोबाइल नंबर 8863064711, 9162007448

ईमेल : anupkumar07398@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 32-37

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भाषा एवं साहित्य शिक्षण में तकनीक और डिजिटल माध्यम

**डॉ. कुमकुम श्रीवास्तव,** असिस्टेंट प्रोफेसर
एमिटी लॉ स्कूल, एमिटी यूनिवर्सिटी, उत्तर प्रदेश लखनऊ।

**शब्द कुंजी :** डिजिटल शिक्षा, भाषा शिक्षण, साहित्य शिक्षण, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, ई लर्निंग, ब्लेंडेड लर्निंग, नई शिक्षा नीति 2020, ऑनलाइन अधिगम।

**प्रस्तावना :**

इक्कीसवीं सदी को तकनीकी क्रांति की सदी कहा जा सकता है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में शिक्षा के स्वरूप उद्देश्य और प्रक्रिया में अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं। भाषा और साहित्य शिक्षक जो परंपरागत रूप से पुस्तकों कक्षा संवाद और शिक्षक केंद्रित पद्धतियों पर आधारित रहा है। आज डिजिटल माध्यमों के प्रभाव से एक नएचरण में प्रवेश कर चुका है।

समकालीन शिक्षा व्यवस्था में समस्या केवल एक सहायक उपकरण कि नहीं बल्कि शिक्षण अधिगम की केंद्रीय शक्ति बनती जा रही है। डिजिटल प्लेटफॉर्म, ईकृ सामग्री, ऑनलाइन कक्षाएं, मल्टीमीडिया संसाधन और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ने भाषा और साहित्य शिक्षक को अधिक सुलभ रोचक और बहुआयामी बना दिया है इस शोध का उद्देश्य भाषा एवं साहित्य शिक्षण में तकनीक की भूमिका, संभावनाओं और चुनौतियों का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

**भाषा शिक्षण में तकनीक की अवधारणा :**

भाषा शिक्षण में तकनीक का अर्थ केवल कंप्यूटर या इंटरनेट का उपयोग नहीं है बल्कि वह संपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें डिजिटल साधनों के माध्यम से भाषा कौशलों श्रवण वाचन, पाठन और लेखन का विकास किया जाता है तकनीक आधारित शिक्षा भाषा शिक्षण विद्यार्थी को सक्रिय सहगामी बनाता है और अधिगम को स्वरूअनुभवात्मक स्वरूप प्रदान करता है।

ऑडियो–वीडियो सामग्री, इंटरएक्टिव अभ्यास ऑनलाइन मूल्यांकन और वर्चुअल संवाद ने भाषा सीखने की गति और गुणवत्ता दोनों की में वृद्धि की है तकनीक के माध्यम से विद्यार्थी अपनी गति और रुचि के अनुसार भाषा का अभ्यास कर सकता है।

**साहित्य शिक्षण में डिजिटल माध्यमों की भूमिका :**

साहित्य शिक्षण में डिजिटल माध्यमों ने पाठ के चयन प्रस्तुति और विश्लेषण को नई दिशा दी है, ई–बुक्स, डिजिटल लाइब्रेरी, ऑडियो बुक्स और साहित्यिक पोर्टल ने साहित्य को विद्यार्थियों की पहुंच में सरल बना दिया है। कविता पाठ के लिए ऑडियो विजुअल रिकॉर्डिंग, नाटकों के मंचन के वीडियो और कथाओं के एनीमेटेड

रूप, साहित्य को जीवंत अनुभव में बदल देते हैं। इससे विद्यार्थियों में साहित्य के प्रति रुचि संवेदनशीलता और सौंदर्यबोध विकसित होता है।

साहित्य में डिजिटल माध्यमों की भूमिका अत्यंत व्यापक, बहुआयामी और परिवर्तनकारी है। डिजिटल तकनीक ने साहित्य के सृजन, प्रकाशन, प्रसार, पठन–पाठन, आलोचना और संरक्षण– सभी आयामों को प्रभावित किया है। इसे निम्न बिंदुओं के माध्यम से सविस्तार समझा जा सकता है :

**1. सृजन में परिवर्तन :**

**(क) लेखन के नए उपकरण :**

डिजिटल माध्यमों ने लेखन को अधिक सुविधाजनक बनाया है – वर्ड प्रोसेसर, क्लाउड डॉक्यूमेंट, AI–आधारित सुझाव आदि से संपादन, संशोधन और सहयोग आसान हुआ है।

**(ख) नए साहित्यिक रूप :**

– डिजिटल कथा।

– हाइपरटेक्स्ट साहित्य।

– ब्लॉग साहित्य।

– माइक्रो–पोएट्री, ट्यूटर।

– इंटरैक्टिव/मल्टीमीडिया साहित्य।

अब साहित्य केवल पाठ तक सीमित नहीं, उसमें चित्र, ऑडियो, वीडियो, एनीमेशन आदि भी शामिल हो सकते हैं।

**2. प्रकाशन का लोकतंत्रीकरण :**

**(क) स्व–प्रकाशन :**

लेखक बिना पारंपरिक प्रकाशक के सीधे ई–बुक प्रकाशित कर सकते हैं।

**(ख) बाधाओं में कमी :**

समय, लागत और भौगोलिक सीमाएँ कम हुईं। नए लेखक, हाशिए के स्वर और क्षेत्रीय भाषाओं को मंच मिला है।

**3. प्रसार और पहुँच :**

**(क) वैश्विक पाठक वर्ग :**

इंटरनेट ने साहित्य को विश्वस्तरीय बना दिया – कोई भी रचना तुरंत वैश्विक पाठकों तक पहुँच सकती है।

**(ख) सोशल मीडिया की भूमिका :**

रचनाएँ साझा, चर्चित और वायरल हो सकती हैं, लेखक–पाठक संवाद सशक्त हुआ है।

**4. पठन–पाठन में बदलाव :**

**(क) ई–बुक और ऑडियोबुक :**

मोबाइल, टैबलेट, किंडल आदि पर पढ़ना/सुनना सुविधाजनक हुआ है।

**(ख) लचीला पठन :**

फॉन्ट आकार, नाइट मोड, टेक्स्ट–टू–स्पीच जैसी सुविधाएँ।

**(ग) त्वरित पहुँच :**

डिजिटल लाइब्रेरी, ओपन–एक्सेस प्लेटफॉर्म।

**5. आलोचना और विमर्श :**

**(क) ऑनलाइन समीक्षा :**

ब्लॉग, यूट्यूब, पॉडकास्ट के माध्यम से साहित्यिक चर्चा।

**(ख) लोकतांत्रिक आलोचना :**

केवल अकादमिक जगत तक सीमित नहीं, आम पाठक भी समीक्षक बन सकता है।

**6. भाषाई और सांस्कृतिक प्रभाव :**

**(क) क्षेत्रीय भाषाओं का पुनर्जागरण :**

डिजिटल प्लेटफॉर्म पर हिंदी, भोजपुरी, अवधी आदि में सामग्री बढ़ी।

**(ख) भाषा में परिवर्तन :**

संक्षिप्तता, मिश्रित भाषा (हिंग्लिश), नए प्रयोग।

**7. संरक्षण और अभिलेखीकरण :**

**(क) डिजिटल आर्काइव :**

दुर्लभ पांडुलिपियाँ, क्लासिक साहित्य सुरक्षित।

**(ख) दीर्घकालिक उपलब्धता :**

फिजिकल क्षरण से मुक्ति (हालाँकि डिजिटल क्षरण/फॉर्मेट– ओब्सोलेसेंस चुनौतियां है।

**8. शिक्षा और शोध में योगदान :**

**(क) ई–संसाधन :**

ऑनलाइन जर्नल, डेटाबेस, ई–लाइब्रेरी।

**(ख) डिजिटल ह्यूमैनिटीज :**

टेक्स्ट एनालिटिक्स, कॉर्पस स्टडी, डेटा–आधारित साहित्यिक अध्ययन।

**9. आर्थिक और व्यावसायिक आयाम :**

**(क) नए बाजार :**

ई–बुक, सब्सक्रिप्शन मॉडल, ऑडियो प्लेटफॉर्म।

**(ख) लेखक की आय के नए स्रोत :**

क्राउडफंडिंग डिजिटल बिक्री।

**10. चुनौतियाँ :**

– सतही पठन (स्किमिंग कल्चर)
– कॉपीराइट उल्लंघन, पाइरेसी
– ध्यान–भंग
– गुणवत्ता नियंत्रण की समस्या
– एल्गोरिद्मिक अर्थात कंप्युटर सिस्टम मे दोहराने योग्य पक्षपात इत्यादि।

भाषा कौशल विकास में तकनीकी संबंधित त्रुटियाँ ए. आई से संबंधित त्रुटियाँ शामिल हैं।

तकनीकी उपकरण भाषा कौशलों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। श्रवण कौशल के लिए पॉडकास्ट ऑडियो पाठ और भाषण उपयोगी है। वाचन कौशल के लिए वीडियो संवाद प्रस्तुति और ऑनलाइन चर्चा मंच सहायक है। पठन कौशल के लिए ई–पाठ्य सामग्री, हाइपरलिंक और डिजिटल शब्दकोश उपयोगी सिद्ध होते हैं। लेखन कौशल के लिए ब्लॉग लेखन, ईमेल, ऑनलाइन निबंध और सहयोगात्मक लेखन मंच प्रभावित है इस प्रकार तकनीक भाषा शिक्षण को अभ्यासपरक और आत्मनिर्भर बनाती है।

**नई शिक्षा नीति 2020 और डिजिटल भाषा शिक्षण :**

नई शिक्षा नीति 2020 मैं तकनीक को शिक्षा के केंद्रीय घटक के रूप में स्वीकार किया है। नीति में डिजिटल संरचना ऑनलाइन संसाधनों और तकनीक आधारित शिक्षण पर विशेष बल दिया गया है। भाषा और साहित्य शिक्षण में बहुभाषिक डिजिटल सामग्री ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेस और वर्चुअल प्लेटफार्म के उपयोग से शिक्षा को अधिक समावेशी बनाने का प्रयास किया गया है। यह दृष्टिकोण ग्रामीण और वंचित वर्ग के विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है।

**तकनीक आधारित भाषा शिक्षण की चुनौतियां :**

हिंदी तकनीक ने भाषा और साहित्य शिक्षण को व्यापक बनाया है, फिर भी इसके समक्ष अनेक चुनौतियां हैं। डिजिटल विभाजन तकनीकी संसाधनों के समान उपलब्धता, शिक्षक प्रशिक्षण की कमी और भाषा की मानवीय संवेदनशीलता की प्रमुख समस्याएं हैं। साहित्य शिक्षण में अत्यधिक तकनीकी निर्भरता कभी–कभी भावात्मक गहराई और प्रत्यक्ष संवाद को सीमित कर सकती है। अतः तकनीक का संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग आवश्यक है।

तकनीक आधारित भाषा शिक्षण में शिक्षक की भूमिका ज्ञान प्रदाता से मार्गदर्शन और समन्वयक की हो जाती है। शिक्षक को डिजिटल संसाधनों का चयन उनके प्रभावी उपयोग और विद्यार्थियों को सही दिशा प्रदान करने की जिम्मेदारी निभानी होती है। इस संदर्भ में शिक्षक प्रशिक्षण और डिजिटल साक्षरता अत्यंत आवश्यक है। जिस से भाषा एवं साहित्य शिक्षक की गुणवत्ता बनी रहे।

**भाषा शिक्षण में नवाचार की अवधारणा :**

नवाचार शिक्षा में वह परिवर्तन है जो, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाता है। हिंदी भाषा शिक्षण में नवाचार का उद्देश्य विद्यार्थियों को सक्रिय भागीदार बनाना उनकी संरचनात्मकता को प्रोत्साहित करना तथा भाषा सीखने को जीवन से जोड़ना है।

परंपरागत व्याख्यान की तुलना में नवाचार आधारित शिक्षण विद्यार्थियों को संवाद सहयोग और प्रयोग के अवसर प्रदान करता है। कहानी लेखन, वाद–विवाद, नाटक प्रस्तुति, परियोजना कार्य और समस्या आधारित अधिगम जैसे नवाचार भाषा शिक्षण को जीवंत बनाते हैं।

**सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी और हिंदी भाषा शिक्षण :**

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। कंप्यूटर, इंटरनेट, स्मार्टफोन और डिजिटल डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से हिंदी भाषा शिक्षण अधिक प्रभावशाली बन गया है। ऑनलाइन शब्दकोश की पुस्तक, डिजिटल व्याकरण, संसाधन और भाषा अधिगम एप्स ने विद्यार्थियों को स्वकृ

अधिगम की सुविधा प्रदान की है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग से भाषा शिक्षण समय और स्थान की सीमाओं से मुक्त हुआ है जिससे आजीवन सीखने की अवधारणा को बल मिला है।

**ई-लर्निंग और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म :**

ई–लर्निंग ने हिंदी भाषा शिक्षण को वैश्विक मंच प्रदान किया है। ऑनलाइन वीडियो व्याख्यान और लर्निंग मैनेजमेंट सिस्टम (लर्निंग मैनेजमेंट सिस्टम) के माध्यम से भाषा शिक्षण अधिक और संवादात्मक बन गया है। MOOCS, SWAYAM, DIKSHA जैसे मंचों ने हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन को सरल और सुलभ बनाया है। विद्यार्थी अपनी गति और रुचि के अनुसार भाषा सीख सकते हैं जिससे अधिगम अधिक प्रभावित होता है।

**मल्टीमीडिया और ऑडियो विजुअल साधनों की भूमिका :**

मल्टीमीडिया साधन जैसे वीडियो ऑडियो एनीमेशन और प्रस्तुतीकरण भाषा शिक्षण को रोचक बनाते हैं। कविता पाठ के ऑडियो नाटक के वीडियो और कहानी के दृश्य रूपांतरण से विद्यार्थियों में भाषा के प्रति रुचि विकसित होती है। श्रव्य माध्यमों के संयुक्त प्रयोग से भाषा कौशल विशेषतयाः सुनने और बोलने की क्षमता का प्रभावी विकास होता है इससे भाषा शिक्षण अनुभवात्मक और स्थाई बनता है।

**स्मार्ट कक्षा और हिंदी भाषा शिक्षण :**

स्मार्ट कक्षा की अवधारणा ने पारंपरिक कक्षा को तकनीकी संपन्न अधिगम केंद्र में परिवर्तित कर दिया है। स्मार्ट बोर्ड डिजिटल कंटेंट और इंटरएक्टिव टूल्स के माध्यम से हिंदी भाषा शिक्षण अधिक सहभागिता पूर्ण बन गया है स्मार्ट कक्षा में विद्यार्थी प्रश्न पूछने, विचार साझा करने और भाषा का प्रयोग करने के लिए प्रेरित होते हैं। यह वातावरण भाषा सीखने को सहज और आनंददायक बनता है।

**नवाचार तकनीक और शिक्षक की भूमिका :**

तकनीकी माध्यम तभी प्रभावित हो सकते हैं जब शिक्षक उनका समुचित और संतुलित प्रयोग करें। हिंदी भाषा शिक्षण की भूमिका अब केवल ज्ञान प्रदाता कि नहीं बल्कि, मार्गदर्शन मे सहायक हो गई है। शिक्षक को तकनीकी दक्षता के साथ–साथ शैक्षिक विवेक का भी प्रयोग करना चाहिए। जिससे तकनीक भाषा शिक्षण का साधन बने, लक्ष्य नहीं।

**तेजी से बदलती तकनीकी :**

डेटा गोपनीयता, साइबर सुरक्षा और नैतिक समस्याएं जटिलता और अनिश्चितता में निर्णय लेना।

**उपसंहार :**

भाषा एवं साहित्य शिक्षण में तकनीक और डिजिटल माध्यमों का प्रयोग शिक्षा को अधिक सुलभ रोचक और प्रभावी बनाता है। तकनीक ने भाषा शिक्षण को वैश्विक मंच प्रदान किया है और साहित्य को नए पाठकों से जोड़ा है हालांकि तकनीक स्वयं उद्देश्य नहीं, बल्कि साधन है इसका उपयोग मानवीय संवेदना, सांस्कृतिक मूल्यों और शैक्षिक उद्देश्यों के अनुरूप किया जाना चाहिए। संतुलित दृष्टिकोण अपनाकर तकनीकी भाषा और साहित्य शिक्षक को नई ऊंचाइयों तक पहुंचा सकती है। अतः है यह स्पष्ट है कि नवाचार और तकनीक का संतुलित उपयोग ही हिंदी भाषा शिक्षण को समकालीन चुनौतियों के अनुरूप बना सकता है। शिक्षक, विद्यार्थी और शैक्षिक संस्थान यदि मिलकर इन साधनों का विवेकपूर्ण प्रयोग करें तो भाषा शिक्षण अधिक सार्थक और प्रभावी बन सकता है।

**संदर्भ सूची :**


1. शर्मा, रामकिशोर, हिंदी भाषा शिक्षण और नवाचार–वाणी प्रकाशन।
2. पाण्डेय, रामचंद्र, भाषा शिक्षण में तकनीक लोक भारतीय प्रकाशन।
3. वर्मा, धीरेंद्र, शिक्षा और सूचना प्रौद्योगिकी–राजकमल प्रकाशन।
4. सिंह हरि, डिजिटल युग में भाषा शिक्षण–साहित्य भवन।
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020, भारत सरकार।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 38-45

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# महामति प्राणनाथ की यात्रा वृत्तांतों में लोक चेतना

**नीलेश कुमार प्रजापति,** शोधार्थी
**डॉ. जी. पी. अहिरवार,** निर्देशक

**शोध सारांश –**

महामति प्राणनाथ (1618–1694 ई.) की यात्राएँ केवल धार्मिक प्रचार या संप्रदाय–निर्माण तक सीमित नहीं हैं, बल्कि एक व्यापक लोक.जागृति अभियान "जागनी यात्रा" का स्वरूप धारण करती हैं। बीतक और अन्य प्रणामी स्रोतों के आधार पर देखा जाए तो उनकी यात्राएँ जामनगर, अहमदाबाद, सूरत, दिव बंदर, ठट्टा, सिद्धपुर, मेरता, उत्तर भारत के महान केन्द्र (मथुरा, आगरा, दिल्ली), हरिद्वार, राजस्थान के राजसी नगरों (आमेर, उदयपुर), उज्जैन, औरंगाबाद, बुंदेलखण्ड (रामनगर, गढ़ा, चित्रकूट, बीजावर) और अरब देशों तक विस्तृत हैं, जहाँ वे हिंदू–मुस्लिम समन्वय, जाति. भेद मिटाने, स्त्री. समानता और धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध शक्तिशाली आवाज उठाते हैं। इन यात्रा–वृत्तांतों से यह स्पष्ट होता है कि महामति केवल संन्यासी नहीं, बल्कि एक समाज सुधारक, जाति एवं धर्म के विभाजनों को तोड़ने वाले आध्यात्मिक नेता थे, जिन्होंने "तारतम मंत्र" दीक्षा, भजन–कीर्तन और शास्त्रार्थ के माध्यम से सामान्य जन–चेतना को जागृत किया। ये यात्राएँ शहरों, बंदरगाहों, राजदरबारों और ग्रामीण क्षेत्रों दोनों में एक साथ घटित रहीं, जिससे व्यापारी–समाज, राजकीय वर्ग और निम्न वर्ग सभी तक एक समन्वयवादी, मानवतावादी और सर्वधर्म–समभावी दृष्टिकोण पहुँचा। 'बीतक" जैसे ग्रन्थों में वर्णित घटनाएँ 'कुतुब खाँ का जामनगर पर आक्रमण, औरंगजेब का उदयपुर आक्रमण तथा अन्य ऐतिहासिक उल्लेख' इस बात को प्रमाणित करती हैं कि महामति की यात्राएँ ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिक लोक.चेतना के वास्तविक दस्तावेज हैं, न कि केवल पौराणिक वर्णन। इसी के साथ लालदास–बीतक में प्रयुक्त 17वीं शताब्दी की खड़ी बोली एवं हिन्दवी–हिन्दुस्तानी जैसे शब्दों का उपयोग भी दर्शाता है कि यह ग्रन्थ केवल धार्मिक इतिवृत्त नहीं, बल्कि एक भाषाई और सांस्कृतिक लोक–दस्तावेज भी है, जो मध्य–उत्तर भारत की लोक–भाषा और धार्मिक चर्चा की वास्तविक धड़कन को सुरक्षित करता है।

**परिचय :**

भारतीय साहित्य के इतिहास में महामति प्राणनाथ का एक अनुपम व्यक्तित्व हैं। प्रणामी संप्रदाय (निजानंद सम्प्रदाय) के प्रमुख प्रवर्तक के रूप में उन्होंने हिंदू–मुस्लिम समन्वय, सामाजिक समता और आध्यात्मिक जागृति का संदेश दिया। उनकी यात्राएँ मात्र धार्मिक प्रचार की नहीं थीं, बल्कि लोक चेतना का जीवंत दस्तावेज थीं। लोक चेतना से तात्पर्य सामान्य जन की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक जागृति से है, जिसमें जाति–भेद, स्त्री–शोषण, धार्मिक कट्टरता और आर्थिक शोषण के विरुद्ध विद्रोह तथा समन्वय की भावना शामिल

है।

महामति प्राणनाथ की यात्रा वृत्तांतों में उल्लिखित प्रमुख स्थानों का क्रमांक 1 से 14 तक का वर्णन नीचे दिया गया है। प्रत्येक स्थान का वर्णन किया गया है, जिसमें स्थान का महत्व, वहाँ किए गए प्रमुख कार्य, जागनी अभियान, लोक चेतना जागरण, धार्मिक सद्भाव और सामाजिक सुधार पर जोर दिया गया है। ये विवरण बीतक, कुलजम स्वरूप, प्रणामी स्रोतों और ऐतिहासिक वर्णनों पर आधारित हैं।

**1. जामनगर नवतनपुरी धाम (गुजरात) :**

महामति प्राणनाथ का जन्म स्थान (6 अक्टूबर 1618, मूल नाम मेहराज ठाकुर) जामनगर प्रारंभिक आध यात्मिक केंद्र है।

**'संवत् सोलह सै पंचोंतरा, आसो वदी चौदस नाम'।।**
**पहर दिन चढ़ते बार रवि, प्रगटे धनी श्री धाम।।'**[1]

यहाँ वे जामनगर राज्य के दीवान के पुत्र थे। सद्गुरु देवचंद्र महाराज से दीक्षा प्राप्त कर तारतम मंत्र ग्रहण किया। नवतनपुरी धाम प्रणामी संप्रदाय का प्रमुख तीर्थ है, जहाँ जन्म स्थान (श्रीजीनुन मेड़ी मंदिर), सद्गुरु समाधि और अन्य पवित्र स्थल स्थित हैं। यहाँ से जागनी महा अभियान की शुरुआत हुई। लोक चेतना में धार्मिक एकता का बीज बोया, हिंदू–इस्लामी परंपराओं के समन्वय पर जोर दिया। जाति–भेद मिटाने और सभी वर्गों को दीक्षा देने का कार्य प्रारंभ किया। राज्य सेवा छोड़कर आध्यात्मिक यात्रा की दिशा तय की। यह स्थान उनके जीवन का आधार बना, जहाँ उन्होंने कुलजम स्वरूप जैसी वाणी की रचना की नींव रखी। वहां आज भी प्रणामी अनुयायियों के लिए प्रमुख धाम है।

**2. अहमदाबाद (गुजरात) :**

प्राणनाथ के प्रारंभिक यात्रा का पड़ाव गुजरात का प्रमुख शहर अहमदाबाद है। देवचंद्र की आज्ञा से यहाँ पहुँचकर धार्मिक चर्चाएँ कीं। लोक स्तर पर हिंदू–इस्लामी सद्भाव का संदेश फैलाया। व्यापारिक केंद्र होने से विभिन्न वर्गों, व्यापारियों और आम जन तक आसानी से पहुँच बनी। तारतम मंत्र की दीक्षा दी, अंधविश्वासों के विरुद्ध जागृति लाई। सामाजिक सुधार पर बल दिया, स्त्रियों को धार्मिक सभाओं में शामिल किया। मुगल काल की धार्मिक कट्टरता के बीच समन्वयवादी विचार प्रस्तुत की। लोक भाषा में भजन–कीर्तन कर जन–जागृति फैलाई। यहाँ से आगे की यात्राओं की योजना बनी। लोक चेतना में धार्मिक विभेद मिटाने का प्रयास सफल रहा, जिससे प्रणामी संप्रदाय के अनुयायी बढ़े। इसलिए अहमदाबाद ने उनके अभियान को व्यापक बनाया।

बीतक के अनुसार 'अहमदाबाद से श्री प्राणनाथ जी दीव बन्दर पधारे और वहाँ साथी जैराम को जागृत किया। अन्य लोग दीक्षित होकर साथी बने। नगर में कीर्तन की हलचल मची, जिससे कुछ ईष्यालु लोगों ने नगर के फिरंगियों के पास चुगली करनी चाही, किन्तु एक सज्जन के समझाने पर दरबार में पहुँच जाने पर भी 'चुगल' लौट आया, फिर भी फिरंगियों के भय से 'साथियों' में 'खलभल' पड़ गई और सब इधर उधर 'छिप गए'। इस समय 'जैराम' को छोड़कर समस्त साथियों ने श्री प्राणनाथ का साथ छोड़ दिया।'[2]

**3. सूरत श्री 5 महामंगलपुरी धाम (गुजरात) :**

यात्रा का प्रमुख केंद्र और प्रणामी संप्रदाय की महत्वपूर्ण पीठ। ताप्ती नदी के तट पर स्थित यह धाम महामति द्वारा स्थापित किया गया। और गद्दी प्राप्त कर प्रणामी संप्रदाय की नींव मजबूत की। जागनी का बिगुल

बजाया, भजन–कीर्तन और सभाओं से जन–जागृति फैलाई। लोक चेतना में स्त्री–पुरुष समानता और जाति–भेद मिटाने पर विशेष जोर दिया। व्यापारिक शहर होने से विभिन्न धर्मों के लोगों तक संदेश पहुँचा। धार्मिक एकता का प्रचार किया, कुरान और पुराणों के रहस्य खोलकर समन्वय दिखाया। सामाजिक सुधारों को बढ़ावा दिया, सभी को तारतम दीक्षा प्रदान की। यह धाम आज भी प्रणामी अनुयायियों का प्रमुख तीर्थ है। सूरत ने उनके अभियान को राष्ट्रीय स्तर पर फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

**बीतक में सूरत पहुंचने और गद्दी स्थापना का वर्णन :**

**'सूरत पहुंचे महामति जी, महामंगलपुरी धाम बसाया।**
**ताप्ती तट पर जागनी बिगुल,भजन कीर्तन से जन जागाया।।'**[3]

**4. दिव बंदर, लाठी और ठट्टा :**

गुजरात और सिंध क्षेत्र के महत्वपूर्ण समुद्री पड़ाव। समुद्री मार्ग से यात्रा करते हुए इन स्थानों पर ठहराव किया। लोक भाषा में वाणी प्रसारित की, व्यापारिक समुदायों में धार्मिक एकता का प्रचार किया। हिंदू–मुस्लिम सद्भाव पर बल दिया। जागनी अभियान को आगे बढ़ाया, भजन और प्रवचन से जनमानस को जागृत किया। सामाजिक असमानताओं के विरुद्ध आवाज उठाई। सिंध क्षेत्र में प्रणामी संप्रदाय के अनुयायी बढ़े। लोक चेतना में आर्थिक और धार्मिक समानता का संदेश दिया। ये स्थान उनकी विदेश यात्रा की तैयारी के रूप में महत्वपूर्ण थे। चुनौतियों का सामना करते हुए त्याग और सेवा का उदाहरण प्रस्तुत किया। इन पड़ावों ने उनके अभियान को अंतरराष्ट्रीय आयाम दिया।

**'बातें लगे पूछने, कौन भाग हैं हम।**
**वहाँ सेती यहाँ लों, धरे मुबारक कदम।।**
**महामति कहे ऐ साथ जी, दीव से ले ठ्ठे में।**
**अब फेर कहों ठ्ठे की, हुई बीतक जो हमसे।।**
**अब कहों बीतक ठ्ठे की, याद करो मोमिन।**
**जो दिखाया खेल तुम को, बीच जिमी नासूत सुभान।।**
**श्री जी आये ठ्ठे में, रहे दिन दस-बार।**
**फेर लाठी बंदर आये, हुए इत हुसियार।।'**[4]

**5. सिद्धपुर (गुजरात) :**

'सूरत से प्रस्थान कर अपने सुन्दरसाथ सहित चार दिन गुजरात में तथा सीदपुर (सिद्धपुर) में 'बावीस (बाइस) दिन रहकर भगवान उपाध्याय को जागृत करते हुए संवत् 1731 में मेड़ता नगर गए। तब सिद्धपुर से जाते समय वहाँ लाभानन्द जती (यती) के साथ धर्म चर्चा हुई। उस पर धर्म विजय प्राप्त की। यहाँ के प्रसिद्ध सेठ राजाराम अग्रवाल तथा सेठ झाझन 'जागृत' दीक्षित हुए।'[5]

प्रणामी संप्रदाय का सिद्धपुर धार्मिक केंद्र है। यहाँ प्राणनाथ शास्त्रार्थ और प्रवचन दिए। लोक चेतना के लिए अंधविश्वासों के विरुद्ध जागृति लाई। सभी वर्गों को तारतम मंत्र दीक्षा प्रदान की। धार्मिक सद्भाव का प्रचार किया, विभिन्न ग्रंथों के रहस्य खोलकर एकता दिखाई। स्त्रियों और निम्न वर्गों को विशेष महत्व दिया। जागनी अभियान को मजबूती प्रदान की। सामाजिक सुधार पर जोर दिया, जाति–पाँति का भेद मिटाया। लोक सभाओं

में भजन–कीर्तन कर जन–जागृति फैलाई। सिद्धपुर ने उनके संदेश को गुजरात के ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँचाया। यह स्थान उनके आध्यात्मिक प्रभाव का प्रमाण बना।

**6. मेरता (राजस्थान) :**

**'रामचंद्र आय मिले, मेरते के ठौर।**
**सेवा में सामिल रहा, तब आस रही न और।।'[6]**

इस प्रकार मेड़ता में श्री रामचंद्र भाई आकर के धार्मिक विचार श्रवण कर महामति प्राणनाथ से प्रभावित होकर दीक्षा लिए और दीक्षा ग्रहण किया।

'डॉ. शिवमंगल राम जयसवाल ने मेड़ता राजस्थान के में पुराण और कुरान की साम्य होने की परख जिस समय प्राणनाथ सिद्धपुर व पालनपुर जैसे विभिन्न स्थानों पर परमधाम की ब्रह्मत्माओं सुंदरसाथ को जागृत करते हुए मेड़ता नगर पहुंचे, उस समय इस्लाम धर्म के व्यापक प्रभाव के साथ–साथ जैन धर्म के प्रचार एवं तंत्र मंत्र और यंत्र का भी पर्याप्त प्रभाव प्रदर्शित होता है। मेड़ता में इनके पहुंचते ही तत्कालीन धार्मिक परिस्थितियां में अभूतपूर्व परिवर्तन की लहर दौड़ने लगी क्योंकि तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियां उनके लिए अत्यंत उपयुक्त कारण बनी हुई थी।'[6]

प्राणनाथ ने राजस्थान प्रवेश का प्रारंभिक स्थान मेरता में जागनी का शंखनाद किया। लोक सभाओं में धार्मिक संकीर्णता के विरुद्ध बोलकर सामाजिक सुधार प्रारंभ किया। राजपरिवारों और आम जन में संदेश फैलाया। हिंदू–इस्लामी एकता पर बल दिया। तारतम दीक्षा दी, भजन–कीर्तन से जागृति लाई। लोक चेतना में मानवतावाद और समानता का प्रचार किया। राजस्थान के अन्य स्थानों की यात्रा की नींव रखी। चुनौतियों का सामना कर त्याग का उदाहरण दिया। मेरता ने उनके अभियान को राजस्थानी क्षेत्र में स्थापित किया।

**7. मथुरा, आगरा और दिल्ली :**

जब दिल्ली में प्राणनाथ के धर्मयुद्ध के समय औरंगजेब का दिल्ली में निवास था। तब बीतक के अनुसार 'प्राणनाथ जी सं. 1735 से –37 तक तथा 16 माह तक दिल्ली में रहकर धर्मयुद्ध का संचालन करते रहे। और बाद संवत् 1737 में उदयपुर की ओर चले गए। यदुनाथ सरकार के अनुसार औरंगजेब अफरीदी विद्रोह को दबाकर हसन अब्दाल से मार्च 1679 (संवत् 1733–34) में दिल्ली लौटा और दिल्ली से वह 30 सितम्बर 1679 (1736–37 वि.) को उदयपुर के लिए प्रस्थान करता है।'[7]

उत्तर भारत का प्रमुख केंद्र। मथुरा–वृंदावन में कृष्ण भक्ति से जोड़कर संदेश दिया। दिल्ली में औरंगजेब से मुलाकात का प्रयास किया, कुरान का गहन अध्ययन किया। लोक चेतना में हिंदू–मुस्लिम एकता पर बल दिया। मुगल काल की चुनौतियों का सामना किया। शास्त्रार्थ और प्रवचन से जन–जागृति फैलाई। धार्मिक सद्भाव का प्रचार किया। आगरा में ठहराव कर संदेश प्रसारित किया। ये स्थान उनके दावा (मिशन) के लिए महत्वपूर्ण बने। लोक स्तर पर समन्वयवादी दृष्टि प्रस्तुत की।

**8. हरिद्वार :**

विक्रम संवत 1735 (1678 ई.) में महाकुंभ में भाग लिया। ब्रह्म चबूतरे से शास्त्रार्थ कर विजय प्राप्त की। 'विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक अवतार' की उपाधि मिली। संत समाज को प्रभावित कर लोक चेतना में धार्मिक समन्वय का संदेश फैलाया। विभिन्न संप्रदायों के साथ विचार–विमर्श किया। जागनी अभियान को राष्ट्रीय मान्यता

मिली। लोक स्तर पर एकता और जागृति का प्रसार हुआ। प्राणनाथ को हरिद्वार के शास्त्रार्थ ने उनके अवतारवाद को प्रमाणित किया।

**महाकुंभ में शास्त्रार्थ और विजय :**

**'मास एक इत रहेके, फेर चले हरिद्वार।**
**आये हरिद्वार में, ताकों कहो विस्तार।।**
**'हरिद्वार कुंभ में गए धनी, ब्रह्म चबूतरे से शास्त्रार्थ किया।**
**विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक, उपाधि संतों ने दी।।'**[8]

**9. अनूपशहर, आमेर, संगानेर और उदयपुर :**

बीतक के अनुसार 'जिस समय सं. 1736–37 में श्री प्राणनाथ उदयपुर में थे, उसी समय औरंगजेब ने अजमेर होते हुये उदयपुर के राजा पर चढ़ाई की। इतिहास सिद्ध है कि औरंगजेब का यह आक्रमण 5 अक्टूबर 1679 ई. (सं. 1636 वि.) को हुआ था।'[9]

प्राणनाथ ने राजस्थान के विभिन्न राजसी स्थानों पर ठहराव किया। राजपरिवारों और लोक में जागनी प्रसारित की। आमेर और उदयपुर में धार्मिक चर्चाएँ कीं। सामाजिक सद्भाव बढ़ाया। तारतम दीक्षा दी, भजन से जन–जागृति फैलाई। लोक चेतना में धार्मिक एकता पर जोर दिया। राजस्थानी संस्कृति से जोड़कर संदेश दिया। ये स्थान उनके अभियान को राजसी समर्थन दिलाने में सहायक बने।

**10. उज्जैन और औरंगाबाद :**

प्राणनाथ ने उज्जैन में महाकालेश्वर क्षेत्र में प्रवचन दिए। औरंगाबाद में ठहराव कर लोक स्तर पर एकता का प्रचार किया। जागनी अभियान आगे बढ़ाया। धार्मिक सद्भाव और सामाजिक सुधार पर बल दिया। लोक सभाओं में संदेश फैलाया। मध्य भारत में प्रणामी प्रभाव बढ़ाया।

**'यहां से आए सीता मऊ, तहां से नौलाई।**
**तहां से आए उज्जैन, अठाईस मजलें भई।।**
**'महामति कहे ए मोमिनो, ए मंदसौर की बीतक।**
**आगे औरंगाबाद की, बात बड़ी बुजरक।'**[10]

**11. रामनगर और गढ़ा :**

महामति प्राणनाथ नाथ जी ने सुजान सिंह के यहां रामनगर में जाकर के धार्मिक एकता का संदेश दिए और बुंदेलखंड की ओर यात्रा का पड़ाव। गढ़ा क्षेत्र में ठहराव, लोक सभाएँ कीं। बुंदेलखंड में छत्रसाल जैसे राजाओं से संपर्क बढ़ाया। जागनी का प्रसार किया। धार्मिक और राष्ट्रीय एकता का आधार तैयार किया। लोक चेतना में सुधार लाया।

**'महामति कहें ए मोमिनों,आ कही रामनगर की तुम।**
**और आगे अंजु बोहोत हैं, कहो हक के हुकम।।**
**ए बात हरिसिंह सुनी, करने आया दीदार।**
**सुजान साह की सोहोबतें, किया सूरत सिंह खबरदार।।'**[11]
**'गढ़े की मजल में, आया याद रामनगर।**

**तिनकी मजल कहत हों, सुनियो साथ खबर।।'**[12]

**12. चित्रकूट और बीजावर :**

प्राणनाथ ने बुंदेलखंड का क्षेत्र चित्रकूट और बिजावर में धार्मिक यात्रा करते हुएं महाराजा छत्रसाल से मुलाकात करके राष्ट्रीय–धार्मिक एकता का आधार तैयार किया।

**'साखी कहके थाल ले, तिलक करयो श्री राज।**

**भाल मांहीं छत्रसाल के, कही आप बैठो महाराज।।' पृष्ठ 616 (बीतक)**

मुगल अत्याचार के विरुद्ध प्रेरणा दी। जागनी अभियान मजबूत किया। सामाजिक सद्भाव बढ़ाया। 'कयामतनामा बड़ा का प्रणयन चित्रकूट में ही हुआ, जहाँ श्री प्राणनाथ एक वर्ष रहे थे।'[13]

**13. अरब देश (मस्कट, बसरा, बगदाद, बंदर अब्बास) :**

विदेश यात्रा (25 वर्ष की आयु में गुरु आज्ञा से)। ओमान (मस्कट), इराक (बसरा, बगदाद), ईरान (बंदर अब्बास) गए। इस्लाम की मूल भावना पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। कुरान के रहस्य खोले। लोक चेतना में सार्वभौमिक मानवतावाद और धार्मिक सद्भाव फैलाया। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संदेश दिया।

**'सम्वत सत्रह सौ तिलोत्तरे मिने, हुकुम हुआ श्री राज।**

**गांगजी भाई के काम को, तुम जाओ श्री मेहेराज।।'**[14]

**14. पन्ना पद्मावतीपुरी धाम (मध्य प्रदेश) :**

प्राणनाथ ने पन्ना में विक्रम संवत 1744 तक (11 वर्ष) रहने के बाद आत्म समर्पित करते हुए समाधि ली (गुम्मटजी में)। समाधि से पहले छत्रसाल को विजय प्राप्त करने लिए तलवार दी, राजतिलक में सहयोग किया। पन्ना में प्रणामी संप्रदाय का मुख्य केंद्र बनाया। जो लोक चेतना का स्थायी प्रतीक। आज भी प्रणामी संप्रदाय का सबसे बड़ा मंदिर है।

**पन्ना पहुंचने और छत्रसाल से मुलाकात :**

**'पन्ना पद्मावतीपुरी धाम, ग्यारह वर्ष निवास किया।**

**यह एमएम छत्रसाल को तलवार दी, जागनी लीला पूरी की।।**

**संवत् सत्रह सौ इक्यावन, आषाढ़ के महिने।**

**दिन चौथ पिछली रात में, धनी पोहोचे धाम अपने।'**[15]

ऐतिहासिक स्थानों में श्री देवचन्द्र जी की जन्मभूमि उमरकोट (आधुनिक अमरकोट) और प्राणनाथ जी की जन्मभूमि जामनगर को ही बीतककार ने नवतनपुरी कहा है – संप्रदाय में इसे नवतनपुरी ही कहते हैं। कहा जाता है कि वहाँ के चारण उस समय इसे नवतनपुरी ही कहा करते थे। प्राणनाथ जी का अविर्भाव स्थान होने के कारण भी इनका यह नाम हो सकता है। जन साधारण आज सौराष्ट्र में 'नगर' के नाम से ही पुकारते हैं। सुदामापुरी का नाम ही पोर बन्दर है, जो लालदास की जन्मभूमि है। मेड़ता, जूनागढ़, दीव बंदर, ठट्ठानगर, लाठी बंदर, मसकत, अवासी बंदर, मंडई बन्दर, सूरत, अटक, गोकुल, मथुरा, दिल्ली, और दिल्ली के अन्दर उर्दू बाजार, साहगंज, रोहिलाखान की सराय, चांदनी चौक, आमेर, सांगानेर, उदयपुर, रामपुर, मंदसौर, सीतामऊ, उज्जैन, बुरहानपुर, बरार, रामनगर, बिलेहरी, पन्ना, चित्रकूट तथा ओरछा आदि स्थानों में यात्रा करने का नाम बीतक में आए हैं। इन स्थानों में नगरों के मध्ययुगीन नामों पर प्रकाश पड़ता है। बीतककार ने अरब को बरारब कहा है,

जो संभवतः बर्र अरब का तद्भव है।

बीतक में वर्णित अनेक महत्वपूर्ण घटनायें ऐतिहासिक कसौटी पर प्रामाणिक सिद्ध होती हैं। बीतककार के अनुसार कुतुब खाँ ने जामनगर पर दो बार चढ़ाई की। प्रथम बार संवत् 1712 और दूसरी बार संवत् 1719 में। औरंगजेब युग के इतिहासकार यदुनाथ सरकार के अनुसार सम्राट की आज्ञा से जूनागढ़ के फौजदार कुतुबुद्दीन खान खेशगी के सेनापतित्व में 1662 दिसम्बर में नवानगर के जाम पर चढ़ाई की, जो बीतक के विं. सं. 1719 से मिलता है। कुतुबुद्दीन को जनसाधारण में कुतुब ही कहा जाता है (यथा कुतुबुद्दीन की मीनार को कुतुब मीनार) इस प्रकार बीतक में वर्णित दूसरी चढ़ाई इतिहास सिद्ध है जसवंत सिंह राठौर का अटक पार रहना। बीतक के अनुसार श्री प्राणनाथ जी ने मेड़ता से अपने एक शिष्य गोवर्धन को एक पत्र देकर जसवंत सिंह को जागृत करने के लिए (1731 संवत् में) अटक पार भेजा था। इतिहास सिद्ध है कि औरंगजेब ने इसी समय काबुल पर चढ़ाई की थी। जसवंत सिंह भी उस चढ़ाई में मारे गए थे। ब्रजभूषण कृत वृतान्त मुक्तावली में भी गोवर्धन का काबुल से लौटकर प्राणनाथ जी के पास जाकर सारा वृत्तान्त कहने का उल्लेख हुआ है। इस प्रकार प्राणनाथ के दिल्ली–निवास के समय औरंगजेब का दिल्ली निवास इतिहास सिद्ध है। उदयपुर पर औरंगजेब की चढ़ाई। बीतक के अनुसार जिस समय सं. 1736–37 में श्री प्राणनाथ उदयपुर में थे, उसी समय औरंगजेब ने अजमेर होते हुये उदयपुर के राजा पर चढ़ाई की। इतिहास सिद्ध है कि औरंगजेब का यह आक्रमण 5 अक्टूबर 1679 ई. (सं. 1636 वि.) को हुआ था। इस प्रकार बीतककार का आक्रमण सम्बन्धी उल्लेख सब प्रकार से इतिहास सम्मत है। इन घटनाओं के अतिरिक्त भी अनेक अति महत्वपूर्ण घटनाओं का बीतक में उल्लेख है, किन्तु इतिहास उनकी ओर से मौन है। छत्रसाल–प्राणनाथ मिलन का वर्णन छत्रसाल के दरबारी कवि गोरेलाल ने किया है। इतिहास में इस मिलन को उचित स्थान देना चाहिए। इस प्रकार बीतक में आए हुए स्थान व्यक्तिगत रूप तथा प्रमुख घटनाएँ इतिहास के आधार पर प्रामाणिक लोक चेतना सिद्ध होती हैं।

**निष्कर्ष :**

लोक–चेतना का जीवंत दस्तावेज महामति प्राणनाथ की यात्रा वृत्तांत मूल रूप से लोक–चेतना का जीवंत दस्तावेज हैं, जिसमें सामान्य जन का धार्मिक विश्वास, आर्थिक विषमता, जाति.भेद और धार्मिक अहंकार के विरुद्ध जागृति बहुत ही स्पष्ट रूप में व्यक्त होती है। समन्वयवादी धार्मिक लोक.चेतना उनकी यात्राएँ जागनी अभियान के रूप में हिंदू–मुस्लिम समन्वय, जाति–भेद मिटाने और धार्मिक एकता की लोक–चेतना को केंद्र में रखती हैं, जिसने प्रणामी समाज को न केवल एक संप्रदाय बल्कि एक समाज–सुधारक आंदोलन के रूप में स्थापित किया। ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिक लोक–स्मृति बीतक में वर्णित स्थानों, घटनाओं और व्यक्तियों को बहुत–सी ऐतिहासिक घटनाओं से मिलाकर देखने पर यह सिद्ध होता है कि महामति की यात्रा–कथा केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिक लोक.चेतना की अभिव्यक्ति है, जिसमें राजनीतिक आक्रमण, धार्मिक दबाव और सामाजिक विरोधों की झलक है। भाषा–स्तर पर लोक–चेतना लालदास द्वारा रचित बीतक में प्रयुक्त 17वीं शताब्दी की खड़ी बोली और विविध स्थानीय शब्दों के मिश्रण ने लोक–भाषा को धार्मिक विवरणों के साथ जोड़कर एक ऐसा दस्तावेज सृजित किया है, जो न केवल आध्यात्मिक लेकिन सामाजिक–भाषाई लोक. चेतना का भी प्रतिनिधित्व करता है।

**शोध–विषय की वर्तमान प्रासंगिकता :**

इस शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि महामति प्राणनाथ की यात्रा वृत्तांत लोक–चेतना अध्ययन, समाज–सुधार विचार और धर्म–समन्वयवादी विमर्श के लिए एक बहुत ही उपयोगी तथ्यात्मक व सांस्कृतिक स्रोत हैं, जिसे आधुनिक हिंदी साहित्य व इतिहास अध्ययन में और गहन रूप से अपनाया जाना चाहिए।

**संदर्भ सूची :**


1. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 96।
2. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 17।
3. बृजभूषण, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2011 पृष्ठ 13,
4. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 208
5. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 18
6. जयसवाल, डॉ शिवमंगल राम, जागनी का शंखनाद, श्री प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2017, पृष्ठ 123।
7. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 20।
8. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 314।
9. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 23।
10. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022,. पृष्ठ 510।
11. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 572,
12. वहीं पृष्ठ 596,
13. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 20।
14. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 142।
15. स्वामी लाल दास, बीतक, से प्राणनाथ मिशन दिल्ली, 2022, पृष्ठ 98।


9754856865

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
Bohal Shodh Manjusha
April 2026
ISSN : 2395-7115
Page No. : 46-53
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# हिन्दी प्रदेश की बोलियाँ, उपभाषाएँ तथा जनजातीय भाषाएँ : एक अध्ययन

**कपिल कुमार**, शोधार्थी
**डॉ. नीलम राणा,** असि. प्रोफेसर,
जनता वैदिक कॉलेज, बड़ौत, बागपत।

**शोध सारांश :**

हिन्दी विश्व की एक प्रमुख भाषा है एवं भारत की राजभाषा है। केन्द्रीय स्तर पर भारत में दूसरी आधिकारिक भाषा अंग्रेजी है। यह हिंदुस्तानी भाषा की एक मानकीकृत रूप है जिसमें संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग अधिक है और अरबी–फारसी शब्द कम हैं। हिंदी संवैधानिक रूप से भारत की राजभाषा और भारत की सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। हालांकि, हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं है, क्योंकि भारत के संविधान में किसी भी भाषा को ऐसा दर्जा नहीं दिया गया था। प्रत्येक भाषा का विकास बोलियों से ही होता है। जब बोलियों के व्याकरण का मानकीकरण हो जाता है और उस बोली के बोलने या लिखने वाले इसका ठीक से अनुकरण करते हुए व्यवहार करते हैं तथा वह बोली भावाभ्यक्ति में इतनी सक्षम हो जाती है कि लिखित साहित्य का रूप धारण कर सके तो उसे भाषा का स्तर प्राप्त हो जाता है। किसी बोली का महत्व इस बात पर निर्भर करता है कि सामाजिक व्यवहार और शिक्षा व साहित्य में उसका क्या महत्व है। अनेक बोलियों मिलकर किसी एक भाषा को समृद्ध करती है। इसी प्रकार एक समृद्ध भाषा अपनी बोलियों को समृद्ध करती है। अतः कहा जा सकता है कि भाषा व बोलियों परस्पर एक दूसरे को समृद्ध करते हैं।

**मुख्य शब्द :–** आधिकारिक, राजभाषा, मानकीकरण, भावाभिव्यक्ति, शिक्षा, समृद्ध।

**प्रस्तावना :–**

भाषा वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त करते है और इसके लिये हम वाचिक ध्वनियों का उपयोग करते हैं। भाषा मुख से उच्चारित होनेवाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह है जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है। किसी भाषा की सभी ध्वनियों के प्रतिनिधि स्वन एक व्यवस्था में मिलकर एक सम्पूर्ण भाषा की अवधारणा बनाते हैं। व्यक्त नाद की वह समष्टि जिसकी सहायता से किसी एक समाज या देश के लोग अपने मनोगत भाव तथा विचार एक दूसरे पर प्रकट करते हैं। मुख से उच्चारित होने वाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है। बोली। जबान। वाणी। विशेषकर इस समय सारे संसार में प्रायः हजारों प्रकार की भाषाएँ बोली जाती है जो साधारणतः अपने भाषियों को छोड़ और लोगों की समझ में

नहीं आतीं। अपने समाज या देश की भाषा तो लोग बचपन से ही अभ्यस्त होने के कारण अच्छी तरह जानते हैं, पर दूसरे देशों या समाजों की भाषा बिना अच्छी तरह नहीं आती। भाषाविज्ञान के ज्ञाताओं ने भाषाओं के आर्य, सेमेटिक, हेमेटिक आदि कई वर्ग स्थापित करके उनमें से प्रत्येक की अलग अलग शाखाएँ स्थापित की हैं और उन शाखाकों के भी अनेक वर्ग उपवर्ग बनाकर उनमें बड़ी बड़ी भाषाओं और उनके प्रांतीय भेदों, उपभाषाओं अथाव बोलियों को रखा है। जैसे हमारी हिंदी भाषा भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषाओं के आर्य वर्ग की भारतीय आर्य शाखा की एक भाषा हैय और ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेलखंडी आदि इसकी उपभाषाएँ या बोलियों हैं। प्रास पास बोली जाने वाली अनेक उपभाषाओं या बोलियों में बहुत कुछ साम्य होता हैं और उसी साम्य के आधार पर उनके वर्ग या कुल भी है फिर भी भाषा का तक बरा कारण भाषा का, भारतीय वैचारिक आभ्यंतर नहीं वह सामाजिक बिना मानुष से विच्छिन्न की भाषाएं छोड़ और देश की अच्छी तरह बिना भाषाओं और उन बड़ी बड़ी बोलियों व भाषाओं व है या कुल भाषिक संबंध स्थापित किए जाते हैं।

यही बात बड़ी बड़ी भाषाओं में भी है जिनका पारस्परिक साम्य उतना अधिक तो नहीं, पर फिर भी बहुत कुछ होता है। संसार की सभी बातों की भाँति भाषा का भी मनुष्य की आदिम अवस्था के अव्यक्त नाद से अब तक बराबर विकास होता आया हैं और इसी विकास के कारण भाषाओं में सदा परिवर्तन होता रहता है।भारतीय आर्यों की वैदिक भाषा से संस्कृत और प्राकृततों का. प्राकृतों से अपभ्रशों का और अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है। सामान्यतः भाषा को वैचारिक आदान–प्रदान का माध्यम कहा जा सकता है। भाषा आभ्यंतर अभिव्यक्ति का सर्वाधिक विश्वसनीय माध्यम है। यही नहीं वह हमारे आभ्यंतर के निर्माण, विकास, हमारी अस्मिता, सामाजिक–सांस्कृतिक पहचान का भी साधन है। भाषा के बिना मनुष्य सर्वथा अपूर्ण है और अपने इतिहास तथा परम्परा से विच्छिन्न है। इस समय सारे संसार में प्रायः हजारों प्रकार की भाषाएँ बोली जाती हैं जो साधारणतः अपने भाषियों को अच्छी तरह जानते हैं, पर दूसरे देशों या समाजों की भाषा भाषाओं के आर्य, सेमेटिक, हेमेटिक आदि कई वर्ग स्थापित करके उनमें से प्रत्येक की अलग अलग शाखाएँ स्थापित की है छोड़ और लोगों की समझ में नहीं आतीं। अपने समाज या देश की भाषा तो लोग बचपन से ही अभ्यस्त होने के कारण बिना अच्छी तरह सीखे नहीं आती। भाषाविज्ञान के ज्ञाताओं ने और उन शाखाओं के भी अनेक वर्ग–उपवर्ग बनाकर उनमें बड़ी बड़ी भाषाओं और उनके प्रांतीय भेदों, उपभाषाओं अथवा बोलियों को रखा है। जैसे हिंदी भाषा भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषाओं के आर्य वर्ग की भारतीय आर्य शाखा की एक भाषा और ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेलखंडी आदि इसकी उपभाषाएँ या बोलियों हैं। पास पास बोली जाने वाली अनेक उपभाषाओं या मोनियों में बहुत कुछ सामा होता है और उसी साम्य के आधार पर उनके पुर्नकाल स्थापित किए जाते हैं। यही बात बही बडी भाषाओं में भी है जिनका पारस्परिक साम्य उतना अधिक तो नहीं, पर फिर भी बहुत कुछ होता है। संसार की नमी बातों की भांति भी मनुष्य की आदिमवस्था के अव्यक्त नाद से अब तक बराबर विकास होता आया है और इसी विकास के कारण भाषाओं में सदा परिवर्तन होता रहता है।

भारतीय आर्यों की वैदिक भाषा से संस्कृत और प्राकृतों का प्राकृतों से अपभ्रंश और अपभ्रशों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है। प्रायः भाषा को लिखित रूप में व्यक्त करने के लिये लिपियों की सहायता लेनी पड़ती है। भाषा और लिपि माघ व्यक्तीकरण के दो अभिन्न पहलू हैं। एक भाषा कई लिपियों में लिखी जा सकती है और दो या अधिक भाषाओं की एक ही लिपि हो सकती है। उदाहरणार्थ पंजाबी गुरुमुखी तथा शाहमुखी

दोनों में लिखी जाती है जबकि हिन्दी, मराती, संस्कृत, नेपाली इत्यादि सभी देवनागरी में लिखी जाती है। माषा का जन्म पहले हुआ और उसकी सार्वभौमिकता और एकात्मकता के लिए लिपि का आविष्कार समय हुआ। बोली या भाषा की सही–सही अभिव्यक्ति की कसौटी ही लिपि की सार्थकता है। प्रतिलेखन और लिप्यांतरण के दृष्टिकोण से देवनागरी लिपि अन्य उपलब्ध लिपियों से बहुत ऊपर है। नीमन और फारसी लिपियां तो इसके समक्ष कहीं भी नहीं हस्ती। जहां तक देवनागरी में जटिलता की दुहाईक प्रश्न है मात्र समझाने के लिए रोमन में 26 अधर है। वास्तव में यदि स्माल और कॅपिटल आदि पर विचार करें ती ये 26–4–104 अठारह बनते हैं, जो सर्वाधिक है और इतनी संख्या होने पर भी हजी बोला जाए वहीं लिखा जाएर उक्ति पर खरे नहीं उतरते जबकि देवनागरी लिपि में आप जो सोचती है जो बोलते हैं या जो बाहते है वही लिखकर वही पड़ भी सकते हैं। है किसी अन्य लिपि में यह विशेषता? जबकि देवनागरी विश्व की किसी भी भाषा में जो बोला जाए वही निरख सकने में पूर्णतया सक्षम है। वह भी तब जब इसमें मात्र 22 अनुस्वर र (14) स्वर और 38 व्यंजन) है।

**उपभाषा –**

अगर किसी बोली में साहित्य रचना होने लगती है और क्षेत्र का विकास हो जाता है तो यह बोली न रहकर उपभाषा बन जाती है। बोली एक छोटे क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा बोली बहराती है। बोली में साहित्य रचना नहीं होती है। हिन्दी की अनेक बोलियों (उपभाषाएँ) है. मायत में कुल 18 बोलियों है. जिनमें अवधी, ब्रजभाषा, कन्नौजी, मुंदेली. बवेली, हढ़ौती भोजपुरी हरयाणवी, राजस्थानी छत्तीसगढ़ी मालवी नागपुरी खोरठा पंचपरगनिया, कुनाउँनी मगही आति प्रमुख हैं। इनमें से कुछ में अत्यंत उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना हुई है। ऐसी बोलियों में ब्रजभाषा और अवधी प्रमुख है। यह बोलियों हिन्दी की विविधता है और उसकी शक्ति भी। वे हिंदी और हिन्दी की जड़ों को गहरा बनाती हैं। हिन्दी की बोलियों और उन बोलियों की उपबोलियों हैं जो न केवल अपने में एक बड़ी परंपरा, इतिहास, सभ्यता को समेटे हुए हैं वरन स्वतंत्रता संग्राम, जनसंघर्ष, वर्तमान के बाजारवाद के खिलाफ भी उसका रचना संसार सचेत है। मोटे तौर पर हिंद (भारत) की किसी भाषा को हिंदी कहा जा सकता है। अंग्रेजी शासन के पूर्व इसका प्रयोग इसी अर्थ में किया जाता था। पर वर्तमानकाल में सामान्यतः इसका व्यवहार उस विस्तृत भूखंड की भाषा के लिए होता है जो पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर पश्चिम में अंबाला,उत्तर में शिमला से लेकर नेपाल की तराई, पूर्व में भागलपुर–दक्षिण पूर्व में रायपुर तथा दक्षिण–पश्चिम में खंडवा तक फैली हुई है। हिंदी के मुख्य दो भेद हैं पश्चिमी हिंदी तथा पूर्वी हिंदी।

**पश्चिमी हिन्दी :**

साहित्य रचना होने है तो वह बोली ने पश्चिमी हिंदी का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके अंतर्गत पाँच बोलियों है खड़ी बोली, हरियाणवी, ब्रज, कन्नौजी और बुंदेली। खड़ी बोली अपने मूल रूप में मेरठ, रामपुर, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, बागपत के आसपास बोली जाती है। इसी के आधार पर आधुनिक हिंदी और उर्दू का रूप खड़ा हुआ। बांगरू को जाटू या हरियाणवी भी कहते हैं। यह पंजाब के दक्षिण पूर्व में बोली जाती है। कुछ के ठेठ शब्दों के साथ अन्य प्रांतों के शब्दों और प्रयोगों का भी अच्छे कवि हुए हैं जिनकी काव्यभाषा पर बुंदेली का प्राय है। विद्वानों के अनुसार बांगरू खड़ी बोली का ही एक रूप है जिसमें पंजाबी और राजस्थानी का मिश्रण है। ब्रजभाषा मथुरा के आसपास ब्रजमंडल में बोली जाती है। हिंदी साहित्य के मध्ययुग में ब्रजभाषा में उच्च कोटि का काव्य निर्मित हुआ। इसलिए इसे बोली न कहकर आदरपूर्वक भाषा

कहा गया। मध्यकाल में यह बोली संपूर्ण हिंदी प्रदेश की साहित्यिक भाषा के रूप में मान्य हो गई थी। पर साहित्यिक ब्रजभाषा में बज ग्रहण है। कन्नौजी गंगा के मध्य दोआब की बोली है। इसके एक ओर ब्रजमंडल है और दूसरी ओर अवधी का क्षेत्र। यह ब्रजभाषा से इतनी मिलती जुलती है कि इसमें रचा गया जो थोडा बहुत साहित्य है यह ब्रजभाषा का ही माना जाता है। बुंदेली बुंदेलखंड की उपभाषा है।

**पूर्वी हिन्दी :–**

पूर्वी हिंदी की तीन शाखाएँ है अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी अवधी अर्धमागधीकृत प्रकृत की परपरा में है। यह अंक में बोली जाती है। इसके दो भेद हैं पूर्वी अवधी और पश्चिमी अवधी। अवधी को बैसवाड़ी भी कहते हैं। तुलसी के रामचरितमानस में अधिकांशतक पश्चिमी अफ्ती मिलती है और जायसी के पदमावत में पूर्वी ली। बोली बघेलखंड में प्रचलित है। यह अवधी का ही एक दक्षिणी रूप है। छत्तीसगढी पलामू (झारखण्ड) की सीमा से लेकर दक्षिण में बस्तर तक और पश्चिम में बघेलखंड की सीमा से उडीसा की सीमा तक कैले हुए भूभाग की बोली है। इसमें प्राचीन साहित्य नहीं मिलता। वर्तमान काल में कुछ लोकसाहित्य रचा गया है। हिंदी प्रदेश की तीन उपभाषाएँ और है बिहारी, राजस्थानी और मेवाड़ी हिंदी।

**बिहारी :–**

बिहारी की तीन शाखाएँ है भोजपुरी, मगही और मैथिली। बिहार के एक कस्बे भोजपुर के नाम पर भोजपुरी बोली का नामकरण हुआ। पर भोजपुरी का प्रसार बिहार से अधिक उत्तर प्रदेश में है। बिहार के शाहाबाद, चपारन और सारन जिले से लेकर गोरखपुर तथा बनारस कमिश्नरी तक का क्षेत्र भोजपुरी का है। भोजपुरी पूर्वी हिंदी के अधिक निकट है। हिंदी प्रदेश की बोलियों में भोजपुरी बोलनेवालों की संख्या सबसे अधिक है। इसमें प्राचीन साहित्य तो नहीं मिलता पर ग्रामगीतों के अतिरिक्त वर्तमान काल में कुछ साहित्य रचने का प्रयत्न भी हो रहा है। मगही के केंद्र पटना और गया है। इसके लिए कैथी लिपि का व्यवहार होता है। पर आधुनिक मगही साहित्य मुख्यतः देवनागरी लिपि में लिखी जा रही है। मगही का आधुनिक साहित्य बहुत समृद्ध है और इसमें प्राय सभी विधाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। मैथिली एक स्वतंत्र भाषा है जो संस्कृत के करीब होने के कारण हिंदी से मिलती जुलती लगती है। परन्तु, मैथिली हिंदी से अधिक बांग्ला के निकट है। मैथिली गंगा के उत्तर में दरभंगा के आसपास प्रचलित है। इसकी साहित्यिक परंपरा पुरानी है। विद्यापति के पद प्रसिद्ध ही है। मध्ययुग में लिखे मैथिली नाटक भी मिलते हैं। आधुनिक काल में भी मैथिली का साहित्य निर्मित हो रहा है। मैथिली भाषा भारत और नेपाल के संविधान में राजभाषा के रूप में भी दर्ज है। नेपाल में दूसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा मैथिली है।

**राजस्थानी :–**

राजस्थानी का प्रसार पंजाब के दक्षिण में है। यह पूरे राजपूताने और मध्य प्रदेश के मालवा में बोली जाती है। राजस्थानी का संबंध एक ओर ब्रजभाषा से है और दूसरी ओर गुजराती से। पुरानी राजस्थानी को डिंगल कहते हैं। जिसमें चारणों का लिखा हिंदी का आरंभिक साहित्य उपलब्ध हैं। राजस्थानी में गद्य साहित्य की भी पुरानी परपरा है। राजस्थानी की चार मुख्य बोलियाँ या विभाषाएँ है मेवाती गालवी, जयपुरी और मारवाड़ी। मारवाड़ी का प्रचलन सबसे अधिक है। राजस्थानी के अंतर्गत कुछ विद्वान् भील को भी लेते हैं।

**पहाड़ी भाषा :–**

पहाड़ी उपभाषा राजस्थानी से मिलती जुलती हैं। इसका प्रसार हिंदी प्रदेश के उत्तर हिमालय के दक्षिणी भाग में नेपाल से शिमला एक है। इसकी तीन शाखाएँ है पूर्वी. मध्यवर्ती और पश्चिमी। पूर्वी पहाड़ी नेपाल की प्रधान भाषा है जिसे नेपाली और परबतिया भी कहा जाता है। मध्यवर्ती पहाड़ी और कुमायूँ और गढ़वाल में प्रचलित है। इसके दो भेद है कुमाउँनी और गढ़वाली। ये पहाडी उपभाषाएँ नागरी लिपि में लिखी जाती है। इनमें पुराना साहित्य नहीं मिलता। आधुनिक काल में कुछ साहित्य लिखा जा रहा है। कुछ विद्वान् पहाड़ी को राजस्थानी के अंतर्गत ही मानते हैं। पश्चिमी पहाडी हिमाचल प्रदेश में बोली जाती है। इसकी मुख्य उपबोलियों में मंडियाली कुल्लवी, चाम्बियाली, क्योंथली, कागडी, सिरमौरी, बघाटी और बिलासपुरी प्रमुख हैं।

**आदिवासी भाषाएँ :–**

आदिवासियों एवं वनों का धनिष्ठ सम्बंध है। हमारी संस्कृति मूलतः अरण्य संस्कृति रही है। वन एवं वन्य जीवों को यहीं के स्थानीय वनवासियों द्वारा अपने परिवार का अंग माना गया। वनवासी समाज द्वारा बनों में स्वंत्रतापूर्वक रहकर यहीं से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुये सदैव बनों को संरक्षित करने का कार्य किया है। विगत कुछ दशकों में आदिवासियों एवं वनों के बीच दूरी बढ़ी है। वे वनवासी जो बनों एवं वन्यजीवों के स्वाभांवितक मित्र थे. उन्हें वन का विरोधी मानते हुए उनके परम्परागत अधिकारों में कटौती की गई। हाल ही में भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जनजाति व अन्य पारम्परिक बनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006 के माध्यम से पुनः आदिवासियों को उनका पारम्परिक अधिकार दिलाने की दिशा में ठोस कदम उठाया गया। भारतीय उपमहाद्वीप में अलग–अलग भाषाई समुदायों की एक बड़ी संख्या है, जो कई बार एक आम भाषा और संस्कृति साझा करते हैं और फिर कई बार बोलियों में भारी अंतर पर खड़े होते हैं। यह पहले से ही स्वीकार किया जाता है कि महानगरीय और महानगरीय आबादी भाषा और संचार के तरीके का स्वदेशी परिष्कृत संस्करण रखती है।

हालांकि, इस संदर्भ में दिलचस्पी की बात यह है कि देश में जनजातियों और जनजातीय आबादी की भाषा के उपयोग का तरीका है। 2001 की भारतीय जनगणना के अनुसार, आदिवासी लोग राष्ट्र की कुल आबादी का 82 प्रतिशत है। आदिवासी लोग मूल रूप से भारत में रहने वाले एक आदिवासी समुदाय है जिनके पास अपने रिवाज और भाषाए हैं। अपने स्वयं के मधुर और तर्कसगत जीवन शैली के साथ, भारतीय आदिवासी अपने जीवन में एकात में रहते हैं। जैसे, यह लंबे समय से बहुत जिज्ञासा का विषय बना हुआ है और वे जिस तरह के दैनिक जीवन का नेतृत्व करते हैं उसके बारे में शोध या माण की शैली मी कार्यरत हैं। वास्तव में भारतीय आदिवासी भाषाए शायद दैनिक चर्चा का  सबसे प्रचलित विषय है, जिसमें सबसे पहले आदिवासी नृत्य और आभूषणों को मान्यता दी जाती है।

भारतीय जनजातीय भाषा को अनिवार्य रूप से लोक भाषाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें उनके स्वयं के कोई साहित्यिक विनिर्देश नहीं हैं और वे जातीय समूहों के लोगों द्वारा बोली जाती है जो अपेक्षाकृत पृथक समूहों में रहना पसंद करते हैं। भारतीय जनजातीय भाषाओं को केवल आदिवासी लोक द्वारा उपयोग की जाने वाली पारंपरिक भाषाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। भारत में आदिवासी समुदायों द्वारा उपयोग की जाने वाली भाषाएं वास्तव में काफी जटिल है, लेकिन फिर भी भारत के अतीत और लगभग

ओवरशेड महिमा के अनमोल अवशेष है। यह सटीक कारण है कि उन्हें गाने, किंवदंतियों और अन्य कहानियों के रूप में मौखिक रूप से संरक्षित किया जाता है। कुछ प्रमुख आदिवासी भाषा–भाषी समूह शामिल हैं : गारो जनजाति, चकमा जनजाति, नागा जनजाति, गोंड जनजाति, मिजो जनजाति, मुंडा जनजाति, संथाली जनजाति, खसिया जनजाति. उरांव जनजाति और मणिपुर जनजाति। भारत में प्रचलित कुछ आदिवासी भाषाएं अबुझमारिया, गारो, औरिया, त्संगला, सौराष्ट्र आदि है। गारो भाषा गाजे पहाडियों, मेघालय, त्रिपुरा, पश्चिमी असम और नागालैंड में और आसपास रहने वाले आदिवासी समुदायों द्वारा बोली जाती है। इस भाषा की कई बोलियों में मेगाम, चिसाक, अटॉन्ग आदि शामिल हैं। एक अन्य जनजातीय भाषा अबुझमारिया है जो बस्तर जिले के अबुझमार पहाडियों के लोगों द्वारा बॉली जाती है। हिल मारिया आदिवासी समुदाय अपने लोगों के साथ बातचीत करने के लिए अपने माध्यम के रूप में इस भाषा का उपयोग करता है। यह भाषा द्रविड़ भाषा परिवार की है।

सौराष्ट्र एक अन्य आदिवासी भाषा है जिसे पटनौली भी कहा जाता है। आंध्र प्रदेश के विभिन्न हिस्सों में रहने वाले आदिवासी समुदाय, कर्नाटक के कुछ हिस्सो, उत्तरी आर्कोट और चेन्नई इस भाषा में बोलते हैं। इन जनजातीय भाषाड़ों के अलाया, कुछ अन्य जनजातीय भाषाएँ है, जिनका नाम गादाबा है जो उड़ीसा के कोरापुट जिले के लोगों द्वारा बोली जाती है। अरिया मध्य प्रदेश के आदिवासी समुदायों और अरुणाचल प्रदेश के कुछ गांवों में बोली जाने वाली जंगला भाषा हैं। एक विकसित अतीत और प्रबुद्ध शैक्षिक हस्तक्षेम के कारण भारतीय जनजातीय भाषाएँ बहुत सुव्यवस्थित और व्यवस्थित हैं। गारो और चकमा भाषाओं में उनके उच्चारण के लिए थोडी चीनी संकेत है। गारो और माघ भाषाओं के बीच एक प्राथमिक समानता निहित है, क्योंकि दोनों जनज्कृतियों एक ही मूल की है। मुंडा, संथाली, कोल, खसिया, गारा और शुरुख भाषा परस्पर भाषाएं हैं। मुंडा और कुरुख को समान भाषा के रूप में माना जाता है, दोनों की वाक्य रचना और किया लगभग समान हैं। मुडा, संथाली और कोल पाएँ इंडो–आर्यन भाषाओं की तुलना में अधिक प्राचीन है ये आदिवासी भाषाएँ आगे ऑस्ट्रो–एशियाई, भारत–चीनी और धौनी–तिब्बती, तिब्बती–बर्मन या द्रविड परिवारों से संबंधित हैं।

जैसा कि ये आदिवासी समूह ज्यादातर उल्लेखित स्थानों से चले गए है. उन्होंने मुख्यतः उन राष्ट्रों से अपनी माषा को अपनाया है। भारत में सभी आदिवासी समुदायों की अपनी विशिष्ट भाषा है। भाषाविज्ञानियों ने भारत के सभी आदिवासी भाषाओं को मुख्यतः तीन भाषा परिवारों में रखा है। द्रविड आस्ट्रिक और चीनी तिब्बती। लेकिन कुछ आदिवासी भाषाए भारोपीय भाषा परिवार के अंतर्गत भी आती हैं। आदिवासी भाषाओं में भीली' बोलने वालों की संख्या सबसे ज्यादा है जबकि दूसरे नंबर पर 'गोंडी भाषा और तीसरे नंबर पर संताली भाया है।भारत की 114 मुख्य भाषाओं में से 22 को ही संविधान की आठवी अनुसूची में शामिल किया गया है। इनमें हाल–फिलहाल शामिल की गयी संताली और बोडो ही मात्र आदिवासी भाषाएं हैं। अनुसूची में शामिल संताली (0. 62). सिंधी, नेपाली, बोडो (सभी 0.25). मिताइ (0.15). डोगरी और संस्कृत भाषाएं एक प्रतिशत से भी कम लोगों द्वारा बोली जाती है। जबकि भीली (0.67), गोंडी (0.25), टुलु (0.19) और कुडुख 0.17 प्रतिशत लोगों द्वारा व्यवहार में लाए जाने के बाद भी आठवीं अनुसूची में दर्ज नहीं की गयी है। (जनगणना 2001) भारतीय राज्यों में एकमात्र झारखण्ड में ही 5 आदिवासी भाषाओं संताली, मुण्डारी, हो, कुडुख और बढ़िया को 2011 में द्वितीय राज्यभाषा का दर्जा प्रदान किया गया है।

**सांकेतिक तस्वीर :-**

भाषिक दृष्टि से भारत में आदिवाली भाषाओं के पांच प्रमुख भाषायी परिवार है : आस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवार : भारत का एक प्राचीन भाषा परिवार कोल है। कोल भाषा परिवार को आस्ट्रो एशियाटिक भी कहा जाता है। इसका अर्थ है कि दक्षिण पूर्वी एशिया के द्वीप समूहों से लेकर प्रशांत महासागर के छोटे बड़े द्वीपों को समेटते हुए आस्ट्रेलिया तक एक ही परिवार की भाषा बोली जाती है। यह आदिवासी भाषा प्ररिवार मुख्य रूप से भारत में झारखंड, छत्तीसगढ़ उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के ज्यादातर हिस्सों में बोली जाती है। सख्या की दृष्टि से इस परिवार की सबसे बड़ी भाषा संचौली या संताली है। इस परिवार की अन्य प्रमुख भाषाओं में हो. मुंवारी, खड़िया, सावरा इत्यादी प्रमुख भाषाएं है।

**३) चीनी–तिब्बती भाषा परिवार :** इस परिवार की व्यादातर भाषाए भारत के सांत उत्तर–पूर्वी राज्यों में बोली जाती है। जिनमें नगर, मिजो, म्हार, मणिपुरी, तांगबुल, वासी, दफलो संस्ओ आदि भाषाएं प्रमुख है।

**४) इविड़ भाषा परिवार :** दूसरा सबसे बड़ा भारत का परिवार है। इस परिवार की सदस्य गैर–आदिवासी भाषाएं ज्यादातर दक्षिण भारत में बोली जाती है। जिसमें तमिल, कन्नड़, मलयालम और तेलुगू भाषाएं हैं। परंतु द्रविड परिवार की आदिवासी भाषाएं पूर्वी, मध्य और दक्षिण तक के राज्यों में बोली जाती हैं। गोंडों की गोंडी, उरांव, किसान और धांगर समुदायों की कुडुख और पहाड़िया की मल्तो या मालतो द्रविड़ परिवार की प्रमुख आदिवासी भाषाएं है।

**क) अंडमानी भाषा परिवार :** जनसंख्या की दृष्टि से यह भारत का सबसे छोटा आदिवासी भाषाई परिवार है। इसके अंतर्गत अंडबार–निकाबोर द्वीप समूह की भाषाएं आती हैं, जिनमें अंडमानी, ग्रेड अंडमानी, ओंगे, जारवा आदि प्रमुख हैं।

**ख) भारोपीय आर्य भाषा परिवार :** भारत की की दो दो तिहार तिहाई से अधिक गैर–आदिवासी आबादी हिन्द आर्य भाषा भाष परिवार की कोई न कोई भाषा विभिन्न स्तरों पर प्रयोग करती है। जैसे, संस्कृत, हिन्दी, बांग्ला, गुजराती, कश्मीरी, डोगरी, पंजाबी, उड़िया, असमिया, मैथिली, भोजपुरी, मारवाडी, गढ़वाली, कोंकणी आदि भाषाएं। परंतु राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश आदि राज्यों के भीलों की वर्तमान भीली, मिलाला और वागड़ी इसी भारोपीय भाषा परिवार के अंतर्गत आती है।

**निष्कर्ष :-**

अगर हिन्दी भाषा की बोलियों और उपभाषा की बात करें तो हम पाते हैं कि उत्तर भारत की भाषाओं में बोली निरंतरता है जिसका अर्थ है कि जैसे–जैसे आप किसी भी दिशा में इसे ले जाते हैं, स्थानीय भाषा धीरे–धीरे बदलती है। हिन्दी संस्कृत प्राकृत, फारसी और कुछ अन्य भाषाओं के विभिन्न संयोजनों से निर्मित भाषाओं का समूह है। उत्तर भारतीय क्षेत्रों पर शासन करने वाले प्रमुख राज्यों ने अलग–अलग समय पर अलग–अलग भाषाओं को चुना और विभिन्न राज्यों को अपने ही राज्य के लिए एक पहचान बनाने के लिए चुना। इस पूरी राजनीतिक परिस्थिति ने मिश्रित और नई भाषाओं को विकसित करने के लिए संयुक्त भाषाओं का सर्वश्रेष्ठ चयन किया और हिन्दी उनके बीच एक है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :-**

1. हिंदी : उद्भव, विकास और रूप : डॉ. हरदेव बाहरी प्रकाशक : किताब महल, 1965 इलाहाबाद।

2. वहीं, पृष्ठ संख्या 92
3. वहीं, पृष्ठ संख्या 103
4. वहीं, पृष्ठ संख्या 142
5. हिंदी भाषा का संक्षिप्त इतिहास : डॉ. भोलानाथ तिवारी प्रकाशक : किताब महल, 1960 इलाहाबाद।
6. भारतीय जनजातीय भाषाएँ : जनगणना / सरकारी रिपोर्ट्स (2001 जनगणना डेटा भारत सरकार)
7. वहीं, पृष्ठ संख्या 56
8. वहीं, पृष्ठ संख्या 107
9. हिंदी और उसकी उपभाषाओं का स्वरूप : अंबा सुमन प्रसाद राजकमल प्रकाशन दिल्ली।
10. भारतीय भाषा परिवार : सुनीति कुमार चटर्जी, राजकमल प्रकाशन, 1976 दिल्ली।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 54-57

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# A Comparative Study of Job Stress among Physical Education Teachers of Rajasthan

**Dr. Gajender Singh Saroha,** Research Supervisor
**Kailash Chand Haritwal,** Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

**Abstract :**

This study investigates the level of occupational stress and job satisfaction among physical education teachers working in government and non-government schools in Rajasthan. In the modern educational environment, teachers face increasing professional demands, administrative pressure, and changing institutional expectations, which significantly influence their psychological well-being and job performance. The present study adopted a descriptive survey method and collected data from 400 physical education teachers (200 government and 200 non-government). Standardized questionnaires measuring stress and job satisfaction were used. Statistical tools such as descriptive statistics, Principal Component Analysis (PCA), and Confirmatory Factor Analysis (CFA) were applied using SPSS and AMOS software. The findings reveal that most teachers experience moderate to high stress due to workload, lack of facilities, and administrative pressure. However, job satisfaction levels remain moderate. No significant difference was found between government and private teachers in most variables, except work relationships. The study highlights the need for improved working conditions, administrative support, and professional development opportunities to reduce stress and enhance job satisfaction.

**Keywords :**

Physical Education, Occupational Stress, Job Satisfaction, Government Schools, Private Schools, Rajasthan, Teachers, Work Environment, Educational Stress, Comparative Study

## 1. Introduction :

Education plays a vital role in shaping human behavior and societal development. It is a continuous process that enhances knowledge, skills, and values necessary for personal and social growth. Among various fields of education, physical education holds a unique position as it contributes

to the holistic development of individuals—physically, mentally, socially, and emotionally.

Physical education is not merely confined to physical activities but also involves the development of discipline, leadership, teamwork, and emotional stability. However, despite its importance, physical education is often undervalued in the educational system, particularly in developing regions such as Rajasthan.

In the present era of technological advancement and competitive lifestyles, stress has become an unavoidable aspect of professional life. Teachers, especially physical education teachers, face multiple responsibilities including classroom teaching, field training, event organization, and administrative duties. These responsibilities often lead to occupational stress, affecting their job satisfaction and overall performance.

Stress can be defined as the body's response to external demands or pressures. While a moderate level of stress (eustress) can enhance performance, excessive stress (distress) can lead to physical and psychological problems. Job satisfaction, on the other hand, refers to the level of contentment an individual feels towards their job.

This study focuses on analyzing and comparing stress and job satisfaction among physical education teachers in government and non-government schools in Rajasthan.

**2. Review of Literature :**

Previous studies have highlighted that teacher stress is influenced by workload, lack of resources, administrative pressure, and poor working conditions. Research by Cranwell-Ward and Abbey (2005) emphasized that stress arises due to imbalance between job demands and coping ability.

Studies also indicate that job satisfaction is closely related to factors such as salary, promotion opportunities, work environment, and interpersonal relationships. Teachers with higher job satisfaction tend to perform better and contribute positively to organizational growth.

However, limited research has been conducted specifically on physical education teachers in Rajasthan, which justifies the need for this study.

**3. Statement of the Problem :**

"A Comparative Study of Problems and Stress Faced by Physical Education Teachers During Their Job with Reference to Rajasthan State."

**4. Objectives of the Study :**

- To analyze the level of stress among physical education teachers.
- To evaluate job satisfaction levels among teachers.
- To compare stress levels between government and non-government teachers.
- To compare job satisfaction between both groups.

- To examine the relationship between stress and job satisfaction.

**5. Hypotheses :**

- There is no significant difference in stress levels between government and non-government teachers.
- There is no significant difference in job satisfaction between both groups.
- There is a significant relationship between stress and job satisfaction.

**6. Methodology**

**Research Design :**

Descriptive survey method was used.

**Sample :**

- Total : 400 teachers
- Government : 200
- Non-Government : 200

**Tools Used :**

- Teacher Stress Questionnaire (34 items)
- Job Satisfaction Scale (17 items)

**Data Analysis :**

- Descriptive Statistics
- Principal Component Analysis (PCA)
- Confirmatory Factor Analysis (CFA)

**7. Results and Discussion :**

The results indicate that :

Teachers face high stress due to :

- Workload
- Time pressure
- Lack of facilities
- Administrative burden

Moderate satisfaction was observed in :

- Work environment
- Job security
- Work relationships

No significant difference between government and private teachers in :

- Stress

- Job satisfaction

Significant difference found only in :

- Work relationships

A negative correlation exists between stress and job satisfaction :

- Higher stress ? Lower satisfaction

**8. Findings :**

- Physical education teachers experience moderate to high stress.
- Job satisfaction levels are moderate.
- Government and private teachers show similar stress patterns.
- Work relationships differ significantly between groups.
- Administrative support is a key factor influencing stress.

**9. Conclusion :**

The study concludes that physical education teachers in Rajasthan face considerable occupational stress due to increasing job demands and insufficient institutional support. Although job satisfaction is moderate, it is negatively affected by stress levels.

Improving working conditions, providing better facilities, and enhancing administrative support can significantly reduce stress and improve job satisfaction.

**10. Recommendations :**

- Improve infrastructure and sports facilities in schools.
- Provide regular training and professional development programs.
- Reduce administrative workload.
- Encourage supportive leadership and positive work culture.
- Conduct stress management workshops for teachers.

**11. References (Sample APA Style) :**


- Cranwell-Ward, J., & Abbey, A. (2005). *Organizational Stress*. Palgrave Macmillan.
- Bucher, C. A. (1994). *Physical Education and Health in Elementary Schools*. Macmillan.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 58-60

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# A Comparative Study of Anthropometric Characteristics of Softball Players in Rajasthan

**Dr. Shipra Chakraborty,** Research Supervisor
**Rajendra Kumar Palsaniya,** Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

**Abstract :**

The present study aimed to analyze and compare the anthropometric characteristics of softball players in Rajasthan. A total of 100 male softball players aged between 17–25 years were selected randomly. Anthropometric variables such as height, weight, arm span, leg length, hand length, biceps, triceps, shoulder width, waist circumference, chest circumference, and hip circumference were measured using standardized tools. Statistical analysis was performed using SPSS (Version 22), and the independent t-test was applied at a 0.05 level of significance. The findings revealed that most anthropometric variables showed no significant difference among softball players, except shoulder width and hand length, which demonstrated significant variation. The results indicate that softball players possess relatively similar body structures, suggesting uniformity in physical requirements for the sport. The study highlights the importance of anthropometric profiling in talent identification and training program design.

**Keywords :**

Anthropometry, Softball, Body Composition, Players, Rajasthan, Physical Fitness, Sports Science, Talent Identification, Measurement, Performance

## 1. Introduction :

Softball is a popular team sport similar to baseball, played on a smaller field with a larger ball. It is widely practiced at school, college, and competitive levels. The performance of athletes in softball depends not only on skill but also on physical characteristics such as body size, shape, and composition. Anthropometry plays a crucial role in sports performance as it helps in understanding the physical suitability of players for a particular sport. Variables like height, arm span, and body mass influence throwing, batting, and fielding abilities in softball.

In Rajasthan, softball is developing rapidly, but limited research is available regarding players' physical profiles. Therefore, this study attempts to analyze and compare anthropometric characteristics of softball players.

**2. Objectives of the Study :**

- To examine anthropometric variables of softball players.
- To compare selected anthropometric characteristics of softball players.

**3. Hypothesis :**

H1 : There is no significant difference in anthropometric variables of softball players.

**4. Methodology**

**Sample :**

- 100 male softball players
- Age : 17–25 years
- Random sampling method

**Variables :**

- Height
- Weight
- Arm Span
- Leg Length
- Hand Length
- Biceps
- Triceps
- Shoulder Width
- Waist, Chest, Hip Circumference

**Tools Used :**

- Measuring Tape
- Standard Anthropometric Procedures

**Statistical Technique :**

- Mean & Standard Deviation
- Independent t-test
- Level of significance : 0.05

**5. Results and Discussion :**

The analysis revealed that most anthropometric variables such as height, weight, arm span, leg length, biceps, triceps, and body circumferences did not show significant differences among players

($p > 0.05$).

However, **shoulder width and hand length showed significant differences ($p < 0.05$)**, indicating their potential importance in softball performance.

The findings suggest that softball players generally share similar body characteristics, which may be essential for balanced performance in the sport.

## 6. Conclusion :

The study concludes that anthropometric characteristics among softball players are largely similar, indicating uniform physical demands of the sport. However, specific variables like shoulder width and hand length may influence performance and should be considered during player selection and training.

## 7. Suggestions :

- Coaches should consider anthropometric factors during talent identification
- Training programs should be individualized
- Similar studies should be conducted on female players.

## 8. Reference :


- Abu Elmagd, M., Sami, M., El-Marsafawi, T., Al Jadaan, O., & Mosa, A. H. (2016). The impact of socioeconomic status on students' effective participation in physical activity: A cross-sectional study at Ras Alkhaimah Medical and Health Sciences University, UAE.
- Ajay, C. S., Payal, C., & Singh, D. (2018). Studying the impact of a six-week yogic activity program on anger in air pistol shooters.
- Altenberger, H., Haag, H., & Holzweg, M. (2004). Olympic Idea-Bewegungs-Spiele.
- Arumugam, J. E. G. A. N. A. N., & Shaju, F. R. A. N.K.L.I.N. (2019).
- Exploring the relationship between anxiety and core muscle stability in rifle shooters' performance. International Journal of Research and Analytical Reviews, 6(2), 930–933.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha
April 2026

ISSN : 2395-7115
Page No. : 61-64

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# वर्तमान समय में सोशल मीडिया द्वारा ब्रांडिंग को दी जाने वाली नई दिशाएं और आकार : एक विस्तृत अकादमिक अध्ययन

**Dr. Sushil Kumar Daiya,** Research Supervisor,
ASSISTANT PROFESSOR (Commerce and Management)
**Hema,** Researcher
Commerce, Tantia University, Sri Ganganagar.

**शोध सारांश :**

आधुनिक डिजिटल अर्थव्यवस्था में, सोशल मीडिया संचार का माध्यम होने के साथ–साथ ब्रांड निर्माण और वैश्विक वाणिज्य का मुख्य आधार बन चुका है। वर्ष 2023–2024 के परिदृश्य में, ब्रांडिंग की पारंपरिक रणनीतियां बदल रही हैं। यह शोध पत्र इस बात का विश्लेषण करता है कि कैसे संवर्धित वास्तविकता (AR), आभासी वास्तविकता (VR) और सूक्ष्म–प्रभावक (Micro-Influencer) नेटवर्क ने ब्रांडिंग को नए आयाम दिए हैं। इसके अतिरिक्त, टियर–2 और टियर–3 शहरों में सांस्कृतिक प्रामाणिकता और स्थानीयकृत सामग्री के माध्यम से ब्रांड इक्विटी के विकास का परीक्षण किया गया है। सैद्धांतिक दृष्टिकोण से, यह अध्ययन उन्नत मॉडलों का उपयोग करके ब्रांडिंग के आधुनिक स्वरूप को परिभाषित करता है और प्रमुख भारतीय ब्रांडों के केस अध्ययनों के माध्यम से इसके व्यावहारिक अनुप्रयोग को रेखांकित करता है।

**प्रस्तावना और समकालीन डिजिटल परिदृश्य :**

वर्ष 2023–2024 के डिजिटल परिदृश्य में ब्रांडिंग तेजी से विकसित हो रही है। आज के उपभोक्ता विज्ञापनों को एक स्थिर संदेश के रूप में नहीं देखते, बल्कि वे ब्रांड से इंटरैक्टिव संचार की अपेक्षा करते हैं। उपभोक्ता थकान के कारण ब्रांड प्रबंधकों को अपनी रणनीतियों का पुनर्मूल्यांकन करने और 'सोशल–फर्स्ट' (Social-First) प्रतिमान को अपनाने के लिए विवश होना पड़ा है।

सोशल मीडिया मार्केटिंग रणनीतियों में अब वीडियो सामग्री, प्रभावकों (Influencers) के साथ सहयोग और उपयोगकर्ता–जनित सामग्री (UGC) का एकीकरण शामिल है। डिजिटल मार्केटिंग में ब्रांड की सफलता केवल दृश्यता पर निर्भर नहीं है, बल्कि अब इस बात पर निर्भर करती है कि वह सांस्कृतिक और सामाजिक

प्रवृत्तियों के अनुकूल कितनी तेजी से ढल सकता है।

**सैद्धांतिक दृष्टिकोण और वैचारिक ढांचा :**

ब्रांडिंग के आधुनिक स्वरूप को समझने के लिए 'AX-BX-CX-DX' पारिस्थितिकी तंत्र एक प्रासंगिक और व्यापक ढांचा प्रस्तुत करता है। यह मॉडल मुख्य रूप से चार स्तंभों पर आधारित है : श्रोता धारणा (AX), ब्रांड पहचान (BX), ग्राहक अनुभव (CX) और डिजिटल अनुभव (DX)। इन आयामों के बीच गतिशील प्रतिक्रिया लूप एक मानव–केंद्रित ब्रांड प्रणाली को जन्म देते हैं।

इसके अतिरिक्त, 'एलाबोरेशन लाइक्लीहुड मॉडल' यह स्पष्ट करता है कि कैसे ब्रांड प्रामाणिक और इंटरैक्टिव सामग्री के माध्यम से संज्ञानात्मक जुड़ाव बढ़ाकर ब्रांड इक्विटी विकसित कर सकते हैं। शीर्ष मार्केटिंग ब्रांड अपने संदेशों में विशिष्ट पैटर्न का उपयोग करते हैं जो विभिन्न प्लेटफार्मों पर ब्रांड पहचान को सुसंगत बनाए रखते हैं।

**तकनीकी प्रतिमान विस्थापन : इमर्सिव तकनीकें :**

2023–2024 तक आते–आते, इमर्सिव तकनीकों (AR/VR) ने उपभोक्ता व्यवहार और ब्रांडिंग रणनीतियों के बीच एक गहरा संबंध स्थापित कर लिया है। संवर्धित वास्तविकता (AR) ने 'वर्चुअल ट्राई–ऑन' (VTO) जैसी सुविधाओं के माध्यम से ऑनलाइन खरीदारी में उत्पाद के प्रति विश्वास की कमी को दूर किया है।

उपभोक्ता अब स्थिर ई–कॉमर्स पृष्ठों से दूर जा रहे हैं और 'विजुअल ट्रायल' की ओर रुख कर रहे हैं। सौंदर्य प्रसाधन और परिधान क्षेत्रों में AR और VR तकनीकों ने स्थिर विज्ञापनों को यादगार ब्रांड अनुभवों में बदल दिया है। इन तकनीकों के उपयोग से ग्राहकों के क्रय निर्णय में आत्मविश्वास बढ़ा है और खरीदारी प्रक्रिया की बाधाएं कम हुई हैं, जिससे उत्पाद वापसी दर में भी भारी गिरावट दर्ज की गई है।

**इन्फ्लुएंसर मार्केटिंग का संस्थागतकरण :**

सोशल मीडिया ब्रांडिंग में एक बड़ा संरचनात्मक बदलाव इन्फ्लुएंसर (प्रभावक) मार्केटिंग के स्वरूप में आया है। अब यह केवल ब्रांड जागरूकता तक सीमित न रहकर एक परिपक्व डिजिटल रणनीति बन गई है।

इस परिदृश्य में सबसे महत्वपूर्ण बदलाव यह है कि ब्रांड अब मैक्रो (Macro) या सेलिब्रिटी इन्फ्लुएंसर्स पर अपनी निर्भरता कम कर रहे हैं और 'नैनो' (Nano) तथा 'माइक्रो' (Micro) रचनाकारों की ओर मुड़ रहे हैं। ये छोटे रचनाकार उच्च प्रामाणिकता और विशिष्ट समुदायों में गहरी पैठ प्रदान करते हैं। अब सफलता का पैमाना केवल 'रीच' या 'लाइक्स' नहीं है, बल्कि वास्तविक बिक्री और ग्राहक जुड़ाव है। दर्शकों के बीच प्रामाणिकता सर्वोपरि हो गई है, वही सामग्री सफल होती है जो रचनाकार के व्यक्तिगत ब्रांड के साथ स्वाभाविक रूप से मेल खाती है।

**उभरते बाजार और टियर-2/टियर-3 शहरों की गतिशीलता :**

भारतीय संदर्भ में, ब्रांडिंग का मुख्य केंद्र महानगरों (टियर–1) से हटकर टियर–2 और टियर–3 शहरों (जैसे जयपुर, लखनऊ, इंदौर, सूरत) की ओर खिसक गया है। इन शहरों के उपभोक्ताओं की अपनी विशिष्ट संस्कृति, आकांक्षाएं और 'विश्वास की भाषा' है।

इन बाजारों में सफल होने के लिए 'स्थानीयकरण' (Localization) अत्यधिक महत्वपूर्ण है। ब्रांड भाषाविज्ञान के अध्ययन प्रमाणित करते हैं कि क्षेत्रीय बोलियों, स्थानीय शब्दावली और सांस्कृतिक संदर्भों का उपयोग उपभोक्ता के क्रय व्यवहार और विश्वास को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। महानगरों के विज्ञापनों को सीधे यहाँ प्रस्तुत करने के बजाय, ब्रांडों को स्थानीय संदर्भों का सहारा लेना पड़ता है।

**भारतीय परिदृश्य में प्रमुख ब्रांडों का केस अध्ययन :**

कुछ प्रमुख भारतीय ब्रांडों ने सोशल मीडिया और इमर्सिव तकनीकों का उपयोग करके अपनी ब्रांडिंग को सफलतापूर्वक नया आकार दिया है :

- **जयपुर रग्स (Jaipur Rugs) :** इस हस्तकला–आधारित ब्रांड ने अपने ग्रामीण और आदिवासी कारीगरों की कहानियों को वैश्विक उपभोक्ताओं तक पहुंचाने के लिए सोशल मीडिया का शानदार उपयोग किया है। यह ग्राहकों और कारीगरों के बीच एक सीधा और भावनात्मक संबंध स्थापित करता है।
- **आम्रपाली ज्वेल्स (Amrapali Jewels) :** जयपुर के इस पारंपरिक लक्जरी आभूषण ब्रांड ने युवा दर्शकों तक पहुंचने के लिए 'ट्राइब आम्रपाली' लॉन्च किया। उन्होंने डिजाइनों को सोशल मीडिया पर वायरल करके अपनी पहुंच का विस्तार किया, जो विरासत और आधुनिकता का एक आदर्श संगम है।
- **तनिष्क (Tanishq) और ब्रिटानिया (Britannia) :** इन हेरिटेज ब्रांडों ने उपभोक्ताओं से जुड़ने के लिए इमर्सिव तकनीक का उपयोग किया। तनिष्क ने मेटावर्स में आभूषण संग्रह पेश किया और वर्चुअल ट्राई–ऑन की सुविधा दी। वहीं, ब्रिटानिया ने ऐतिहासिक कहानियों को जीवंत करने के लिए एआर (AR) का प्रभावी ढंग से उपयोग किया।
- **जेप्टो (Zepto) :** क्विक–कॉमर्स प्लेटफॉर्म जेप्टो ने टियर–2 शहरों में युवा दर्शकों के साथ जुड़ने के लिए 'मीम मार्केटिंग' का मार्ग अपनाया है। रोजमर्रा की समस्याओं पर आधारित हास्यपूर्ण सामग्री के माध्यम से उन्होंने अत्यधिक प्रामाणिक और त्वरित ब्रांड जुड़ाव स्थापित किया है।

**ब्रांड इक्विटी और उपभोक्ता व्यवहार पर सामाजिक मीडिया एल्गोरिदम का प्रभाव :**

सोशल मीडिया मार्केटिंग एक निरंतर विकसित होने वाले एल्गोरिथम वातावरण में कार्य करती है। एल्गोरिदम के माध्यम से वैयक्तिकृत सामग्री की आपूर्ति ब्रांडों को श्दोतरफा संचारश स्थापित करने में मदद करती है, जिससे उपभोक्ता की ब्रांड निष्ठा मजबूत होती है।

हालाँकि, इसके नकारात्मक पहलू भी हैं। सोशल मीडिया एल्गोरिदम अक्सर 'इन्फॉर्मेशन कोकून' (Information Cocoons) या प्रतिध्वनि कक्ष का निर्माण करते हैं, जहां उपभोक्ताओं को एक ही प्रकार की सामग्री बार–बार दिखाई जाती है। प्लेटफॉर्म का अति–व्यावसायीकरण उपभोक्ता के विश्वास को क्षीण कर सकता है।

डेटा गोपनीयता भी एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। आज के परिदृश्य में 'सचेत ब्रांडिंग' (Conscious Branding) अत्यंत आवश्यक है। ब्रांडों को यह सुनिश्चित करना होगा कि वे नैतिक मापदंडों का पालन करें और प्रौद्योगिकी के उपयोग के बीच 'मानवीय स्पर्श' (Human Touch) को बनाए रखें।

**निष्कर्ष :**

यह शोध पत्र स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है कि 2023–2024 के परिदृश्य में सोशल मीडिया द्वारा ब्रांडिंग को दी जाने वाली दिशाएं अधिक इमर्सिव, प्रामाणिक और स्थानीयकृत हो गई हैं। डिजिटल परिदृश्य एक बहुआयामी पारिस्थितिकी तंत्र बन गया है।

इन्फ्लुएंसर मार्केटिंग अब माइक्रो–क्रिएटर्स की ओर मुड़ गई है, और भारत जैसे विकासशील बाजारों में टियर–2 शहर ब्रांड विकास का नया केंद्र बन गए हैं। संवर्धित और आभासी वास्तविकता जैसी तकनीकें प्रयोगात्मक विपणन का मुख्य हिस्सा बन गई हैं। जो ब्रांड इस बदलते परिवेश में अपने उपभोक्ताओं की भाषा में संवाद कर सकेंगे, नैतिक डेटा उपयोग को प्राथमिकता देंगे और अपनी प्रामाणिकता बनाए रख सकेंगे, वे ही भविष्य में स्थायी ब्रांड इक्विटी का निर्माण करने में सफल होंगे।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha
April 2026

ISSN : 2395-7115
Page No. : 65-71

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# Patterns and Socio-Economic Implications of Migration : A Case Study of Gorakhpur District

**Chandan Kumar Yadav,** Ph.D. Research Scholar
Department of Medieval and Modern History, University of Lucknow, Lucknow.

**Prof. Pawan Kumar Yadav**
Department of History (RMP PG College, Sitapur)
University of Lucknow, Lucknow.

**Abstract :**

Migration is an important socio-economic phenomenon influencing rural development in India. The district of **Gorakhpur in eastern Uttar Pradesh** experiences substantial out-migration (mainly **rural-to-urban and interstate migration)**, primarily driven by economic factors such as unemployment, small landholdings, and low agricultural productivity. This study examines the socio-economic implications of migration on households in Gorakhpur district. The research focuses on the causes of migration, migration patterns, and its impacts on income, family structure, gender roles, and rural livelihoods. The study adopts a case study approach using both primary and secondary data sources. The findings reveal that migration contributes positively to household income through remittances and improves living standards, education, and housing conditions. Along with that, migration also contributes in increased responsibilities for women in rural households. The study highlights the need for **local employment generation, rural industrialization, and stronger social security policies** to maximize the benefits of migration and reduce distress migration. The study concludes that while migration serves as an important livelihood strategy, there is a need for stronger rural development policies and employment generation to reduce distress migration.

**Keywords** : Migration, Employment, Opportunities, Rural, Development

**Introduction :**

Migration refers to the movement of people from one place to another in search of better economic opportunities, education, living conditions, and/or otherwise. Current estimates are that there are 281 million international migrants globally (or 3.6% of the

world's population)[1]. In India, **rural-to-urban migration** is one of the most common forms of migration.

Gorakhpur district, located in eastern Uttar Pradesh, is characterized by **high population** (4,440,895)[2]**, limited industrial development, small landholdings, and dependence on agriculture**. Due to these conditions, a large proportion of the working age group population migrates to urban centers such as **Delhi, Mumbai, Surat, Punjab, Bengaluru, Chennai, Haryana** for employment. Migration has become an important livelihood strategy for rural households of this region. While it contributes to economic improvement through remittances, it also influences social structures, rural labour dynamics, gender roles, and agricultural productivity. This research paper examines the **socio-economic implications of migration in Gorakhpur district**.

**Objective of study :**

The main objectives of the study are :

1. To examine the **major causes of migration** in Gorakhpur district.
2. To analyze the **patterns of migration** among rural households.
3. To study the **economic and social impacts of migration** on families left behind.
4. To evaluate the **role of remittances in improving household livelihoods**.

**Literature review :**

Previous studies have highlighted migration as an important factor influencing rural development and socio-economic transformation. Research on rural migration in India suggests that economic factors such as unemployment, low agricultural productivity, and poverty are the major causes of migration. Studies have also shown that remittances sent by migrants contribute significantly to household income and improve living standards in rural areas.

Some scholars have emphasized that migration can lead to positive outcomes such as increased education levels, improved housing, and greater economic mobility. However, other studies highlight the negative consequences of migration, including labour shortages in agriculture, family separation, and social challenges in migrant communities.

Studies conducted in eastern Uttar Pradesh indicate that migration is often seasonal or circular, with workers moving temporarily to urban areas for employment while maintaining strong ties with their rural households.

**Methodology :**

---

[1] International Organization for Migration. World Migration Report 2024: Chapter 2 – Migration and migrants: A global overview

[2] Census of India report, 2011

**Study area and sampling :** Gorakhpur district is one of the important cities of India. Due to its geographical location, population pressure, divisional headquarter of nearby 3 districts, it represents the shifting nature changing economic progress. The study covers 4 major blocks (Gola, Barhalganj, Gagaha, Kauriram) of total 19 blocks of the district[3]. A **purposive sampling technique** was used to select households that had at least one migrant member and so total 39 migrants were interviewed who had migrated for minimum 12 months.

**Data Sources :**

The research is based on **both primary and secondary data**.

**Primary Data :**

- 39 Interviews with migrant workers and their families of different villages
- Observation of living conditions and economic activities of migrants

**Secondary Data :**

- Government reports
- Census of India data
- Academic journals and migration studies

**Analysis** : The collected data were analyzed using **descriptive statistical methods and qualitative analysis** to understand migration patterns and socio-economic outcomes and the significance of income change.

**Findings :**

- **Age group of migrants (in yrs.)**

| 18-25 | 26-45 | 45 above |
|---|---|---|
| 10 | 17 | 12 |

- **Level of education (no. of migrants)**

| Below 10th | 10th pass | 12th pass | Graduate and above |
|---|---|---|---|
| 3 | 7 | 23 | 6 |

[3] https://gorakhpur.nic.in/blocks/

- **Purpose of migration (no. of migrants)**

| Higher education | Employment |
|---|---|
| 8 | 31 |

- **Destination city (no. of migrants)**

| For education | For employment |
|---|---|
| • Delhi (2)<br>• Allahabad (Prayagraj) (3)<br>• Kota (1)<br>• Lucknow (2) | • Delhi- NCR (11)<br>• Mumbai (6)<br>• Bengaluru (8)<br>• Surat (3)<br>• Others (3) |

**Income group (INR)**

| Upto 30000 | 30000-50000 | 50000+ | Prefer not to reveal |
|---|---|---|---|
| 17 | 9 | 2 | 3 |

- **Avg change in household income due to migration**

| Upto 100% | 101-200% | More than 200% |
|---|---|---|
| 18 | 11 | 2 |

- **Willing to stay in destination city for upcoming 5 or more years (no. of migrants)**

| Yes | No |
|---|---|
| 32 | 7 |

- **Change in household structure after migration (no. of migrants)**

| Item(s) | Afforded after migration | Was available before migration | Still not available at home |
|---|---|---|---|
| Pucca house | 19 | 04 | 07 |
| TV | 22 | 06 | 03 |
| Fridge/A.C./Washing machine | 07 | 03 | 21 |
| Motorbike | 25 | 04 | 02 |

- **Left behind women became more independent after migration**

| Yes | No | Couldn't assess |
|---|---|---|
| 80% | 15% | 05% |

**Causes of migration :**

The study identifies several factors which are largely responsible for migration on a larger canvas and fits into causes of migration from Gorakhpur district, broadly categorized into push and pull factors of migration.

**Push factors :**

- Lack of regular local employment opportunities
- High debt and interest pressure
- Low wages in rural areas
- Small and fragmented landholdings not enough to sustain whole family
- Seasonal and irregular agricultural employment with low wages
- Annual floods hitting the riverside area impacting produce negatively
- Lack of quality educational institutions
- Lack of proper healthcare facility with limited money
- Desire for better income and living standards

**Pull factors :**

- Better Employment Opportunities in factories, construction projects, hotels, and transport services
- higher wages in cities compared to rural areas
- access to better schools, colleges, hospitals, and modern facilities
- Improved Living Standards through better infrastructure, transportation, communication, and housing facilities
- Perks of city life

**Socio economic impacts on household families :**

Through study One of the most important impact of migration was seen in terms of increase in household income through remittances. Migrant workers send money to their families regularly, often leading to their financial stability. These remittances are often used for daily expenses, education, healthcare, housing improvements which in turn leads to better living conditions for rural households. Families invested in building pucca houses, purchasing consumer goods, and improving sanitation and food consumption. One of the

biggest share of these regular remittances was used to pay the debt of families (often taken in distressed situation, marriage debt, building house and health expenses). Few families built a small general store shop or invested in small businesses, which created a more diversified and stable income structure which helped families reduce their dependence on agriculture.

Many migrant families prioritized **education for their children** using the money sent by migrants. This allows children to attend better schools or continue higher education, which may improve their future employment opportunities.

Rural household **Migration** has led to changes in traditional family structures**,** because When working-age male members migrate, families tend to become **women-headed or elderly-headed households**. This shift affects household decision-making and responsibilities and it was observed that it has increased the **responsibilities of women** in rural households. Women have taken on roles such as managing agriculture, household finances, and caring for children and elderly family members. While this can increase women's decision-making power, it also leads to heavier workloads.

Family members left behind and migrants experienced **loneliness, emotional stress, and social isolation** due to the absence of family members. Children may grow up with limited parental supervision when one of parents migrate.

**Conclusion :**

Migration has become an essential livelihood strategy for many households in Gorakhpur district. While it provides economic benefits through increased income and improved living standards, it also brings social and demographic challenges.

Policies aimed at promoting rural employment, skill development, and local industrial growth can help reduce distress migration. Strengthening social security measures for migrant workers is also essential to ensure that migration contributes positively to rural development.

Migration plays a crucial role in the socio-economic life of rural households in Gorakhpur district. It provides opportunities for employment and income generation, particularly through remittances, which contribute to improved living standards. However, migration also creates challenges such as labour shortages, family separation, and increased responsibilities for women. A balanced development strategy that promotes **local employment opportunities, skill development, and social protection for migrant workers** is essential to ensure that migration contributes positively to sustainable rural development.

## References :


1. Srivastava, R. (2011). Labour migration in India: Recent trends, patterns and policy issues. The Indian Journal of Labour Economics, 54(3), 411–440.
2. Migration in India: Migration in India (2020-2021) National Statistical Office

3. Census of India. (2011). Migration Tables. Office of the Registrar General & Census Commissioner.
4. Gupta, M. D., & Das, S. (2020). Migration trends post-pandemic in Uttar Pradesh. Journal of Regional Development, 45(2), 112– 126.
5. Singh, R., & Raj, A. (2020). Migration, remittances, and rural development: Evidence from eastern UP. Journal of Development Studies, 56(4), 423–438.
6. Keshri, K., & Bhagat, R. B. (2013). Socioeconomic determinants of temporary labour migration in India: A regional perspective. Asian Population Studies, 9(2), 175–195.
7. Srivastava, S. K. (2020). Labour Migration in India: Issues and Challenges. Oxford University Press.
8. WORLD MIGRATION REPORT 2024, International Organization for Migration

Mob No: 7518134699 Email: cyjnvk@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 72-77
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भारतीय ज्ञान परंपरा का सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्व

**डॉ. नरेश कुमार**
(अतिथि व्याख्याता–समाजशास्त्र) वीरांगना अवंती बाई शासकीय महविद्यालय, छुईखदान,
जिला–खैरागढ़–छुईखदान–गण्डई (छ.ग.)

**शोध सारांश :**

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्धतम बौद्धिक विरासतों में से एक है। वेद, उपनिषद्, पुराण, आयुर्वेद, गणित, खगोलशास्त्र, दर्शन तथा लोककला जैसे अनेक क्षेत्रों में इस परंपरा ने न केवल भारत को, अपितु संपूर्ण मानव सभ्यता को दिशा प्रदान की है। यह परंपरा समाज को एक सांस्कृतिक एकता के सूत्र में पिरोती है और सामूहिक जीवन–मूल्यों को पीढ़ी–दर–पीढ़ी आगे बढ़ाती है। सामाजिक दृष्टि से, भारतीय ज्ञान परंपरा ने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा के माध्यम से सह–अस्तित्व, सामाजिक न्याय एवं पारस्परिक सम्मान की संस्कृति को पोषित किया है। गुरुकुल प्रणाली, लोक शिक्षा एवं पारंपरिक हस्तशिल्प के माध्यम से ज्ञान का प्रसार होता रहा है, जिसने समाज में सामंजस्य एवं समरसता बनाए रखी। सांस्कृतिक दृष्टि से, संगीत, नृत्य, चित्रकला, स्थापत्य कला एवं साहित्य के रूप में भारतीय ज्ञान परंपरा ने एक अनूठी सांस्कृतिक पहचान निर्मित की है। योग एवं ध्यान जैसी विधाएँ आज विश्वव्यापी महत्व प्राप्त कर चुकी हैं और भारत की 'सॉफ्ट पावर' के रूप में वैश्विक स्तर पर भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। आर्थिक महत्व की दृष्टि से, पारंपरिक हस्तशिल्प, आयुर्वेदिक औषधि, जैविक कृषि एवं लोककलाएँ आज भारतीय अर्थव्यवस्था को सशक्त आधार प्रदान कर रही हैं। 'आत्मनिर्भर भारत' एवं 'वोकल फॉर लोकल' जैसी नीतियाँ इसी ज्ञान परंपरा पर आधारित हैं। यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त अनेक भारतीय कलाएँ सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देकर रोजगार सृजन में भी योगदान दे रही हैं। अंततः भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा करती है, बल्कि समावेशी विकास एवं सतत् अर्थव्यवस्था के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसे समकालीन शिक्षा एवं नीति–निर्माण में एकीकृत करना राष्ट्रीय विकास के लिए अनिवार्य है।

**शब्द कुंजी :** भारतीय ज्ञान परंपरा, सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक समरसता, पारंपरिक अर्थव्यवस्था, सतत् विकास।

## 1. प्रस्तावना :

प्रत्येक राष्ट्र की आत्मा उसकी ज्ञान परंपरा में बसती है। भारत एक ऐसा देश है जिसकी ज्ञान परंपरा हजारों वर्षों की निरंतर यात्रा का परिणाम है। ऋग्वेद से लेकर आधुनिक काल तक भारतीय मनीषियों ने ब्रह्मांड,

समाज, प्रकृति और मानव जीवन के विषय में गहन विचार–मंथन किया है। यह परंपरा केवल धार्मिक या आध्यात्मिक नहीं है, बल्कि इसमें विज्ञान, गणित, चिकित्सा, अर्थशास्त्र, राजनीति, कला और साहित्य सभी का समावेश है। वैश्वीकरण के इस दौर में जब पश्चिमी ज्ञान–प्रणाली का प्रभुत्व स्थापित हो रहा है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। जलवायु परिवर्तन, सामाजिक विखंडन, आर्थिक असमानता तथा सांस्कृतिक पहचान के संकट जैसी चुनौतियों का समाधान भारतीय ज्ञान–दृष्टि में मिल सकता है। अतः यह शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक आयामों का विश्लेषण करते हुए इसकी समकालीन प्रासंगिकता को रेखांकित करता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्धतम बौद्धिक विरासतों में से एक है। वेद, उपनिषद्, पुराण, आयुर्वेद, गणित, खगोलशास्त्र, दर्शन तथा लोककला जैसे अनेक क्षेत्रों में इस परंपरा ने न केवल भारत को, अपितु संपूर्ण मानव सभ्यता को दिशा प्रदान की है। प्रस्तुत शोधपत्र में भारतीय ज्ञान परंपरा के सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्व का विश्लेषण किया गया है। यह परंपरा समाज को एकता के सूत्र में पिरोती है, सांस्कृतिक अस्मिता को सुरक्षित रखती है तथा समकालीन आर्थिक विकास को एक वैकल्पिक एवं टिकाऊ आधार प्रदान करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 एवं 'आत्मनिर्भर भारत' जैसी नीतियाँ इसी परंपरा से प्रेरित हैं। निष्कर्ष के रूप में यह प्रतिपादित किया गया है कि भारतीय ज्ञान परंपरा को समकालीन शिक्षा एवं नीति–निर्माण में एकीकृत करना राष्ट्रीय विकास के लिए अनिवार्य है।

## 2. शोध उद्देश्य :

- भारतीय ज्ञान परंपरा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं स्वरूप को समझना।
- इसके सामाजिक महत्व का मूल्यांकन करना।
- सांस्कृतिक क्षेत्र में इसके योगदान का विश्लेषण करना।
- आर्थिक विकास में इसकी भूमिका को रेखांकित करना।
- समकालीन परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासंगिकता एवं उपयोगिता की विवेचना करना।

## 3. शोध पद्धति :

प्रस्तुत शोधपत्र मुख्यतः गुणात्मक (Qualitative) एवं वर्णनात्मक (Descriptive) शोध पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का समन्वित उपयोग किया गया है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों, सरकारी नीति दस्तावेजों, यूनेस्को की रिपोर्टों, आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्टों तथा विभिन्न शोध पत्रिकाओं के आलेखों को आधार बनाया गया है। तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक विश्लेषण विधि का भी प्रयोग किया गया है।

## 4. भारतीय ज्ञान परंपरा : ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

भारतीय ज्ञान परंपरा की जड़ें वैदिक काल (लगभग 1500 ई. पू.) तक जाती हैं। चार वेद, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद, न केवल धर्म, अपितु भौतिकी, भाषाविज्ञान, चिकित्सा और खगोल के ज्ञान के भी भंडार हैं। उपनिषदों में आत्मा, ब्रह्म और जगत् के गूढ़ प्रश्नों का दार्शनिक विश्लेषण है।

सिंधु–सरस्वती सभ्यता (लगभग 3000 ई.पू.) में नगर–नियोजन, जल–प्रबंधन एवं व्यापार की उन्नत प्रणालियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि भारत की ज्ञान परंपरा अत्यंत प्राचीन एवं व्यापक है। आचार्य चाणक्य का 'अर्थशास्त्र', चरक और सुश्रुत का चिकित्साशास्त्र, आर्यभट्ट का गणित, भरतमुनि का नाट्यशास्त्र, ये सब मिलकर

एक ऐसी समृद्ध परंपरा का निर्माण करते हैं जो विश्व के किसी भी सभ्यता से तुलनीय है।

**4.1 ज्ञान परंपरा के प्रमुख क्षेत्र :**

- **वेद–वेदांग :** भाषा, व्याकरण, खगोल, गणित एवं दर्शन।
- **आयुर्वेद एवं योग :** स्वास्थ्य एवं जीवन विज्ञान।
- **वास्तुशास्त्र एवं स्थापत्य :** नगर–नियोजन एवं भवन निर्माण।
- **संगीत, नृत्य एवं नाट्य :** सौंदर्यशास्त्र एवं प्रदर्शन कलाएँ।
- **कृषि एवं जल प्रबंधन :** पर्यावरणीय ज्ञान।
- **लोककला एवं हस्तशिल्प :** सामुदायिक ज्ञान।

**5. सामाजिक महत्व :**

भारतीय ज्ञान परंपरा ने समाज को संगठित एवं सुसंस्कृत बनाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसने न केवल व्यक्ति के नैतिक विकास को दिशा दी, बल्कि सामाजिक संरचना, पारस्परिक संबंध और सामुदायिक जीवन को भी समृद्ध किया।

**5.1 सामाजिक एकता एवं समरसता :**

'वसुधैव कुटुम्बकम्' (सम्पूर्ण पृथ्वी ही परिवार है) की अवधारणा भारतीय ज्ञान परंपरा की मूलभूत देन है। यह विचारधारा सामाजिक एकता, सहिष्णुता एवं सह–अस्तित्व का आधार बनती है। भारतीय समाज में जाति, धर्म और भाषा की विविधता के बावजूद एकता का जो सूत्र रहा है, वह इसी ज्ञान परंपरा की देन है।

रामायण, महाभारत और पंचतंत्र जैसे ग्रंथों ने सामाजिक मूल्यों, सत्य, न्याय, करुणा, साहस इत्यादि को कथा–रूप में जन–जन तक पहुँचाया। लोककथाओं एवं लोकगीतों ने भी इसी कार्य को पीढ़ी–दर–पीढ़ी किया है।

**5.2 शिक्षा प्रणाली :**

गुरुकुल प्रणाली भारतीय ज्ञान परंपरा की एक विशिष्ट देन है। इसमें शिक्षा केवल पुस्तकीय नहीं थी, बल्कि जीवन–कौशल, नैतिक मूल्य एवं व्यावहारिक ज्ञान का समग्र समावेश था। गुरु–शिष्य संबंध एक आत्मीय एवं आजीवन संबंध था। तक्षशिला और नालंदा जैसे विश्वविद्यालय इसी परंपरा के प्रतीक थे, जहाँ विश्वभर से विद्यार्थी आते थे।

**5.3 महिला एवं समाज :**

प्राचीन भारत में गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा जैसी विदुषी महिलाओं ने ज्ञान के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई। यद्यपि मध्यकाल में कुछ विकृतियाँ आईं, तथापि भारतीय ज्ञान परंपरा मूलतः महिला–सशक्तिकरण की पक्षधर रही है।

**5.4 पर्यावरणीय चेतना :**

भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति को माता का स्थान दिया गया है। 'अथर्ववेद' की 'भूमि सूक्त' में पृथ्वी को माता और स्वयं को उसका पुत्र कहा गया है। वृक्षों, नदियों एवं पशुओं की पूजा की परंपरा दरअसल पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने की वैज्ञानिक समझ पर आधारित है।

**6. सांस्कृतिक महत्व :**

संस्कृति किसी भी राष्ट्र की आत्मा होती है और भारतीय ज्ञान परंपरा ने इस आत्मा को हजारों वर्षों से

पोषित किया है। भारतीय संस्कृति की विविधता, गहराई एवं जीवन्तता इसी ज्ञान परंपरा का परिणाम है।

### 6.1 ललित कलाएँ :

भारतीय संगीत की शास्त्रीय परंपरा, हिंदुस्तानी एवं कर्नाटक संगीत, सैकड़ों राग—रागिनियों एवं तालों पर आधारित है। भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' में नृत्य, संगीत, नाटक एवं काव्य का व्यापक विवेचन है। भरतनाट्यम्, कथक, कुचिपुड़ी, ओडिशी जैसी शास्त्रीय नृत्य—शैलियाँ भारतीय ज्ञान परंपरा की अमूल्य धरोहर हैं।

चित्रकला में अजंता—एलोरा की गुफाओं की चित्रकारी, मधुबनी, वारली, पट्टचित्र जैसी लोकचित्र परंपराएँ एवं स्थापत्य में खजुराहो, कोणार्क, हम्पी जैसे मंदिर, ये सब भारतीय ज्ञान परंपरा की वास्तुकला एवं कला के उत्कर्ष के प्रतीक हैं।

### 6.2 साहित्य एवं भाषा :

संस्कृत को 'देवभाषा' कहा जाता है। इसकी वैज्ञानिक व्याकरण—प्रणाली (पाणिनि की 'अष्टाध्यायी') आज के कंप्यूटर वैज्ञानिकों को भी चकित करती है। वाल्मीकि की 'रामायण', व्यास की 'महाभारत', कालिदास के नाटक एवं काव्य, ये विश्वसाहित्य की अनमोल धरोहर हैं। हिंदी, तमिल, तेलुगु, मलयालम, बंगाली जैसी भाषाओं में लोकसाहित्य की समृद्ध परंपरा है।

### 6.3 योग एवं ध्यान : सॉफ्ट पावर :

योग एवं ध्यान भारतीय ज्ञान परंपरा की सबसे बड़ी वैश्विक देन है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 21 जून को 'अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस' घोषित किया है। आज 180 से अधिक देशों में योग का अभ्यास होता है। यह भारत की 'सॉफ्ट पावर' का सशक्त माध्यम है जो भारतीय संस्कृति को विश्व में प्रतिष्ठित करता है।

### 6.4 त्यौहार एवं लोक संस्कृति :

भारत के त्यौहार, दीपावली, होली, नवरात्रि, ओणम, पोंगल, बीहू, दुर्गापूजा सांस्कृतिक एकता के जीवंत प्रतीक हैं। ये त्यौहार केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि सामाजिक मिलन, पारंपरिक ज्ञान के हस्तांतरण और सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण के माध्यम भी हैं।

## 7. आर्थिक महत्व :

भारतीय ज्ञान परंपरा केवल आध्यात्मिक या सांस्कृतिक क्षेत्र तक सीमित नहीं है, इसका आर्थिक आयाम भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। परंपरागत ज्ञान पर आधारित उद्योग एवं व्यवसाय आज भारतीय अर्थव्यवस्था को एक वैकल्पिक एवं टिकाऊ दिशा प्रदान कर रहे हैं।

### 7.1 हस्तशिल्प एवं कुटीर उद्योग :

भारत का हस्तशिल्प उद्योग लाखों कारीगरों को रोजगार देता है। बनारसी साड़ी, कश्मीरी शॉल, राजस्थानी ब्लू पॉटरी, बिदरीवेयर, तंजावुर पेंटिंग, ये सब पारंपरिक ज्ञान एवं कौशल पर आधारित हैं। वर्ष 2022—23 में भारत का हस्तशिल्प निर्यात लगभग रू. 32,000 करोड़ से अधिक था, जो इस क्षेत्र की विशाल आर्थिक संभावना को दर्शाता है।

### 7.2 आयुर्वेद एवं प्राकृतिक चिकित्सा :

आयुर्वेद भारत की चिकित्सा ज्ञान परंपरा का मूल है। कोविड—19 महामारी के बाद विश्वभर में प्राकृतिक

एवं समग्र चिकित्सा के प्रति रुचि बढ़ी है। भारतीय आयुर्वेदिक उत्पाद उद्योग का आकार वर्ष 2024 तक लगभग 15 बिलियन डॉलर से अधिक है और इसके 2030 तक 35 बिलियन डॉलर तक पहुँचने की संभावना है। पतंजलि, डाबर, हिमालया जैसी कंपनियाँ इसी परंपरागत ज्ञान पर आधारित व्यवसाय कर रही हैं।

### 7.3 जैविक कृषि :

भारतीय कृषि परंपरा में गोमूत्र, जीवामृत, पंचगव्य जैसे जैविक साधनों का उपयोग सदियों से होता आया है। आज इसे 'प्राकृतिक कृषि' या 'ऑर्गेनिक फार्मिंग' के नाम से जाना जाता है। विश्व बाजार में जैविक उत्पादों की मांग तेजी से बढ़ रही है और भारत इस क्षेत्र में एक प्रमुख खिलाड़ी बन सकता है।

### 7.4 सांस्कृतिक पर्यटन :

भारत की ऐतिहासिक धरोहरें, अजंता–एलोरा, खजुराहो, कोणार्क, हम्पी, महाबलीपुरम विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करती हैं। वाराणसी, ऋषिकेश, मथुरा जैसे तीर्थ–स्थान धार्मिक पर्यटन के केंद्र हैं। सांस्कृतिक पर्यटन न केवल विदेशी मुद्रा अर्जित करता है, बल्कि स्थानीय रोजगार एवं आजीविका का भी साधन बनता है।

### 7.5 योग एवं वेलनेस उद्योग :

भारत में ऋषिकेश, मैसूरु जैसे नगर योग पर्यटन के वैश्विक केंद्र बन गए हैं। वैश्विक वेलनेस अर्थव्यवस्था 4–5 ट्रिलियन डॉलर की है, जिसमें भारत की भागीदारी तेजी से बढ़ रही है। योग, ध्यान एवं आयुर्वेद की त्रिवेणी भारत को वेलनेस पर्यटन में अग्रणी स्थान दिलाने में सक्षम है।

## 8. नीतिगत आयाम एवं समकालीन प्रासंगिकता :

भारत सरकार ने भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनर्जीवित एवं संरक्षित करने के लिए अनेक नीतिगत पहल की हैं :

- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (NEP–2020) :** इसमें भारतीय ज्ञान परंपरा (IKS) को पाठ्यक्रम में समाहित करने पर विशेष बल दिया गया है। उच्च शिक्षा में IKS केंद्रों की स्थापना की जा रही है।
- **आयुष मंत्रालय :** आयुर्वेद, योग, यूनानी, सिद्ध एवं होम्योपैथी को बढ़ावा देने हेतु एक स्वतंत्र मंत्रालय का गठन किया गया है।
- **वोकल फॉर लोकल :** पारंपरिक हस्तशिल्प एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित करने की नीति।
- **जीआई टैग (Geographical Indication) :** दार्जिलिंग चाय, बनारसी साड़ी, तिरुपति लड्डू आदि को जीआई टैग देकर परंपरागत उत्पादों की पहचान को संरक्षित किया जा रहा है।
- **यूनेस्को की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत सूची :** भारत की अनेक कलाएँ एवं परंपराएँ इस सूची में शामिल हैं, जैसे– रामलीला, कुटियाट्टम, वैदिक मंत्रोच्चार आदि।

डिजिटल तकनीक के माध्यम से भारतीय ज्ञान परंपरा को संरक्षित एवं प्रसारित करने के प्रयास भी हो रहे हैं। 'भारतीय ज्ञान परंपरा' (IKS) का डिजिटल भंडार बनाया जा रहा है ताकि आने वाली पीढ़ियाँ इस विरासत से लाभान्वित हो सकें।

## 9. चुनौतियाँ :

भारतीय ज्ञान परंपरा के समक्ष अनेक चुनौतियाँ भी हैं :–

- वैश्वीकरण एवं पश्चिमीकरण के कारण नई पीढ़ी का पारंपरिक ज्ञान से विच्छेद।
- पारंपरिक कारीगरों, वैद्यों एवं लोककलाकारों की घटती संख्या।

- ज्ञान के दस्तावेजीकरण एवं संरक्षण का अभाव।
- बायोपाइरेसी : विदेशी कंपनियों द्वारा भारतीय पारंपरिक ज्ञान का पेटेंट कराने की कोशिश (जैसे हल्दी, नीम विवाद)।
- पारंपरिक ज्ञान एवं आधुनिक विज्ञान के बीच समन्वय का अभाव।

**10. सुझाव :**

- पाठ्यक्रम में भारतीय ज्ञान परंपरा का समावेश (NEP–2020 का क्रियान्वयन)।
- पारंपरिक कारीगरों एवं कलाकारों को सामाजिक सुरक्षा एवं आर्थिक प्रोत्साहन।
- पारंपरिक ज्ञान का वैज्ञानिक परीक्षण एवं दस्तावेजीकरण।
- पारंपरिक ज्ञान पेटेंट डेटाबेस (TKDL) का विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण।
- भारतीय भाषाओं में ज्ञान के अनुवाद एवं प्रकाशन को प्रोत्साहन।
- प्ज्ञै आधारित स्टार्टअप्स को प्रोत्साहित करने हेतु विशेष नीतिगत ढाँचा।
- ग्रामीण एवं जनजातीय समुदायों के पारंपरिक ज्ञान का सम्मान एवं संरक्षण।

**11. निष्कर्ष :**

भारतीय ज्ञान परंपरा एक जीवंत, गतिशील एवं बहुआयामी विरासत है जो सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक सभी क्षेत्रों में प्रासंगिक है। यह परंपरा न केवल अतीत की धरोहर है, बल्कि भविष्य के निर्माण का आधार भी है। जलवायु परिवर्तन, सामाजिक असमानता एवं सांस्कृतिक पहचान के संकट जैसी वैश्विक चुनौतियों का समाधान इस परंपरा में निहित है। आधुनिकता के साथ परंपरा का समन्वय भारत की सबसे बड़ी शक्ति है। जैसा कि रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था 'परंपरा और आधुनिकता के बीच कोई विरोध नहीं है, बशर्ते हम परंपरा को उसकी आत्मा सहित ग्रहण करें।' भारतीय ज्ञान परंपरा को समकालीन शिक्षा, नीति–निर्माण एवं आर्थिक विकास में एकीकृत करके हम एक समृद्ध, न्यायपूर्ण एवं सतत् भारत का निर्माण कर सकते हैं। 'सा विद्या या विमुक्तये' जो ज्ञान मुक्ति दे, वही सच्चा ज्ञान है। भारतीय ज्ञान परंपरा इसी मुक्ति का मार्ग है व्यक्ति की, समाज की और राष्ट्र की।

**संदर्भ ग्रंथ-सूची :**


1. कौटिल्य (चाणक्य). (लगभग 300 ई.पू.). अर्थशास्त्र. (आर. शामाशास्त्री, अनुवाद). मैसूर : गवर्नमेंट प्रेस.
2. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय.
3. च्जंदरंसप. (लगभग 400 ई.). योगसूत्र. (स्वामी विवेकानन्द, अनुवाद). कलकत्ता : अद्वैत आश्रम.
4. Sharma, R.K. & Dash, V.B. (2014). Charaka Samhita (Vol. 1-7). Varanasi: Chaukhamba Sanskrit Pratishthan.
5. UNESCO. (2022). Intangible Cultural Heritage of India. Paris: UNESCO Publishing
6. नेहरू, जवाहरलाल. (1946). भारत की खोज (Discovery of India). बम्बई : मेरिडियन बुक्स.
7. Ministry of Textiles, Govt. of India. (2023). Annual Report 2022-23: Handicrafts Sector. New Delhi.
8. AYUSH Ministry, Govt. of India. (2023). Ayurveda Industry Report 2023. New Delhi.
9. Subramanian, N. (2019). Indian Knowledge Systems: An Introduction. New Delhi: Vitasta Publishing.
10. Traditional Knowledge Digital Library (TKDL). (2024). www.tkdl.res.in. New Delhi: CSIR.
11. Mishra, S. (2021). 'Globalisation and Indian Cultural Heritage'. Journal of Cultural Studies, 14(2), 45-62.
12. World Economic Forum. (2023). Global Wellness Economy Report. Geneva: WEF.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 78-85

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# आधुनिक पारिवारिक विघटन के संदर्भ में 'आपका बंटी' की प्रासंगिकता

**जयविर वाशिष्ठ**
शोधार्थी, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय (MSU) बड़ौदा, वडोदरा, गुजरात।

**सारांश :**

मन्नू भंडारी का उपन्यास 'आपका बंटी' हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण कृति है, जिसमें आधुनिक पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य संबंधों के तनाव, बाल–मन की त्रासदी तथा स्त्री–चेतना का अत्यंत मार्मिक और यथार्थपरक चित्रण हुआ है। प्रस्तुत शोध–लेख में 'आपका बंटी' का अध्ययन आधुनिक पारिवारिक विघटन के संदर्भ में किया गया है। इस शोध–पत्र का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि यह उपन्यास केवल अपने समय की सामाजिक विडंबनाओं का दस्तावेज नहीं, बल्कि वर्तमान समाज में भी समान रूप से प्रासंगिक है।

शोध–लेख में उपन्यास का विश्लेषण मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और समकालीन परिप्रेक्ष्य में किया गया है। इसमें विशेष रूप से दाम्पत्य संबंधों में संवादहीनता, परिवार के विघटन का बच्चों पर प्रभाव, बंटी के बाल–मनोविज्ञान, शकुन के स्त्री–स्वातंर्त्य और आधुनिक जीवन की संबंध–संकटपूर्ण परिस्थितियों का अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि 'आपका बंटी' आधुनिक जीवन की उस विडंबना को उजागर करता है, जिसमें व्यक्ति की आत्मकेंद्रिकता और संबंधों की संवेदनहीनता परिवार की मूल संरचना को प्रभावित करती है।

अतः यह उपन्यास आधुनिक पारिवारिक जीवन, बाल–अस्मिता और मानवीय संबंधों के संकट को समझने की दृष्टि से आज भी अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होता है।

**मुख्य शब्द :**

मन्नू भंडारी, आपका बंटी, पारिवारिक विघटन, बाल–मनोविज्ञान, दाम्पत्य संबंध, संवादहीनता, स्त्री–स्वातंर्त्य, समकालीन प्रासंगिकता।

**भूमिका :**

हिंदी कथा–साहित्य के स्वातंर्त्योत्तर परिदृश्य में मन्नू भंडारी उन महत्त्वपूर्ण रचनाकारों में हैं, जिन्होंने व्यक्ति और परिवार से जुड़े बदलते सामाजिक यथार्थ को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में जीवन की बाह्य चकाचौंध और आडंबर के पीछे छिपे मानसिक तनाव, मध्यवर्गीय जीवन की संमस्याएं, संबंध विच्छेद ओर स्त्री अस्मिता का प्रभावशाली चित्रण मिलता है। "मन्नू भंडारी की लेखकीय दृष्टि में निजी

जीवन, संबंधों की जटिलता और रचना–संवेदना का गहरा अंतर्संबंध दिखाई देता है। 'आपका बंटी' उपन्यास उनके सर्वाधिक चर्चित उपन्यासों में से एक है। यह उपन्यास केवल पति–पत्नी के आपसी अंह ओर अलगाव की कथा नहीं, बल्कि उस परिवार के टूटने की कथा है जिसका सबसे अधिक बुरा प्रभाव एक बच्चे के मन पर पड़ता है। उपन्यास का केंद्रीय पात्र छे साल का बंटी एक ऐसे बालक का प्रतिनिधित्व करता है जो माता–पिता के टूटते संबंधों के बीच भावनात्मक रूप से कुचला जाता है। आज का समाज तीव्र सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों, शहरीकरण, व्यक्तिवादी जीवन–दृष्टि, उपभोक्तावादी संस्कृति और पारिवारिक मूल्यों के क्षरण से गुजर रहा है। संयुक्त परिवारों का विघटन, दाम्पत्य तनाव, भावनात्मक संवादहीनता और बच्चों में मानसिक असुरक्षा जैसी स्थितियाँ अब सामान्य सामाजिक अनुभव बन चुकी हैं। ऐसे समय में 'आपका बंटी' का पुनर्पाठ अत्यंत आवश्यक हो जाता है, क्योंकि यह उपन्यास आधुनिक परिवार की आंतरिक विडंबना को गहरे मानवीय धरातल पर उद्घाटित करता है।

**आपका बंटी : कथ्य ओर संवेदना :**

यह उपन्यास आधुनिक परिवार की आंतरिक विडंबना को गहरे मानवीय धरातल पर चित्रित करता है। आज का समाज पारिवारिक मूल्यों के क्षरण से गुजर रहा है। समाज मे तीव्र गति से होते हुए सामाजिक–आर्थिक बदलाव, बढ़ता नगरीकरण प्रत्यक्ष रूप से समाज पर प्रभाव डालता है।

उपन्यास की कथा का आधार है पति–पत्नी के तलाक के बाद और तलाक प्रकिया में उनकी संतान की मनोवैज्ञानिक स्थिति। यहाँ पति–पत्नी के बीच केवल मतभेद नहीं है, बल्कि अहं, संवादहीनता, असहमति और भावनात्मक दूरी का ऐसा वातावरण है जो धीरे–धीरे परिवार को तोड़ देता है। परिवार टूटने का दुष्प्रभाव सबसे अधिक बंटी पर पड़ता है। भरे पूरे परिवार में भी बंटी सर्वथा अकेला हो गया। मम्मी और पापा दोनों में से कोई भी उसका' अपना' न बन सका। मम्मी और पापा अपने–अपने प्रेम संबंधों में खो जाते हैं बंटी की चिता किए बगैर। इसी कारण इस उपन्यास का नाम 'आपका बंटी' पड़ा। यहाँ बंटी उसके माता–पिता का ना होकर हम सबका हो जाता है। वह न तो पूरी तरह माँ के संसार का हिस्सा बन पाता है, न पिता के। उसकी स्थिति दो दुनियाओं के बीच बँटे हुए उस बाल–मन की है, जो अपने अस्तित्व, प्रेम और सुरक्षा की तलाश में भटकता रहता है।

उपन्यास की संवेदना का केंद्र यही है कि जब परिवार का विघटन होता है तो ये केवल दो व्यक्तियों का निजी निर्णय नहीं होता, बल्कि वह बच्चे के व्यक्तित्व, मनोविज्ञान और भविष्य को गहरे स्तर पर प्रभावित करता है। यही बिंदु इसे आज भी प्रासंगिक बनाता है।

आधुनिक समाज में परिवार की अवधारणा में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। संयुक्त परिवार की जगह अब एकल परिवार ने ले ली है। समाज में अब परिवार केवल भावनात्मक संस्था न होकर समायोजन, जिम्मेदारियों के लिए संघर्ष और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का क्षेत्र बन गया है। शिक्षा की वजह से पति–पत्नी के सम्बन्धों में समानता और आत्मनिर्णय की चेतना बढ़ी है जो एक सकरात्मक परिवर्तन लेकिन इसके साथ असहनशीलता,स्पेस की मांग, संवाद की कमी आत्मकेन्द्रिकता और रिश्तों की अस्थिरता भी बढ़ी है।

इसी संदर्भ में 'आपका बंटी' को पढ़ने पर स्पष्ट होता है कि लेखक ने बहुत पहले ही उस संकट को पहचान लिया था, जो आज और अधिक तीव्र रूप में हमारे सामने उपस्थित है। आज विवाह–विच्छेद, अलगाव,

पुनर्विवाह, स्टेप परेंटिंग, चाइल्ड कस्टडी, ईमोशनल नेगलेक्ट और बच्चों की मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ अधिक खुले रूप में चर्चा का विषय बनी हुई हैं। ऐसे में 'आपका बंटी' एक दूरदर्शी सामाजिक पाठ के रूप में सामने आता है।

यह उपन्यास हमें यह सोचने के लिए बाध्य करता है कि क्या परिवार केवल कानूनी या सामाजिक संस्था है, या वह भावनात्मक उत्तरदायित्व का भी नाम है? आधुनिक पारिवारिक विघटन की यही समस्या इस उपन्यास को आज भी अत्यंत सार्थक बनाती है।

**दाम्पत्य संबंधों का विघटन और संवादहीनता :**

'आपका बंटी' में पारिवारिक विघटन का मूल कारण केवल बाह्य परिस्थितियाँ नहीं, बल्कि पति–पत्नी के बीच बढ़ती संवादहीनता, भावनात्मक दूरी और उन दोनों का अहं–संघर्ष है। शकुन और अजय के संबंधों में आपसी समझ, सहानुभूति तथा भावनात्मक सहभागिता का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है। उपन्यास में इस स्थिति को अत्यंत सटीक रूप से व्यक्त किया गया है कि "दोनों ही एक–दूसरे की हर बात, हर व्यवहार और हर अदा को एक नया दाँव समझने को मजबूर थे"। इससे स्पष्ट है कि उनके संबंधों में विश्वास और सहजता का स्थान शंका, तनाव और दूरी ने ले लिया था।

यह दूरी केवल मानसिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक और संवादात्मक स्तर पर भी दिखाई देती है। पति–पत्नी के बीच प्रत्यक्ष संवाद लगभग समाप्त हो जाता है और 'वकील चाचा' जैसे पात्र संदेश–वाहक की भूमिका निभाने लगते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि दाम्पत्य संबंधों में स्वाभाविक संप्रेषण समाप्त होकर औपचारिक और कानूनी संवाद का रूप ले चुका था।

शकुन और अजय के बीच संबंध–विच्छेद के बाद भी भावनात्मक तनाव समाप्त नहीं होता है। उपन्यास में कहा गया है कि "साथ रहने की यंत्रणा भी बड़ी विकट थी और अलगाव का त्रास भी"। इससे यह स्पष्ट होता है कि समस्या केवल साथ रहने की नहीं, बल्कि भावनात्मक स्तर पर टूट चुके संबंधों की थी।

इस संवादहीनता का सबसे गहरा प्रभाव बंटी पर पड़ता है। वह अपने माता–पिता के संबंधों की वास्तविकता को समझना चाहता है, किंतु उसे स्पष्ट उत्तर नहीं मिलते। उसका प्रश्न– "ममी, पापा हम लोगों के साथ क्यों नहीं रहते?" दाम्पत्य विघटन की सबसे मार्मिक अभिव्यक्तियों में से एक है। यह प्रश्न केवल एक बालक की जिज्ञासा नहीं, बल्कि टूटते परिवार के भीतर उपजे भावनात्मक शून्य का प्रतीक है।

बंटी को अपने माता–पिता के तलाक की जानकारी भी प्रत्यक्ष संवाद से नहीं, बल्कि बाहरी माध्यम से मिलती है– "टीटू कह रहा था कि तेरे ममी–पापा का तलाक हो गया है"। यह स्थिति दर्शाती है कि परिवार के भीतर सत्य को साझा करने का साहस और संवेदना दोनों का अभाव है। और जब बंटी इस विषय पर बात करना चाहता है, तो "उसके बाद बंटी से कुछ भी नहीं पूछा गया, कुछ भी नहीं कहा गया"। यह मौन ही उपन्यास में संबंधों की टूटने का सबसे तीखा और मार्मिक संकेत बन जाता है।

उपन्यासकार ने अत्यंत सार्थक रूप से यह भी रेखांकित किया है कि पति–पत्नी के बीच उत्पन्न तनाव का प्रभाव केवल उन्हीं तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उसका सबसे गहरा आघात बच्चे के मन पर पड़ता है। इस संदर्भ में यह कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि "शकुन–अजय के संबंधों का तनाव और चटख बंटी की नस–नस में ही प्रतिध्वनित होती है"। अतः 'आपका बंटी' यह सिद्ध करता है कि दाम्पत्य संबंधों में संवाद

का अभाव केवल दो व्यक्तियों के बीच की दूरी नहीं, बल्कि पूरे परिवार की संवेदनात्मक संरचना के विघटन का कारण बनता है।

समकालीन जीवन में भी यही स्थिति व्यापक रूप से दिखाई देती है। आज पति–पत्नी एक ही घर में रहते हुए भी मानसिक और भावनात्मक स्तर पर एक–दूसरे से दूर होते जा रहे हैं। व्यस्त जीवन–शैली, करियर–केन्द्रित दृष्टिकोण, सामाजिक छवि, निजी असंतोष और आत्मकेन्द्रिकता मिलकर संबंधों में ऐसी दूरी उत्पन्न करते हैं, जो अंततः विघटन का कारण बनती है। इस दृष्टि से 'आपका बंटी' आधुनिक पारिवारिक जीवन में बढ़ती संवादहीनता और संबंध–संकट का अत्यंत प्रासंगिक और यथार्थपरक आख्यान है।

**बाल-मनोविज्ञान और बंटी की त्रासदी :**

'आपका बंटी' की सबसे बड़ी उपलब्धि उसका बाल–मन का सूक्ष्म और मार्मिक चित्रण है। मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में बंटी को मात्र एक पात्र के रूप में नहीं, बल्कि विघटित परिवार की सबसे बड़ी मानवीय कीमत के रूप में प्रस्तुत किया है। उपन्यास में स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि शकुन और अजय के संबंधों का तनाव केवल उनके बीच सीमित नहीं रहता, बल्कि उसका प्रभाव सीधे बंटी के मन पर पड़ता है– "शकुन–अजय के संबंधों का तनाव और चटख बंटी की नस–नस में ही प्रतिध्वनित होती है"।

माता–पिता के टूटते संबंधों के बीच बंटी का मन असुरक्षा, अकेलेपन और असमंजस से भर जाता है। वह समझ नहीं पाता कि जिन दो व्यक्तियों के प्रेम और संरक्षण में उसका संसार बसता था, वे अब एक–दूसरे से क्यों दूर हो गए हैं। इस स्थिति की मार्मिक अभिव्यक्ति तब होती है जब वह मासूमियत से प्रश्न करता है– "ममी, पापा हम लोगों के साथ क्यों नहीं रहते?"। यह प्रश्न केवल जिज्ञासा नहीं, बल्कि उसके भीतर उत्पन्न गहरे भावनात्मक संकट का संकेत है।

बंटी की त्रासदी यह भी है कि उसे अपने परिवार की वास्तविक स्थिति का बोध प्रत्यक्ष संवाद से नहीं, बल्कि बाहरी माध्यमों से होता है– "टीटू कह रहा था कि तेरे ममी–पापा का तलाक हो गया है"। इससे उसकी मानसिक स्थिति और अधिक जटिल हो जाती है, क्योंकि उसे सत्य जानने का अधिकार भी नहीं मिलता और वह अनिश्चितता तथा असुरक्षा के बीच जीने को विवश हो जाता है।

संवादहीनता की चरम स्थिति तब दिखाई देती है जब बंटी के प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दिया जाता "और उसके बाद बंटी से कुछ भी नहीं पूछा गया, कुछ भी नहीं कहा गया"। यह मौन बंटी के भीतर गहरे अकेलेपन और उपेक्षा की भावना को जन्म देता है।

बंटी का मन लगातार असुरक्षा और भय से ग्रस्त रहता है। एक प्रसंग में वह अपने पिता के साथ भीड़ में चलते हुए भी यह अनुभव करता है कि कहीं वह उनसे बिछड़ न जाए। "यह उसकी मानसिक अस्थिरता और भावनात्मक असुरक्षा का प्रतीक है"। यह भय केवल भौतिक दूरी का नहीं, बल्कि संबंधों के टूटने से उत्पन्न गहरे मनोवैज्ञानिक संकट का संकेत है।

इस प्रकार बंटी की स्थिति उस बालक की है जो माता–पिता के संघर्षों का प्रत्यक्ष भुक्तभोगी है, किंतु उन निर्णयों में उसकी कोई भूमिका नहीं है। वह न पूरी तरह माँ के संसार का हिस्सा बन पाता है, न पिता के। "उसकी यह स्थिति उसे एक प्रकार की 'खंडित निष्ठा' में जीने के लिए विवश करती है– अर्थात् वह दोनों से जुड़ा होने के बावजूद किसी का भी पूर्णतः नहीं रह जाता।"

आधुनिक समाज में यह प्रश्न और भी गंभीर हो गया है। आज पारिवारिक तनाव, अलगाव और भावनात्मक उपेक्षा के बीच पले बच्चे अनेक प्रकार की मनोवैज्ञानिक समस्याओं से गुजरते हैं जैसे अकेलापन, असुरक्षा, आक्रोश और आत्म–संकुचन। 'आपका बंटी' इन समस्याओं को बहुत पहले ही साहित्यिक रूप में सामने ले आता है।

अतः कहा जा सकता है कि बंटी का चरित्र केवल एक व्यक्तिगत त्रासदी का चित्रण नहीं, बल्कि समकालीन समाज में विघटित पारिवारिक संरचना के बीच पिसते हुए बाल–अस्तित्व का प्रतिनिधि है। इस दृष्टि से 'बंटी' आधुनिक पारिवारिक विघटन के बीच पिसते हुए बाल–मन की मार्मिक अभिव्यक्ति बन जाता है।

**शकुन का स्त्री-स्वातंत्र्य और दुविधा :**

'आपका बंटी' में मन्नू भंडारी ने केवल पारिवारिक विघटन और बाल–मन की त्रासदी का ही चित्रण नहीं किया है, बल्कि आधुनिक स्त्री के आत्मनिर्णय, स्वतंत्रता और उसकी आंतरिक दुविधा को भी अत्यंत गहराई से प्रस्तुत किया है। उपन्यास की प्रमुख नायिका शकुन एक ऐसी स्त्री है, जो पारंपरिक दाम्पत्य संबंधों की सीमाओं से बाहर निकलकर अपने अस्तित्व और स्वतंत्रता की तलाश करती है।

शकुन का चरित्र इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि वह केवल सहनशील, त्यागमयी और समर्पित पत्नी के रूप में सीमित नहीं रहना चाहती। वह अपने असंतोषपूर्ण वैवाहिक जीवन से मुक्त होकर एक नई जीवन–दिशा की ओर अग्रसर होती है। इस संदर्भ में उसके भीतर यह भावना स्पष्ट रूप से उभरती है कि– "उसे मुक्त होना ही है, एक नई जिंदगी की शुरुआत करनी ही है"। यह कथन उसके आत्मनिर्णय और स्वतंत्र अस्तित्व की आकांक्षा को व्यक्त करता है। "स्त्री को पुरुष की दृष्टि से नहीं, उसके अपने अस्तित्व की शर्तों पर समझना आवश्यक है।"

हालाँकि, शकुन का यह निर्णय सरल नहीं है। वह केवल सामाजिक बंधनों से ही नहीं, बल्कि भावनात्मक स्तर पर भी अनेक द्वंद्वों से गुजरती है। अजय से अलग होने के बाद भी उसके मन में कहीं न कहीं एक आंतरिक संघर्ष बना रहता है– "क्या खुद उसे अजय का संबंध भारी नहीं पड़ने लगा था?... क्या वह खुद भी उससे मुक्त होना नहीं चाहती थी?"। यह आत्मप्रश्न उसकी मानसिक दुविधा और भावनात्मक जटिलता को उजागर करता है।

शकुन का जीवन केवल स्वतंत्रता की आकांक्षा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उसमें एक प्रकार का आंतरिक तनाव भी विद्यमान है। वह अपने निर्णयों को लेकर कभी आश्वस्त दिखाई देती है, तो कभी अपराध–बोध और असमंजस से घिर जाती है। इस स्थिति को व्यक्त करते हुए उपन्यास में संकेत मिलता है कि वह अपने निर्णयों के औचित्य को स्वयं के सामने भी स्पष्ट करने का प्रयास करती रहती है– "जहाँ जस्टिफिकेशन है, समझ लो वहाँ गिल्ट है"। यह कथन उसके भीतर उपस्थित नैतिक द्वंद्व और आत्म–संघर्ष को रेखांकित करता है।

शकुन की दुविधा का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उसका मातृत्व भी है। वह एक ओर अपने व्यक्तिगत जीवन को नए सिरे से जीना चाहती है, वहीं दूसरी ओर बंटी के प्रति उसका भावनात्मक संबंध उसे लगातार विचलित करता रहता है। कई बार उसे यह भी अनुभव होने लगता है कि बंटी उसके जीवन की सहज गति में बाधा बन रहा है– "क्या वह यह नहीं महसूस करने लगी थी कि बंटी अब उसके जीवन की सहज गति में एक रुकावट बन गया है?"। यह स्थिति आधुनिक स्त्री के जीवन में उपस्थित उस गहरे द्वंद्व को उजागर करती है, जहाँ व्यक्तिगत

स्वतंत्रता और मातृत्व के बीच संतुलन स्थापित करना कठिन हो जाता है।

इसके अतिरिक्त, अजय के जीवन में नई स्त्री (मीरा) का प्रवेश और उसके प्रति समाज की सहज स्वीकृति, जबकि शकुन के निर्णयों पर प्रश्नचिह्न लगना, स्त्री की सामाजिक स्थिति पर भी संकेत करता है। शकुन के भीतर यह भाव भी उभरता है कि– "अजय अपनी भरी–पूरी जिंदगी जी रहा है......"। इससे यह स्पष्ट होता है कि पुरुष के लिए जीवन के विकल्प अपेक्षाकृत सहज हैं, जबकि स्त्री के लिए वही निर्णय अनेक मानसिक और सामाजिक संघर्षों से भरे होते हैं।

इस प्रकार शकुन का चरित्र केवल एक स्त्री के व्यक्तिगत जीवन का चित्रण नहीं है, बल्कि वह आधुनिक स्त्री–चेतना, आत्मनिर्णय की आकांक्षा और उससे उत्पन्न जटिलताओं का प्रतिनिधित्व करता है। वह न तो पूर्णतः परंपरागत है और न ही पूर्णतः मुक्तय बल्कि वह इन दोनों के बीच स्थित एक संघर्षशील व्यक्तित्व है।

अतः कहा जा सकता है कि 'आपका बंटी' में शकुन का चरित्र आधुनिक स्त्री के उस द्वंद्व को मूर्त रूप देता है, जिसमें स्वतंत्रता, आत्म–सम्मान, मातृत्व और सामाजिक अपेक्षाएँ एक साथ टकराती हैं। यही कारण है कि शकुन का चरित्र आज भी उतना ही प्रासंगिक बना हुआ है।

**वर्तमान समय में 'आपका बंटी' की प्रासंगिकता :**

मन्नू भंडारी का उपन्यास 'आपका बंटी' केवल अपने समय की पारिवारिक विडंबनाओं का चित्रण नहीं करता, बल्कि वर्तमान समाज की बदलती पारिवारिक संरचना, संबंध–संकट और भावनात्मक विघटन को भी अत्यंत प्रासंगिक ढंग से प्रस्तुत करता है। आधुनिक समय में परिवार, जो कभी स्थायित्व, सुरक्षा और भावनात्मक सहारे का केंद्र माना जाता था, अब अनेक अंतर्विरोधों और तनावों से गुजर रहा है।

आज के समाज में दाम्पत्य संबंधों में अस्थिरता, तलाक की बढ़ती प्रवृत्ति, संवादहीनता, व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आकांक्षा और भावनात्मक दूरी जैसे तत्व सामान्य होते जा रहे हैं। 'आपका बंटी' इन सभी समस्याओं को बहुत पहले ही अपने कथ्य में समाहित कर चुका है। शकुन और अजय के संबंधों में उत्पन्न तनाव, अहं–संघर्ष और संवाद का अभाव आज के अनेक दाम्पत्य संबंधों की वास्तविकता को प्रतिबिंबित करता है।

इस उपन्यास की सबसे बड़ी प्रासंगिकता इस तथ्य में निहित है कि यह पारिवारिक विघटन को केवल पति–पत्नी के संबंधों तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसके दीर्घकालिक प्रभावों को बच्चे के मनोविज्ञान पर भी उजागर करता है। वर्तमान समय में child psychology, emotional trauma और mental health जैसे मुद्दे व्यापक चर्चा के केंद्र में हैं। 'आपका बंटी' इन प्रश्नों को बहुत पहले ही साहित्यिक रूप में सामने लाकर यह सिद्ध करता है कि पारिवारिक विघटन का सबसे गहरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है।

आज के शहरी और मध्यवर्गीय जीवन में बच्चों का अकेलापन, भावनात्मक उपेक्षा, असुरक्षा और मानसिक तनाव एक गंभीर समस्या बन चुका है। ऐसे में बंटी का चरित्र समकालीन बाल–मन का प्रतिनिधि प्रतीत होता है। वह केवल एक काल्पनिक पात्र नहीं, बल्कि उन असंख्य बच्चों का प्रतीक है, जो माता–पिता के व्यक्तिगत निर्णयों और संबंध–संकटों के बीच अपनी पहचान और भावनात्मक संतुलन की खोज में भटकते हैं।

इसके अतिरिक्त, उपन्यास में प्रस्तुत स्त्री–स्वातंत्र्य और उसकी दुविधा भी आज के संदर्भ में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। आधुनिक समाज में स्त्री की स्वतंत्रता, आत्मनिर्णय और व्यक्तिगत पहचान को लेकर व्यापक विमर्श हो रहा है। शकुन का चरित्र इस विमर्श का प्रतिनिधित्व करता है, क्योंकि वह अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेना

चाहती है, किंतु उसके निर्णयों के सामाजिक और पारिवारिक परिणाम उसे गहरे द्वंद्व में डाल देते हैं। यह स्थिति आज भी उतनी ही प्रासंगिक है।

समकालीन जीवन में एक और महत्त्वपूर्ण समस्या हैकृसंवाद का अभाव। आधुनिक तकनीक और संचार के साधनों के विकास के बावजूद व्यक्ति–व्यक्ति के बीच भावनात्मक दूरी बढ़ती जा रही है। परिवार के सदस्य एक साथ रहते हुए भी मानसिक रूप से अलग–थलग पड़ते जा रहे हैं। 'आपका बंटी' इस संवादहीनता के परिणामों को अत्यंत संवेदनशील ढंग से प्रस्तुत करता है।

अतः स्पष्ट है कि 'आपका बंटी' केवल अतीत का उपन्यास नहीं, बल्कि वर्तमान समाज का भी दर्पण है। यह उपन्यास हमें यह सोचने के लिए बाध्य करता है कि आधुनिकता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की दौड़ में कहीं हम पारिवारिक संबंधों की मूल संवेदनाओं को तो नहीं खो रहे। इसी कारण यह उपन्यास आज भी उतना ही सार्थक, प्रासंगिक और विचारोत्तेजक बना हुआ है।

**निष्कर्ष :**

'आपका बंटी' हिंदी साहित्य का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और संवेदनशील उपन्यास है, जिसमें आधुनिक पारिवारिक जीवन की जटिलताओं, दाम्पत्य संबंधों के विघटन, बाल–मन की त्रासदी और स्त्री–चेतना के विविध आयामों का गहन और यथार्थपरक चित्रण किया गया है।

इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह पारिवारिक विघटन को केवल बाहरी घटना के रूप में नहीं, बल्कि एक गहरी मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है। शकुन और अजय के संबंधों का टूटना केवल दो व्यक्तियों का अलगाव नहीं, बल्कि एक ऐसे पारिवारिक ढाँचे का विघटन है, जिसका सबसे गहरा प्रभाव बंटी के जीवन पर पड़ता है।

बंटी का चरित्र इस उपन्यास की केंद्रीय संवेदना का वाहक है। उसके माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि माता–पिता के संबंधों में उत्पन्न तनाव और संवादहीनता का सबसे अधिक दुष्प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। वह न तो पूरी तरह किसी एक पक्ष से जुड़ पाता है और न ही अपने अस्तित्व को स्थिर रूप में पहचान पाता है। इस प्रकार बंटी आधुनिक पारिवारिक विघटन की सबसे मार्मिक अभिव्यक्ति बनकर सामने आता है।

शकुन का चरित्र आधुनिक स्त्री की उस संघर्षशील चेतना का प्रतिनिधित्व करता है, जो अपनी स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय के अधिकार के प्रति सजग है, किंतु साथ ही सामाजिक और पारिवारिक उत्तरदायित्वों के बीच संतुलन स्थापित करने की चुनौती से भी जूझती है।

समकालीन संदर्भ में यह उपन्यास और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि आज के समाज में पारिवारिक संबंधों में अस्थिरता, संवादहीनता और भावनात्मक दूरी बढ़ती जा रही है। ऐसे समय में 'आपका बंटी' हमें यह समझने का अवसर प्रदान करता है कि संबंधों की स्थायित्व केवल सामाजिक व्यवस्था से नहीं, बल्कि संवेदना, संवाद और पारस्परिक समझ से संभव है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'आपका बंटी' आधुनिक पारिवारिक विघटन के संदर्भ में एक अत्यंत प्रासंगिक, यथार्थपरक और मानवीय उपन्यास है, जो आज भी पाठकों को न केवल भावनात्मक रूप से प्रभावित करता है, बल्कि उन्हें अपने समय के सामाजिक और पारिवारिक यथार्थ पर गंभीरता से विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**


1. भंडारी, मन्नू. (2017). आपका बंटी, नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., पृ. सं. 7, 18, 19, 34, 35, 36, 109, 111, 196
2. भंडारी, मन्नू. (2009). एक कहानी यह भी, नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन। पृ. सं.–89
3. यादव, राजेन्द्र. (2015). आदमी की निगाह में औरत, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पृ. सं.–229।
4. राजकिशोर. (2005). आज के प्रश्न बच्चे और हम, दिल्ली : शब्दसृष्टि प्रकाशन, पृ. सं.–9
5. सिन्हा, प्रसाद राजराजेश्वरी. (2000). विकासात्मक एवं समाज मनोविज्ञान, पटना : भारती भवन, पृ. सं.–12।
6. जैन, निर्मला. (2011). स्त्री जीवन : अपनी–अपनी नजर, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पृ. सं.–177।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha
April 2026

ISSN : 2395-7115
Page No. : 86-91

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# जनजातीय समुदायों में परंपरागत ज्ञान, स्वच्छता और स्वास्थ्य व्यवहार का समाजशास्त्री विश्लेषण

**विशाल चन्द**, शोधार्थी

समाजशास्त्र विभाग, लक्ष्मण सिंह महर परिसर, पिथौरागढ़, एस. एस. जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा।

**सारांश :**

यह अध्ययन जनजातीय समुदायों में पारंपरिक ज्ञान, स्वच्छता और उनके सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों के समाजशास्त्रीय विश्लेषण पर केंद्रित है। भारत के जनजातीय समाज में पीढ़ियों से संचित पारंपरिक ज्ञान न केवल उनके जीवन–निर्वाह का आधार है, साथ ही यह उनके स्वास्थ्य और स्वच्छता संबंधी व्यवहारों को भी गहराई से प्रभावित करता है। वर्तमान समय में वैश्वीकरण तथा नवीन विकास प्रक्रियाओं के प्रभाव से परम्परागत ज्ञान प्रणाली परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं। यह अध्ययन बताता है कि स्थानीय मान्यताएँ, रीति–रिवाज और सांस्कृतिक प्रथाएँ स्वास्थ्य संबंधी निर्णयों को कैसे आकार देती हैं। इसके साथ ही आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं और सरकारी योजनाओं के विस्तार ने जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य अवसंरचना और स्वच्छता के स्तर को बेहतर बनाया है लेकिन फिर भी प्रभावी सार्वजनिक स्वास्थ्य रणनीतियों पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक नीतियों के बीच समन्वय की आवश्यकता स्पष्ट रूप से सामने आती है।

अतः यह आवश्यक है कि नीतियों के निर्माण में जनजातीय समुदायों के स्वास्थ्य सुधार के लिए उनके पारंपरिक ज्ञान और सांस्कृतिक संदर्भों को सम्मलित करते हुए स्वास्थ्य योजनाओं का निर्माण किया जाये। इससे स्वास्थ्य सेवाओं की प्रभावशीलता के साथ ही समुदायों में इसकी स्वीकृति और सहभागिता भी सुनिश्चित होगी।

**मुख्य शब्द (Keywords) :** जनजातीय समुदाय, पारंपरिक जीवनशैली, सार्वजनिक स्वास्थ्य, सामुदायिक सहभागिता, पारंपरिक ज्ञान, समाजशास्त्रीय विश्लेषण।

**परिचय :**

भारत में जनजातीय समुदायों की एक समृद्ध एवं विविध सांस्कृतिक परंपरा है। इनका प्रकृति के साथ अनूठा संबंध होता हैं तथा इनका जीवन मुख्य रूप से जल, जंगल, जमीन तीनों पर आधारित होता है। इस कारण जनजातीय समुदायों के स्वास्थ्य, आहार और स्वच्छता संबंधी व्यवहार पर पर्यावरण का गहरा प्रभाव पड़ा है। जनजातीय समाज का पारंपरिक ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक या प्रथाओं के रूप में आगे बढ़ता है तथा साथ ही यह ज्ञान उनके जीवनशैली, स्वास्थ्य तथा स्वच्छता को प्रभावित करता है।

**विश्व स्वास्थ्य संगठन** (2002) जनजातीय के पारंपरिक ज्ञान के प्रसार को परिभाषित करते हुए बताता

है कि परम्परागत ज्ञान इन लोगों के यथार्थवादी अनुभवों तथा प्रेक्षण के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी संचरित होता है।[1]

जनजातीय समुदायों में स्वास्थ्य तथा स्वच्छता की अवधारणा वर्तमान आधुनिक चिकित्सा प्रणाली से भिन्न होती है। ये समुदाय पारंपरिक ज्ञान के अंतर्गत उपचार में जड़ी–बूटियों, नृजातीय चिकित्सा पद्धतियों और धार्मिक–आध्यात्मिक विश्वासों पर अधिक निर्भर रहते हैं। जैसे कि कई जनजातीय समूह रोगों को प्राकृतिक अथवा अलौकिक शक्तियों का परिणाम मानते हैं तथा इनके उपचार के पारंपरिक स्थानीय चिकित्सकों की सहायता लेते हैं। परन्तु वैश्वीकरण, शहरीकरण के कारण तथा सरकारी स्वास्थ्य योजनाओं के विस्तार से जनजातीय समुदायों के परंपरागत स्वास्थ्य व्यवहारों में परिवर्तन देखने को मिल रहा है।

अतः यह आवश्यक है कि जनजातीय समुदायों के पारंपरिक स्वास्थ्य व्यवहारों और आधुनिक स्वास्थ्य प्रणाली के बीच एक संतुलन स्थापित किया जाए। पारंपरिक ज्ञान किसी एक व्यक्ति की खोज नहीं होता बल्कि पूरे समुदाय के सामूहिक अनुभव, प्रकृति के साथ उनके संबंध तथा सांस्कृतिक प्रथाओं के माध्यम से विकसित होता है। वर्तमान समय में विज्ञान के विकास के बावजूद यह पारंपरिक ज्ञान आज भी अत्यंत प्रासंगिक बना हुआ है।

**पारंपरिक ज्ञान की अवधारणा :**

पारंपरिक ज्ञान ऐसा ज्ञान होता है जो किसी समुदाय द्वारा दीर्घकालिक अनुभवों द्वारा विभिन्न समयावधियों में अर्जित किया जाता है। यह समुदायों की जीवनशैली, पर्यावरण तथा सांस्कृतिक विश्वासों से गहराई से जुड़ा होता है। यह पारंपरिक ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परंपराओं, व्यवहारिक अभ्यासों तथा सांस्कृतिक अनुष्ठानों के माध्यम से संचारित होता है।

**अर्पणा कुमारी (2025)** अपने शोध पत्र में बताती है कि वैश्विक घटनाएँ और सूचनाओं के संसार से इतनी ज्यादा चीजें हमें घेर रही हैं कि हजारों साल की हमारी बहुत–सी मूल्यवान ज्ञान पद्धतियाँ ढकती जा रही हैं। इसलिए जरुरी यह है कि हमें अपनी प्राचीन विरासत से भारतीय ज्ञान पद्धतियों को पुनर्उपलब्ध कराना है तथा दुनिया को यह बताना है कि हमारे काम करने की एक भारतीय पद्धति है।[2]

पारंपरिक ज्ञान मुख्य विशेषता यह है कि यह स्थानीय परिवेश के अनुरूप होता है तथा समुदाय की जरुरत के अनुसार निरंतर विकसित होता रहता है। इसमें भेषजक पादपों के उपयोग, नृजातीय चिकित्सा पद्धतियों, प्राकृतिक जीवनशैली तथा पर्यावरण के संतुलन को बनाए रखने की तकनीकों जैसी विविध परम्परागत ज्ञान प्रणालियाँ शामिल होती हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण में अगर हम देखे तो इन परंपरागत ज्ञान प्रणालियों को सांस्कृतिक पूंजी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है क्योंकि यह न केवल किसी समुदाय की एक विशिष्ट पहचान और विरासत को संरक्षित करती है तथा साथ ही सामाजिक संरचना तथा समाज के मूल्यों को भी सुदृढ़ बनाती है।

भारतीय उपमहाद्वीप की जनजातियों में पारंपरिक ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी उनके पूर्वजों द्वारा हस्तांतरित किया गया है। इसके साथ ही इन जनजातीय समुदायों में पारंपरिक ज्ञान का संचरण इनकी अपनी विशिष्ट संस्कृति द्वारा भी होता है।

**जनजातियों में स्वच्छता से संबंधित व्यवहार :**

जनजातीय समुदायों में स्वच्छता से संबंधित व्यवहार उनकी सामाजिक–सांस्कृतिक मान्यताओं, पर्यावरणीय परिस्थितियों तथा पारंपरिक जीवनशैली से गहराई से प्रभावित होते हैं। इन समुदायों में प्रकृति से निकटता के कारण स्वच्छता की अवधारणा आधुनिक शहरी समाज से भिन्न होते हुए भी कई दृष्टियों से प्रभावी है तथा पर्यावरण के अनुकूल पाई जाती है। जनजातीय समुदायों में जल स्रोतों के रूप में नदियों, झरनों तथा अन्य प्राकृतिक स्रोतों का प्रयोग किया जाता है। यह इनके दैनिक जीवन का अभिन्न अंग है। कई जनजातीय क्षेत्रों में शौच संबंधी व्यवहार में खुले में शौच की प्रथा अभी भी प्रचलित है। इसका मुख्य कारण जनजातीय क्षेत्रों में शौचालयों की कमी, आर्थिक स्थिति की कमजोरी तथा पारंपरिक मान्यताएं हैं। खुले में शौच को जनजातीय क्षेत्रों में प्राकृतिक और सामान्य व्यवहार के रूप में स्वीकार किया जाता है परन्तु इसके कारण स्वास्थ्य संबंधी जोखिम बढ़ जाता हैं। इसी प्रकार कचरा निस्तारण के संदर्भ में जनजातीय क्षेत्रों में जैविक कचरे को प्राकृतिक रूप से नष्ट होने के लिए छोड़ दिया जाता है तथा जिससे पर्यावरणीय प्रदूषण अपेक्षाकृत कम होता है। परन्तु इसके साथ ही इन क्षेत्रों में प्लास्टिक एवं अन्य गैर–जैविक कचरे के उचित निपटान की जानकारी का अभाव देखा जाता है। जिस कारण इन क्षेत्रों में भी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो रही है।

पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों और योजनाओं के माध्यम से जनजातीय क्षेत्रों में स्वच्छता के प्रति जागरूकता बढ़ाने का प्रयास किया गया है। जिससे सकारात्मक परिवर्तन देखने को भी मिल रहें हैं। लेकिन साथ ही आधुनिक समय में स्थानीय जनजातीय समुदायों की भागीदारी के साथ स्वच्छता संबंधी कार्यक्रमों को लागू करना आवश्यक है।

**भारत सरकार पत्र सूचना कार्यालय (2025)** के अनुसार भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों की ऊंची पहाड़ियों और घाटियों में स्वच्छता की एक शांत क्रांति हो रही है। यह बदलाव बड़े–बड़े ऐलान के साथ नहीं आता बल्कि यह अलग–अलग कूड़ेदानों की हल्की खड़खड़ाहट, गांव द्वारा चलाए जा रहे रीसाइक्लिंग यूनिट्स की धीमी आवाज और उन नागरिकों के पक्के कदमों से आता है जो अपनी जमीन को कचरे में डूबने नहीं देना चाहते।[3]

**जनजातियों में स्वास्थ्य से सम्बन्धित व्यवहार :**

जनजातीय समाजों में स्वास्थ्य व्यवहार समुदाय की सांस्कृतिक मान्यताओं, परम्पराओं, स्थानीय संसाधनों तथा पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचित पारंपरिक ज्ञान पर आधारित होते हैं। इन समाजों में यह व्यवहार न केवल रोगों की चिकित्सा से संबंधित होते हैं बल्कि साथ ही स्वास्थ्य के समग्र दृष्टिकोण जिसके अंतर्गत शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन तीनों को संदर्भित करते हैं।

**पारंपरिक चिकित्सा से तात्पर्य :**

पारंपरिक चिकित्सा से तात्पर्य किसी स्थान विशेष की जड़ी–बूटियों और विभिन्न वनस्पतियों का उपचार के लिए व्यापक उपयोग से है। स्थानीय रूप में उपलब्ध औषधीय पौधों से संबंधित चिकित्सकी ज्ञान समुदाय के अनुभवी व्यक्तियों जैसे– शमन, वैद्य, हकीम के पास होता है तथा ये स्थानीय समुदायों में रोगों के उपचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**डॉ० पवन दास कुदवान (2017)** अपनी पुस्तक गढ़वाल हिमालय की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति में बताते है कि पारंपरिक चिकित्सा पद्धति से तात्पर्य उस वैदिक ज्ञान से है जो कि प्राचीन समय से जनमानस या प्राणी

मात्र द्वारा व्याप्त विभिन्न बीमारियों एवं व्याधियों के उपचार जड़ी बूटी औषधियों, तंत्र मंत्र तथा दैवीय शक्तियों के पूजा–पाठ, अनुष्ठानों तथा घरेलू उपचारों से संदर्भित किया जाता है।[4]

**सी- युआन पैन व अन्य (2014)** के अनुसार हाल के कुछ वर्षों में स्वास्थ्य में सुधार के लिए हर्बल दवाओं या उससे सम्बन्धित उत्पादों का उपयोग करने वाले व्यक्तियों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। इनके अनुसार विश्व में जड़ी–बूटियों का प्रचलन फिर से बढ़ रहा है और विश्व भर में हर्बल दवाओं का पुनर्जागरण हो रहा है। ये अपने शोध पत्र में आगे बताते है कि मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही जड़ी–बूटियों का उपयोग रोगों के उपचार के लिए एक प्रभावी औषधि के रूप में किया जाता रहा है तथा अब तक हर्बल चिकित्सा पद्धति से सम्बन्धित 53,000 से अधिक प्रजातियों का उपयोग हुआ है।[5]

जनजातीय समुदायों में स्वास्थ्य व्यवहार में धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं का गहरा प्रभाव रहता है। इन समुदायों में कई बार रोगों को केवल जैविक कारणों से नहीं बल्कि आध्यात्मिक या अलौकिक कारणों से भी जोड़ा जाता है। इस प्रकार इनकी सभी प्रथाएं जनजातीय समुदायों के विश्वास तंत्र को दर्शाती हैं और रोग से ग्रस्त व्यक्ति को मानसिक व भावनात्मक संतुलन प्रदान करने में सहायक होती हैं।

जनजातीय समाजों में पारंपरिक स्वास्थ्य व्यवहार में आहार और जीवनशैली का विशेष महत्व होता है। स्थानीय परिवेशों में उपलब्ध खाद्य पदार्थों तथा स्थानीय वनस्पतियों आधारित जड़ी बूटियों का सेवन इन समाजों में स्वास्थ्य को बनाए रखने में सहायक होते हैं। जनजातीय समुदायों में प्रोसेस्ड फूड का उपयोग नही के बराबर होता है, जिस कारण इन समुदायों का पोषण स्तर बेहतर बना रहता है। इसके साथ ही दैनिक जीवन में शारीरिक गतिविधि और प्रकृति के साथ संतुलित जीवन संबंध भी इनमें स्वस्थ जीवनशैली को प्रोत्साहित करते हैं।

**एम. एम. पांडे व अन्य (2013)** अपने शोध पत्र में बताते है कि आहार पूरक और हर्बल औषधियाँ लोगों के बीच लोकप्रिय पूरक या वैकल्पिक उत्पादों के रूप में लगातार बढ़ रहे हैं। ये ऐसे पूरक हैं जो आहार की पूर्ति के लिए बनाए जाते हैं और ये वनस्पतियाँ ताजे या सूखे उत्पादों, तरल या ठोस अर्क, टैबलेट, कैप्सूल, पाउडर, टी बैग आदि कई रूपों में बेची जाती हैं।[6]

**आधुनिकता, परिवर्तन एवं चुनौतियां :**

वर्तमान में आधुनिकता के प्रभाव ने जनजातीय समाजों की स्वास्थ्य संबंधी प्रथा तथा पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। मुख्यतया आधुनिक विकास प्रक्रियाओं और चिकित्सा सुविधाओं के विस्तार ने नया आयाम दिया है। सरकार द्वारा लागू की गयी विभिन्न योजनाओं जैसे स्वच्छता और स्वास्थ्य जागरूकता अभियान जनजातीय समुदायों के जीवन स्तर में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। जिससे कई बीमरियों में कमी आई है। परन्तु इसके साथ ही एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक ज्ञान का संमिश्रण देखने को मिलता है। कई जनजातीय समुदायों में वर्तमान में औषधीय पौधों और पारंपरिक  चिकित्सा के साथ–साथ आधुनिक एलोपेथिक दवाओं और चिकित्सा पद्धतियों का उपयोग हो रहा है। जिससे एक समन्वित स्वास्थ्य व्यवहार विकसित हो रहा है।

**बी. एस. रेड्डी (1986)** बताते है कि लोक चिकित्सा पारंपरिक उपचार की एक ऐसी पद्धति है,जो सदियों से चली आ रही है। इसके अंतर्गत शरीर के संतुलन (त्रिदोष सिद्धांत) और प्रकृति से जुड़ी मान्यताओं पर भरोसा किया जाता है। इसमें जादू–टोना, धार्मिक विश्वास और मौखिक परम्पराओं के रूप से सीखी गई जानकारी भी

शामिल होती है। भारत में यह औषधि बहुत प्रचलित है क्योंकि इसे गाँव के कम पढ़े–लिखे लोगों से लेकर शहर के शिक्षित और उच्च वर्गीय लोग भी इस्तेमाल करते हैं।[7]

वैदिक काल में भी ग्रामीण क्षेत्रों में लोक–विश्वास पारंपरिक चिकित्सा पद्धति का मूल आधार था। अथर्ववेद तथा ऋग्वेद जैसे वेदों में वर्णन मिलता है कि व्यक्ति स्वयं के दुःखों से मुक्ति पाने हेतु प्रकृति की उपासना करता था। अथर्ववेद में कुछ मंत्रों में ऐसी वनस्पतियों का वर्णन किया गया है जो अनेक प्रकार के जहर नष्ट करती हैं।[8]

जनजातीय समुदाय में देखा जाता है कि विभिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक क्रियाकलाप देवी–देवताओं तथा आत्माओं के इर्द–गिर्द घूमते हैं। अलौकिक शक्ति को शक्तियों और देवी–देवताओं के रूप में पहचाना गया है। ये समुदाय में अनहोनी घटनाओं को नियंत्रित एवं प्रभावित करते हैं। इसलिए अपने स्वास्थ्य और बीमारी के लिए उनके अपने विशेष देवता होते हैं। इन सभी देवी–देवताओं का प्रभाव, नियन्त्रण के साथ प्रकृति और कार्य विधि का भी अपना अलग–अलग योगदान होता है।[9]

परन्तु आधुनिकता के प्रभाव के साथ ही वर्तमान में पारंपरिक ज्ञान और स्वास्थ्य व्यवहार से संबंधित प्रणालियाँ विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना कर रही हैं। पारंपरिक ज्ञान जो मौखिक और अनुभवजन्य आधार पर सदियों से संरक्षित रहा धीरे–धीरे विलुप्त होने की चुनौतियों का सामना कर रहा है। वर्तमान में नई पीढ़ी का झुकाव आधुनिक जीवनशैली और चिकित्सा प्रणाली की ओर बढ़ने से पारंपरिक प्रथाओं का संरक्षण कठिन हो गया है।

**निष्कर्ष :**

अतः उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जनजातियों का पारंपरिक ज्ञान, स्वच्छता तथा स्वास्थ्य व्यवहार सामाजिक रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इनके संरक्षण के साथ ही आधुनिक चिकित्सा के लाभों के बीच संतुलन स्थापित किया जाए, जिससे सांस्कृतिक विरासत और स्वास्थ्य दोनों का समुचित विकास सुनिश्चित हो सके। इन चुनौतियों का समाधान न केवल संरक्षण तक सीमित होना चाहिए बल्कि उसके साथ ही पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक संदर्भ में पुर्नस्थापित और सशक्त बनाने के प्रयास भी आवश्यक है। अगर देखा जाये तो जनजातीय समुदायों का पारंपरिक ज्ञान न केवल अतीत की धरोहर है बल्कि साथ ही वर्तमान और भविष्य के स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के लिए एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शक है।

**संदर्भ ग्रन्थ :**

1. World Health Organization (WHO) (2002). Traditional Medicine Strategy, 2002-2005. Geneva : World Health Organization.
2. Kumari, Arpana. (2025). भारतीय ज्ञान परंपरा और विश्वबोध :– एक समीक्षात्मक दृष्टिकोण. International Journal For Multidisciplinary Research. 7. 10.36948/ijfmr.2025.v07i05.55519.
3. Press Information Bureau. (2025, December 16). Features. Government of India. https://www.pib.gov.in/FeaturesDeatils.aspx?NoteId=156518&ModuleId=2&reg=3&lang=2?
4. कुदवान, पी.डी., (2017), गढ़वाल हिमालय की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी,

देहरादून, उत्तराखण्ड, पृष्ठ संख्या–13–14.

5. Pan, S. Y., Litscher, G., Gao, S. H., Zhou, S. F., Yu, Z. L., Chen, H. Q., Zhang, S. F., Tang, M. K., Sun, J. N., & Ko, K. M. (2014). Historical perspective of traditional indigenous medical practices: the current renaissance and conservation of herbal resources. Evidence-based complementary and alternative medicine : eCAM, 2014, 525340. https://doi.org/10.1155/2014/525340
6. Pandey, M. M., Rastogi, S., & Rawat, A. K. (2013). Indian traditional ayurvedic system of medicine and nutritional supplementation. Evidence-based complementary and alternative medicine : eCAM, 2013, 376327. https://doi.org/10.1155/2013/376327
7. रेड्डी, बी० एस०, 1986, एन अप्रोच टू द इन्टीग्रेशन ऑफ ट्रेडीसन ऑफ मेडिसिन एण्ड मॉर्डन मेडिसिन : अ हैपोथिकल मोडल इन, बी. चौधरी ऐडिटेड ट्रायबल हेल्थ : सोसियो–कल्चरल डाइमेनसन, इण्टर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ० 16.
8. जैन, कैलाश चन्द्र, 1986, 'प्राचीन भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक अध्ययन' श्री पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, पृ० 226.
9. चौधरी, एम० के० 1986, 'इम्पैक्ट ऑफ प्रिवेलेन्ट डिजीज अमंग द ट्रायबल ऑफ ट्रायबल कनसनट्रेटेड एरियाज ऑफ वेस्ट बंगाल, इन बी० चौधरी ऐडिटेड ट्रायबल हेल्थ : सोसियोकल्चरल डाईमेन्सन. इण्टर–इण्डिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha
April 2026

ISSN : 2395-7115
Page No. : 92-107

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# Sub-Categorization in OBC Quota & the pursuit of Justice : Revisiting the Karpoori Thakur Formula in Context of Bihar

**Kuldeep Singh**
UGC- Junior Research Fellow
Department of Political Science , University of Delhi

**Abstract :-**

The policy of reservation has been one of the most enduring and contested instruments of social justice in India. Originally conceived as a means to rectify historical injustices and provide representation to socially marginalized communities and classes, the reservation system has undergone multiple transformations over the decades. This journey started from the caste-based census of 1861 to the Communal Award in 1932 and extended to the constitutional provisions and various commissions. A few years ago, the debate on sub-categorization was revolving only within the Other Backward Classes (OBCs), reigniting questions about equality, representation, and the moral foundations of democracy.

We want to clarify a very important point: sub-categorization or sub-classification is not the same as the creamy and non-creamy layer approach; these are fundamentally different processes. Subcategorization refers to the internal division within caste group based on the relative vulnerability of its constituent communities. Within a single reservation category, few castes may be more vulnerable than other caste. Creating sub-groups within the same quota & allocating different reservation of shares accordingly on the basis of caste backwardness is known as sub- categorisation or sub-Classification. On the other hand, According to Indira Sawhney judgement (1992) dividing people within the same caste on the basis of economic factor, i.e. Creamy vs Non- Creamy. This form of classification focuses not only one factor of caste disadvantage but on income, wealth, or other socio-economic indicators. In one line, sub-categorization means dividing caste reservation category according to intra-caste backwardness, while the creamy-layer principle is an economic exclusion within the same caste group (Indian Express, 2024; Round Table India, 2024).

As we have seen recently, the debate on sub-categorization has expanded to other quota groups such as Scheduled Castes and Scheduled Tribes as well (following the Supreme Court judgement on 1st August 2024). In this term paper, we are exploring the evolving discourse of subcategorization through the lense of social justice and equality. We will critically examines whether the existing framework of reservation satisfactorily address the "intra-group disparities" or whether internal categorisation has resulted in to forming new hierarchies among the beneficiaries. After understanding & analysing philosophical frameworks, constitutional provisions, judicial interpretations, and comparative state experiences. This study evaluate and understand the implications of sub-categorization for India's democratic ethos, the idea of substantive equality (Real Equality), and the future trajectory of social justice in the 21st century. The analysis wants to create a balance the normative ideals of equality & justice in the context of social justice.

**Keywords** – Sub-Categorization, OBC Reservation, Karpoori Thakur Formula, Social Justice, Affirmative Action, Intra-group Disparity, Mandal Commission, Substantive Equality

**Introduction :-**

Our Constitutional forefathers and political leadership had unwavering commitment to the need for affirmative action for the hitherto deprived sections of society (promotion of social justice and equality), which was institutionalized in Articles 15(4) and 16(4) of the Indian Constitution. Article 15(4) of the Constitution allows positive discrimination for the benefit of socially and educationally backward classes of society, whereas Article 16(4) refers to the State having the power to make rules of reservation for disadvantaged classes of people.

In the original Constitution, the provisions of reservation were made only for Scheduled Castes (SCs) and Scheduled Tribes (STs). Where as, the 15% of the seats are reserved for schedule caste & 7.5% seats are reserved for schedule tribes not only at educational & government job level, but also for political level. This provision was initially for ten years but later government extended it accordingly & make more complex. Later on, this idea of affirmative action policy created a greater impact and played greater role in Indian politics in terms of mobilization and voting behaviour. In the 1970s, Kothari wrote a book where he discussed a new theory i.e. Social Cleavage Theory" in the Indian context. He mentioned that the role of caste in Indian politics is not a one-way or single way phenomenon but vice-versa in the real sense "Politicisation of caste" (Kothari, 1970). This presents the idea of deeply-rooted caste system in the social fabric of India.

Apart from SCs and STs, there were other socially and educationally backward communities that were not part of this positive discrimination system. But, they were clearly educationally and economically backward as propounded by various studies & reports submitted by commission. Then,

prime minister pandit Nehru government formed first commission for the identification of other backwards beyond SC & ST under article 340, i.e. Kaka Kalelkar Commission in 1953 (report submitted in 1955). Later, the Mandal Commission was formed by the Janata Party led government by then PM Moraji Desai in the late 1970s. The Commission advocated for 27% reservation for OBCs in central government jobs & educational institution.

Apart from upper-caste mobilization against it in the 1990s that saw dramatic self-immolations, certain sections of OBCs were also uneasy about its benefits. In terms of "Most Backward Classes" (MBCs) as we shall see, they accused the dominant groups within OBCs of hijacking and cornering the benefits of reservation. And the benefits are not trickle down to lower OBCs (as shown in the G.Rohini and other commissions). This has led to a growing demand for subcategorization among OBCs to ensure equitable benefits of reservation. In the Mandal Commission formula, there had been no discussion on sub-categorization within the quota for backward classes (Chaudhary, 2023). But in recent years, the issue of sub-categorization within the OBC quota to ensure penetration of reservation benefits to the least well-off among the backward classes has gathered momentum. The Government of India appointed the 3rd Backward Classes Commission in 2017 under the chairmanship of Justice G. Rohini. According to the Rohini Commission Report, 2,663 castes are covered under OBC reservation. However, it also pointed out uneven development created after the implementation of OBC reservation. Many states did not implement the reservation policy in same manner as Mandal commission recommended. (Chaudhary, 2023).

An important case study is Bihar. Under Karpoori Thakur, it implemented affirmative action policy for backward classes a decade before the Mandal Commission report was implemented. In 1978, the then Chief Minister of Bihar implemented reservation within OBCs in a sub-categorization manner (different from Mandal commission recommendation) in which 8% was reserved for economically backward communities (within OBCs), 12% for other backward communities, 3% for economically weaker sections (EWS) within the general category, and the remaining 3% reservation for women of all categories. This formula of sub-categorization came to be popularly known as the "Karpoori Thakur Formula". (Singh & Anmol, 2024). Thus, the growing agitation among lower OBCs for the claim of their rightful share in the State's affirmative action policies which has been cornered by the few dominant caste called as "New Brahmins".

If we want to understand the intensity and magnitude of this sub-categorization formula in promoting the idea of social justice, we can do so through a comparative study of the two different formulas implemented in two different states: Mandal vs. Karpoori in Bihar and Uttar Pradesh. Recently, the debate on sub-categorization has also begun to revolve around SC and ST quotas as well. In this

research essay, I am briefly discussing every dimension of social justice. Thus, we are analyzing every dimension of it.

**Relevance of the topic in today's context :-**

**1. Demographic Significance and Policy Priority-**

With Extremely Backward Classes (EBCs) comprising approximately 36% and Backward Classes (BCs) around 27% of Bihar's population, these groups hold substantial demographic weight. This magnitude reinforces the policy relevance of affirmative action measures aimed at achieving social justice & substantive equality. When we examine both group together, it becomes clear that they collectively constitute approximately two-thirds of the total population (Census Report, 2023).

**2. Persistent Debates on Affirmative Action-**

Even after nearly five decades of implementing reservations, the debates surrounding their necessity and effectiveness persist. The changing socio-economic landscape—particularly the expansion of private-sector employment and the decline of traditional occupations—has heightened anxieties among communities in the unreserved category, who increasingly rely on limited government job opportunities. Moreover, demands for reservation are increasingly visible across all social groups and communities. Due to the limited availability of government employment opportunities, individuals have begun to associate their social identity with access to such jobs. *From an analytical perspective, this raises an important question: Does the reservation system genuinely ensure equitable participation in these domains, and if so, to what extent?*

**3. Assessment of Policy Effectiveness-**

These conditions compel a reassessment of how effectively affirmative action has advanced substantive equality. Despite its long history, questions remain regarding whether reservation policies have adequately addressed structural inequalities or merely generated new layers of contestation.

**4. Judicial Developments and State-Level Responses-**

Recent Supreme Court judgments endorsing the sub-categorization of Scheduled Castes (SCs) and Scheduled Tribes (STs) have intensified policy discussions. While the Central Government declined to implement such measures nationally, several state governments have begun adopting sub-categorization frameworks, citing the Court's reasoning to ensure more equitable distribution of reservation benefits within these groups. Telangana & Andhra Pradesh are the first ranker state for the judgement implementation.

Many political thinkers and social scientists support this initiative but many of are against it. According to, Srinivas argues that economic advancement has created internal inequality within SC/ST groups, and therefore applying a creamy-layer type exclusion may help reservations reach the

most disadvantaged, even through caste discrimination continues regardless of income (Srinivas, 2016).

**Historical Context of the issue :-**

The policy of reservation in India has its roots in the centuries-old struggle against caste-based discrimination and social exclusion. The caste system, with its rigid hierarchies, historically denied vast sections of society—especially the Shudras, Dalits, and Adivasi sections—access to education, property, and participation in governance. This structural inequality, which originated thousands of years ago, became one of the central challenges for the modern Indian state as it sought to build a democratic society based on the ideals of equality and justice. The evolution of reservation policies from the British period to today to make society more inclusive and just, therefore, must be understood as a conscious attempt to translate these ideals into institutional mechanisms of social transformation.

**1.1) Origin of the Caste System in the Indian Society :**

The caste system in India, known as the varna-jati hierarchy, is one of the world's most enduring and complex systems of social stratification. The intensity and rigidity of caste can be understood by a quote of Ambedkar: "A caste is an enclosed class. You cannot have mobility of status within it. You are born into it and you die in it" (Ambedkar, 1936).

Its origins can be traced to the early Vedic period (around 1500–1000 BCE), when society was organized around occupational and ritual distinctions (on the basis of work or business). The story began with the Vedas, written between 1500 B.C. and 500 B.C. The earliest reference appears in the Purusha Sukta of the Rig Veda (considered to be the earliest of the four Vedas), which describes society as composed of four varnas—the Brahmins (priests and scholars), Kshatriyas (warriors and rulers), Vaishya's (traders and agriculturists), and Shudras (laborers and service providers). Among the Shudras there were many divisions and hierarchies: the upper Shudras lived inside society, while the lower Shudras lived outside town and were also called "Chandals". According to Thapar, that early Vedic society had fluid occupational categories, not rigid caste groups. She also discusses how Purusha Sukta presents a symbolic division, not a strict hereditary system (Thapar, 2002). By the later Vedic period (1000–500 BCE), these divisions gradually hardened into a more formal hierarchy and moved towards a more rigid form. The concept of Varna became closely tied to ideas of purity and pollution (impurity), and birth began to determine one's social and ritual status. The rise of Brahmanical orthodoxy further strengthened this system of purity vs pollution through religious texts such as Dharmashastras and Manusmriti. In which social classification of Varna was based on caste based occupations & gradually make it more rigid.(Thapar, 2002).

Manusmriti was the first book where laws were codified for the order of the society.

With passage of time the Varna system evolved in to more complex "Jatii" system. Now, there are thousand of local endogamy groups which was based on occupation, region and kinship. One of the positive of this Jatii system was that it allowed greater social diversity but also entrenched inequality and exclusion (village-based hierarchies), especially for groups later classified as "untouchables" or Dalit's & Jatis are endogamous (marrying within the group). Later on, Srinivas (1952) beautifully explained how these four Varna's was divided in to thousand Jatis, the nature was became more rigid and permanent based on hierarchy. Thapar explained how this process intensified during post Maurya & Gupta period.

Phule in his work "Gulamgiri" provides a detail & systematic create of Ideological foundation of Brahmanism. The core idea of phule's critique revolves around the concerned that the Manusmriti which viewed as a text that institutionalized & legitimized inequality through a constructed & self serving methodology. He also talked about Brahminical elites who crafted fabricated story to naturalize & legitimized the Hierarchy. For example: the vary popular claim that brahmin emerge from the head or the arms of god brahma while shudra from his feet.

And thus, Phule tries to explain such narrative but only divine truth but they were merely tools of deploy social sub- ordination & justify ideological well established authority of upper caste. Through his work, Phule exposed how these ritual practices religious text & methodological story led the strong foundation of propaganda which unveiled the consolidated the Brahminical hierarchy & dominance. His critique argumented on the earliest rationalist, & also provided a intellectual foundation for subsequent movement against operation in India.

**1.2) Early Efforts and Colonial Precedents**

The origin of the idea of reservation predates Indian independence, starting from the ancient period to the present. During the colonial period, several social reformers and regional movements had already begun to demand political and educational representation for the subaltern classes. Many leaders also emerged during that time, such as Jyotirao Phule, Savitribai Phule, Fatima Sheikh, and Krishna Rao Pandurang, etc.

One of the earliest examples was the Hunter Commission (1882), which acknowledged the educational backwardness of certain communities. This was followed by the Southborough Franchise Committee (1919), which recognized caste as a basis for political representation. Even before that, from 1909, various religious groups received political reservation from the MorleyMinto Reforms to the Montagu-Chelmsford Reforms in 1919; this process continued without interruption. In 1932, the Communal Award introduced by the British government further institutionalized the idea of separate

representation for depressed classes. Although fiercely opposed by Mahatma Gandhi, it eventually led to the Poona Pact (1932) between Gandhi and Dr.

B. R. Ambedkar, which replaced separate electorates with reserved seats for Scheduled Castes in legislatures. This compromise marked a critical shift—from separate representation based on community identity to affirmative representation within a unified political framework.

**Post-Independence Vision: Justice through Equality :-**

After independence, the framers of the Indian Constitution, particularly Dr. Ambedkar, recognized that formal equality (mentioned in Article 14) was insufficient to dismantle centuries of social hierarchy. The Constitution thus enshrined both negative rights (prohibiting discrimination under Articles 14–16) and positive measures (permitting affirmative action under Articles 15(4) and 16(4)), also called "positive discrimination". According to Galanter, India's Constitution balances two type of equality Formal equality vs Compensatory/substantive equality. He talked about that the Constitution had to "compete" between equal treatment & compensatory treatment hence called be "Competing Equalities" (Galanter, 1984).

The most important Article 15 of the Indian Constitution prohibits the state from discriminating against any citizen on the grounds of race, religion, caste, sex, or place of birth. It guarantees equal access to public places like shops, restaurants, and roads for all citizens (Bare Act, 2022). Galanter repeatedly writes that the reservation is not about giving "special privilege" rather it is intended to provide or create equal starting points for all communities. He also intended that Democracies require compensatory policies to level the playing field.

Article 16 of the Indian Constitution guarantees equality of opportunity in public employment for all citizens, ensuring no one is discriminated against on the basis of race, caste, sex, descent, place of birth, or residence, but it allows for exceptions like reservations for inadequately represented groups and reservation in promotions for SCs and STs (Bare Act, 2022).

**The Mandal Moment and the Expansion of Reservation :-**

After two decades, the most transformative phase came with the Second Backward Classes Commission (Mandal Commission, 1979), which sought to identify and list the Other Backward Classes (OBCs) based on social, educational, and economic criteria. On the recommendation of commission 27% reservation given in central administered jobs because it consider that income or occupation not the solely reason to decide backwardness. According to the data released by commission around 2500 castes, considered to be backwards & In 1990, the report implemented by V.P. Singh government and this led to widespread agitation and violence in almost all over the country.

Later, many social thinker called the Indian caste politics in the framework of "Mandalisation

of Politics" & the upper caste smartly understand the whole issue and adjusted themselves as a subordinate position (Jaffrelot, 2003).But, over the following decades, it also revealed a significant internal imbalance—certain sub-castes within the OBC category, such as Yadav's, Kurmis, or Vokkaligas, were able to secure greater political and economic benefits than others like the Most Backward Classes (MBCs) (Chaudhary, 2024).

**The Rise of the Sub-Categorization Debate :-**

The debate over sub-categorization began first within Scheduled Castes and Scheduled Tribes and has a long history. It originated from 1970s, when the Punjab government divided schedule caste reservation in to two distinct category i.e. Valmiki & Mazhabi Sikh communities. Then, In 1994 the Madiga Reservation Porata Samiti (MRPS) was formed for the demand of sub- categorization by the marginalized communities within Schedule caste. Later, one more commission was formed by Andhra Pradesh government i.e. P. Ramachandra Raju Commission. It recommended dividing Schedule Caste in to four category and the government implemented the recommendation of the commission. Then, the judiciary entered in 2004, and struck down the Andhra Pradesh government action in the E. V. Chinnaiah case, ruling that the entire Scheduled Castes category must be treated as a homogeneous group.

But with the Supreme Court judgment once again, the issue of sub-categorization came into existence. In August 2024, a seven-judge bench of the Supreme Court allowed sub-classification of SCs and STs in *Devendra Singh v/s State of Punjab* case . Following that, Telangana became the first state to formally implement SC subcategorization in 2025.

And in the same way the journey of sub- classification within the OBCs started from "Indira Sawhney judgment in 1992, & OBCs were classified into two classes on the basis of economic criteria I.e. Creamy vs Non-Creamy layer. On the other side, states were working parallely by making separate commissions, and Bihar became the first state to sub-categorize OBCs into EBC and BC called as "Karpoori Thakur Formula". Again, a major attempt came in Andhra Pradesh (1994), where the state divided OBCs into four groups (A, B, C, D) to ensure more equitable distribution of benefits. Other states, including Tamil Nadu, Bihar, Haryana, and Karnataka, later experimented with similar models. These initiatives acknowledged that the OBC category was not homogeneous but deeply stratified—a reflection of India's complex social structure.

At the national level, a commission formed in 2017 submitted its report in 2024. The Justice G. Rohini Commission (2017) was appointed to examine sub-categorization within the OBCs. Its preliminary findings revealed that just 10% of OBC communities had taken nearly 80% of the total benefits of reservation in central jobs and education. This data confirmed the longstanding claim that

dominant OBC groups were monopolizing opportunities, leaving the most marginalized castes.(Rohini, 2023).

**Continuity and Change in the 21st Century :**

In the 21st century, the reservation policy has entered a new phase of scrutiny. The expansion of education, liberalization of the economy, and digital transformation have created new axes of inequality—between rural and urban, formal and informal, connected and disconnected populations. At the same time, the rise of identity-based politics has intensified competition among castes and sub-castes for limited state resources; for example, the Rajbhar and Nishad in Uttar Pradesh, the Mallah and Nia in Bihar, the Valmiki and Ravidasi in Punjab and Haryana, and so on.

Moreover, this debate does not end here. Increasingly, even members of the unreserved (general) category have begun demanding reservation, largely because the scope of government employment has steadily narrowed. Many among them perceive that their share in public-sector institutions is declining, which may eventually push their social identity into a state of crisis. This is why communities such as the Marathas in Maharashtra, the Jats in Haryana, and the Patidars in Gujarat have also mobilized to demand inclusion within the reservation framework (Deshpande, 2017). The demand for sub-categorization and inclusion in reservation policy reflects this evolving reality: it is both a critique of earlier policies and a call for a more nuanced, evidence-based approach to social justice.

**Theoretical framework :**

The theoretical foundation of this study lies at the **element of social justice & equality.** In the Indian context, reservation policy has evolved as both a moral and constitutional mechanism to correct historical injustices and enable substantive equality not only procedural equality. There are many ways to implement reservation policy (Affirmative policy). Out of which, Karpoori Formula is also one within it. Bihar represents a unique experiment within this framework— by initiating Sub-Classification within OBC Caste from the initial stage.

The study is grounded in the theory of social justice (Rawls , Amartya Sen, & Michael Walzur) & equality through the principle of Ronald Dworkin & the principle of compensatory discrimination (Galanter). The states like Bihar design to localized affirmative action policies, in the shape of Karpoori formula, which aimed to promote substantive equality by promoting intra group equity among OBC's through sub- categorization- an application of **relative deprivation theory** in policy design to innovative in the pursuit of social justice.

At the conceptual level, from John Rawls theory of justice, particularly the *principle of justice as fairness.* From John Rawls's perspective of *justice as fairness*—where fairness means no arbitrary

discrimination against anyone—the main question arises: Is justice equality or fairness? The answer, according to Rawls, is fairness. He argues that social and economic inequalities are permissible only if they benefit the least advantaged. This notions underpins India's policy of reservations, which extends beyond formal equality to achieve substantive or distributive Justice. The next question is whether justice prohibits all sorts of discrimination. The answer is no. Justice permits positive discrimination in favor of weaker sections, such as through affirmative action, special incentives, and similar measures. Thus, sub-categorization can be justified if it ensures that the most marginalized groups truly benefit, thereby aligning with the **"difference principle"**(Rawls, 1971).

Several political philosophers, including G.A. Cohen, have offered strong critiques of John Rawls. Cohen argues that Rawls's theory of justice ends up justifying certain forms of inequality as long as they satisfy the "difference principle"—that is, as long as they maximize the benefits of the least advantaged. According to Cohen, this approach restricts justice to the domain of basic institutions and public structures. In contrast, Cohen insists that justice must also operate in the sphere of everyday choices, interpersonal behavior, and social practices. For him, justice is not only about institutional design but also about the ethical commitments and actions of individuals in daily life. Applied to our topic, Cohen's perspective suggests that justice cannot be achieved merely through the implementation of reservation policies. Substantive equality, in his view, requires a comprehensive transformation of social relations, norms, and attitudes across all dimensions of society, not only within formal institutions. He argued that if you want equality in real sense then nobody benefitted by the market incentive then, to some extent the idea of substantive equality established in the society. (Moon, 2015)

On the other side, "Equality of Opportunity" principle of difference principle also supporting the argument behind the Affirmative Action Because this principle concerns the idea of equal opportunities, we find that, in a real sense, affirmative action policies seek to actualize this very principle. By rectifying historical injustices, they attempt to create a level playing field and promote inclusive participation within a democratic society. The Inclusive participation in institutions-universities, bureaucracy, politics improves- legitimacy of democracy, diversity of perspectives, trust among marginalized groups etc. (Acharya, 2008).

On the other hand, Amartya Sen, through his *capability approach*, emphasizes that **capability is the ability to do something**, means to do what you wants to do according to our capacity which becomes possible only in the absence of deprivation. Sub-categorization, in this sense, is meaningful only if it translates into genuine empowerment of sub-groups. It also resonates with the concepts of *Niti* and *Nyaya* 'Substantive view of justice' (Sen, 1999).

Similarly, Michael Walzer, in his notion of the *spheres of justice*, asks whether the benefits of reservation extend across multiple spheres of justice and whether sub-categorization can address layered social hierarchies while promoting social inclusion. Walzer didn't limit the idea of justice not only in the sphere of political and economic rather in every sphere but he also told that there is not a fixed one formula of justice for the every sphere of justice. If you want justice in real sense so, there will be different formulas for different spheres (Carter, 1999 p.107-109).

So, this is also one formula in a public sphere to create justice (Karpoori Thakur Formula) constitutes a significant policy instrument aimed at advancing social justice and substantive equality. This study seeks to assess the extent to which the formula contributes to embedding these principles across multiple spheres of social life. Although its primary objective is to enhance the representation of marginalized groups within government institutions and public sector employment, it is necessary to evaluate whether this increased representation generates beneficial outcomes beyond the occupational domain. For example, when an individual's economic position improves as a result of the formula's provisions, an important question arises: does this economic advancement translate into broader social gains, such as enhanced community participation, greater recognition within local hierarchies, or increased interaction with socially dominant caste groups? Examining these wider effects will enable us to determine the broader impact of the Karpoori Thakur Formula in promoting justice and equality across society.

Ronald Dworkin further contributes to this debate through his principle of "*equality of resources"*. He talking about two luck one is brute luck & another one is option luck. He argued that individuals should not suffer disadvantages arising from "brute luck," such as caste or social background. Subcategorization, in this sense, seeks to address structural disadvantages within the OBC category, ensuring that weaker sections are not overshadowed by relatively privileged groups (Dworkin,1981). So, if a person or individual born into a lower or marginalized caste is entirely beyond their control. In other words, if a person faces dis-advantages solely because of the social group into which they were born, then, in Dworkin's framework, this constitutes *brute luck.* To address such unchosen inequalities, Dworkin proposes an insurance-based model, and by extension, affirmative action policies can be understood as a mechanism similar to an insurance scheme- designed to compensate individuals for disadvantages arising from brute luck.

Complementing this is the theory of compensatory discrimination, elaborated by Marc Galanter (1984) in **Competing Equalities**. Galanter uses the phrase "Competing equalities" to describe the tension between two different concept of equality in India: formal equality (Equality of Treatment) vs substantive equality (Equality of outcomes or Opportunity). Why they compete because these two

forms of equality often conflict with each other in law, politics, and public policy. Giving reservations appears to violate formal equality and on the other side, not giving reservations violates substantive equality. So, “Competing equalities” refers to the conflict between treating everyone the same and treating disadvantage groups differently to make them genuinely equal. In his views, reservations as a form of positive discrimination designed to compensate for the cumulative disadvantages imposed by the caste system. The Karpoori Thakur Formula deepened this approach by recognizing intra-OBC disparities and institutionalizing a more nuanced form of compensation.(Galanter, 1984).

The **theory of relative deprivation** further explains the rationale behind sub-categorization. Within the broad OBC category, certain castes experienced feelings of exclusion, perceiving that dominant intermediate castes monopolized reservation benefits. Sub-categorization, therefore, emerged as a corrective to internal inequities-an attempt to democratize the benefits of Reservation. According to the Ambedkar, vision of social justice as both representational and transformative, ensuring participation of the most marginalized in democratic governance. To establish substantive equality and justice in the country, numerous frameworks, agendas, and policies have been introduced. Among these, the concepts of the creamy layer and non-creamy layer were implemented to ensure that the benefits of affirmative action reach those who genuinely need them.

Over time, additional mechanisms have been adopted to strengthen the effectiveness of these measures. Several institutional structures were created for this purpose, including granting constitutional status to bodies responsible for safeguarding the interests of Scheduled Tribes (STs) and Other Backward Classes (OBCs) through constitutional amendments. So, we conclude with the Acharya text that the affirmative action is justified only when it advances substantive equality, correct historical injustice, and is periodically reassessed to ensure fairness and effectiveness (Acharya, 2008).

**Comparative Analysis :**

To establish substantive equality and justice in the country, numerous frameworks, agendas, and policies have been introduced. Among these, the concepts of the creamy layer and non-creamy layer were implemented to ensure that the benefits of affirmative action reach those who genuinely need them. Over time, additional mechanisms have been adopted to strengthen the effectiveness of these measures. Several institutional structures were created for this purpose, including granting constitutional status to bodies responsible for safeguarding the interests of Scheduled Tribes (STs) and Other Backward Classes (OBCs) through constitutional amendments.

Currently, in order to ensure that these interventions reach the most deserving groups, the government is exploring sub-categorization within backward classes. However, to understand the

true intensity and implications of such measures, one can examine the outcomes of Karpoori Thakur's formula, which was implemented earlier, and compare it with the Mandal Commission's framework, which conceptualized OBCs as a relatively homogeneous category. A comparative study of these two models provides a deeper understanding of how each formula contributes to the promotion of social justice and equality.

**Other- Nations Address Structural Inequalities : Comparative Perspectives :**

At the international level, different countries use different methods to overcome inequality and promote justice, such as in India—reservations in education, jobs, political seats, and quotas for women in local governance. In Brazil, there are racial quotas in public universities for Afro Brazilians and Indigenous groups. Canada follows Will Kymlicka's model, such as selfgovernment rights for Indigenous peoples and language and cultural protection for Quebec. Spain follows regional autonomy for Catalonia and the Basque Country for the protection of minority cultures and to share power in diverse societies. The United States follows university admission preferences for racial minorities and diversity-based hiring goals.

A very interesting study has been done by Acharya, where his study compares how India and the USA conceptualize, justify, and implement affirmative action for historically disadvantaged groups. The central aim of his study is to understand how two different constitutional traditions address questions of equality, justice, and group disadvantage. In the context of the USA, he explains that the U.S. Constitution does not explicitly mention affirmative action; it evolved through judicial interpretation of the Equal Protection Clause. The courts of America strictly scrutinize affirmative action policy.

In his concluding remarks, he explains two or three basic differences by comparison: India shows explicit constitutional design to protect disadvantaged groups, and the USA demonstrates the role of courts in shaping the limits of affirmative action. He also addresses that both countries are facing difficulty in achieving genuine equality without addressing structural oppression (Acharya, 2008, pp. 267–297).

**Success and challenges :-**

- Sub-categorization may be considered, to some extent, as an effective mechanism for ensuring that the benefits of reservation reach those groups that are in the greatest need, thereby contributing to the establishment of substantive equality within society. However, a parallel challenge arises: what guarantee exists that such measures will not themselves generate new forms of inequality, producing "haves" and "have-nots" within the beneficiary groups over time?
- If we examine certain data in the context of Bihar, we find that only a very small proportion of

the population continues their education beyond Class 12 and successfully completes graduation or post-graduation. According to available statistics, only about 3% of Scheduled Caste (SC) students and 7% of Other Backward Class (OBC) students continue their studies after the 12th standard (Bihar Caste Survey, 2022) If such a large section of the population is unable to meet even the basic educational eligibility criteria, then an important question arises: how can we expect to achieve substantive equality and social justice through any reservation formula, including sub-categorization, when the foundational educational access itself remains so limited?

- Indian society has historically been divided along numerous caste lines. In this context, it is important to critically examine whether the implementation of reservation through subcategorization might unintentionally reinforce or deepen these existing social divisions. This concern cannot be overlooked, as political processes have the potential to function as a catalyst in such situations, possibly intensifying social fragmentation rather than mitigating it. Therefore, a careful assessment is required to ensure that measures intended to promote social justice do not inadvertently contribute to further stratification within society.

**Conclusion:**

In conclusion, the debates around affirmative action, equality, and social justice reveal that addressing historical and structural disadvantages requires more than formal equality; it demands substantive and context-sensitive measures. The insights of scholars such as Rawls, Dworkin, Sen, Acharya etc. Provide a theoretical framework. Also, Kymlicka's and Rajeev Bhargava underscore that multicultural democracies must acknowledge group-differentiated rights and institutional reforms to correct deep-rooted inequalities. In India, mechanisms like the Karpoori Thakur Formula demonstrate an attempt to balance caste-based disadvantages with principles of social justice, reflecting a commitment to uplift the most marginalized. Ultimately, affirmative action— whether in India or in comparative constitutional frameworks—serves as an essential tool to mitigate the effects of brute luck, entrenched social hierarchies, and unequal access to opportunities. While the policy may evolve with changing socio-economic realities, its normative foundation rests on the pursuit of a more inclusive, fair, and genuinely egalitarian society.

The most important point here is that we must consistently strive to establish a social order that advances humanity towards collective welfare. It is essential to keep in mind that our ultimate objective should be to bring every individual onto an equal footing, and we must continue making efforts in that direction means to create substantive equality & justice.

**References -**


- Bhargava, R. & Acharya, A. (2008). Is affirmative action justified? In R. Bhargava & A. Acharya (Eds.), *An introduction to political theory,* (pp. 296-305).Pearson.
- Moon, J. D. (2015). Cohen vs. Rawls on justice and equality. *Critical Review of International Social and Political Philosophy,* 18(1), 40–52.
- Acharya, A. (2008). Affirmative Action for Disadvantage Groups: A Cross-constitutional Study of India & the US. In R. Bhargava (Ed.), *Politics & Ethics of the Indian Constitution* (pp. 267-297). Oxford University Press.
- Kymlicka, W. (1995). *Multicultural citizenship: A liberal theory of Minority rights.* Oxford University press.
- Bhargava, R. (1998). *Secularism and its critics.* Oxford University Press.
- Bhargava, R. (2010). *The promise of India's secular democracy.* Oxford University Press.
- Government of Bihar. (2023). Bihar caste- based survey report 2023. Government of Bihar.
- Yadav, S. (2024, August 2). *Sub-Classification of SCs, STs; Could OBC model for 'creamy layer' be a blueprint? The Indian Express.* https://Indianexpress.com/article/explained/explainedlaw/identifying-the-creamy-layermodel-of-obc-reservation-9489999/ .
- Kothari, R. (1970), *Caste in Indian politics.* Oriented Longman limited press.
- Chaudhary, Neerja (2023), *How Prime Minister Decide*. Aleph Book Company.
- Chavan, Abhijit Mahadeo, "*Judicial Rewriting... Sub-Classification And Creamy Layer...",* IJLSSS, Vol. 3,Issue 4 (2024).
- Srinivas, Pavan, "*Affirmative Action & the Marginalized Population: A study on the Creamy layer..",* Christ University Law Journal, Vol. 5 Issue 2 (2016).
- Mukundan, M.K., "*Sub-Classification & Creamy Layer of Scheduled Castes..",* International Journal of Multidisciplinary & Current Research, Vol.12 (Sept/Oct 2024).
- Thapar, R. (2002). *Early India: From the origins to AD 1300*. Penguin Books.
- Srinivas, M. N. (1952). *Religion and society among the Coorgs of South India.* Clarendon Press.
- Ambedkar, B.R. (1936). *Annihilation of Caste: The annotated critical edition.* New Delhi:
- Navayana.
- Rawls, J. (1971). *A theory of justice.* Harvard University Press.
- Sen, Amartya (1999). *Development as freedom.* Oxford University Press.
- Galanter, M. (1984). *Competing equalities: Law and the backward classes in India.*

University of California Press.

- Jaffrelot, C. (2003). *India's silent revolution: The rise of the lower castes in North India.* C. Hurst & Co.
- Deshpande, A. (2017). *Political economy of the demand for quotas by hats and Patel's.* Economic & Political Weekly, 52(8), 14-17.
- Throat, S. (2005), "Reservation & Efficiency: Myths & Reality", *Economic and Political Weekly, 40(9) :* 808-810.
- Chaudhary, K. (1993), "New Reservation Policy", *Economic & Political Weekly,* 28(30): 11451148.
- Government of India (2015), *the National Commission for Backward Classes Report, 2015.* Ministry of social Justice & Empowerment, New Delhi, Do.No.NCBC/MS/1/2015.
- Government of India (1980), "*Backward Classes Commission, 1980",* Ministry of Social Justice, New Delhi.
- Government Of Bihar (2023), *"Bihar Caste Census Report (2023),* "Ministry of Social Welfare; Bihar.
- Chavan, Abhijit Mahadeo, "*Judicial Rewriting... Sub-Classification And Creamy Layer...",* IJLSSS, Vol. 3,Issue 4 (2024).
- Srinivas, Pavan, "*Affirmative Action & the Marginalized Population: A study on the Creamy layer..",* Christ University Law Journal, Vol. 5 Issue 2 (2016).
- Acharya, A. (2015). *The grounds for, and limits of, affirmative action policy in India.* In S. Kashyap (Ed.), *Constitutional development and governance in India* (PHISPC project). Pearson.

Mail - Kuldeepsingh01122002@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 108-115

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# झारखंड में जनजातियों की पारंपरिक आजीविका के स्रोत (कृषि, वन उत्पाद, शिकार, मछली पकड़ना इत्यादि) से संबंधित चुनौतियों का भौगोलिक विश्लेषण

**असित दिवाकर**

शोध छात्र, भूगोल विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची।

**सारांश :**

झारखंड भारत का एक प्रमुख जनजातीय राज्य है, जहाँ लगभग 26 प्रतिशत जनसंख्या विभिन्न आदिवासी समुदायों से संबंधित है। इन जनजातियों की पारंपरिक आजीविका मुख्यतः प्राकृतिक संसाधनों 'जैसे कृषि, वन उत्पाद, शिकार, मछली पकड़ना तथा पशुपालन' पर आधारित रही है। यह आजीविका प्रणाली स्थानीय पारिस्थितिकी, जलवायु, स्थलाकृति तथा वन संसाधनों के साथ गहरे रूप से जुड़ी हुई है, जिससे एक संतुलित जीवन पद्धति का निर्माण होता है (सिंह, 2021, शर्मा, 2020)। हाल के दशकों में औद्योगीकरण, नगरीकरण, वनों की कटाई तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों ने इन पारंपरिक आजीविका स्रोतों को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। कृषि भूमि का क्षरण, वर्षा की अनिश्चितता, वन संसाधनों की कमी तथा वन कानूनों के कारण जनजातीय समुदायों की आजीविका संकटग्रस्त होती जा रही है (कुमार, 2022)। इसके अतिरिक्त, शिकार और मछली पकड़ने जैसी पारंपरिक गतिविधियाँ भी पर्यावरणीय नियमों और संसाधनों की कमी के कारण सीमित हो गई हैं।

यह अध्ययन झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका के स्रोतों का भौगोलिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है तथा यह समझने का प्रयास करता है कि इन स्रोतों से संबंधित प्रमुख चुनौतियाँ क्या हैं। अध्ययन में यह भी देखा गया है कि प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण और सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के कारण जनजातीय समुदायों की जीवनशैली में किस प्रकार परिवर्तन हो रहा है। अध्ययन का निष्कर्ष यह दर्शाता है कि यदि पारंपरिक आजीविका प्रणाली को आधुनिक तकनीकों, सरकारी नीतियों तथा सतत विकास के सिद्धांतों के साथ जोड़ा जाए, तो यह जनजातीय समुदायों के आर्थिक सशक्तिकरण और पर्यावरण संरक्षण दोनों में सहायक हो सकता है।

**मुख्य शब्द :–** जनजातीय आजीविका, कृषि, वनोपज, शिकार, मछली पालन, झारखंड, पर्यावरणीय परिवर्तन, ग्रामीण विकास, सतत आजीविका।

## परिचय :

झारखंड भारत के उन राज्यों में से एक है जहाँ जनजातीय समुदायों का सामाजिक, सांस्कृतिक और

आर्थिक जीवन प्राकृतिक संसाधनों से गहरे रूप में जुड़ा हुआ है। यहाँ की प्रमुख जनजातियाँ 'संथाल, मुंडा, उरांव, हो, बिरहोर आदि' परंपरागत रूप से जंगल, भूमि और जल स्रोतों पर निर्भर रही हैं। इन समुदायों की आजीविका मुख्यतः वर्षा आधारित कृषि, वन उत्पादों का संग्रह, शिकार तथा मछली पकड़ने जैसी गतिविधियों पर आधारित रही है (सिंह, 2021)। भौगोलिक दृष्टि से झारखंड छोटानागपुर पठार का हिस्सा है, जहाँ की स्थलाकृति ऊँची–नीची पहाड़ियों, पठारी क्षेत्रों और घने वनों से युक्त है। यहाँ की जलवायु मानसूनी है, जिससे कृषि मुख्यतः वर्षा पर निर्भर रहती है। इसी कारण जनजातीय समुदायों की आजीविका भी प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है (शर्मा, 2020)।

वन संसाधन झारखंड के जनजातीय जीवन का अभिन्न अंग हैं। महुआ, तेंदूपत्ता, साल बीज, लकड़ी तथा अन्य वनोपज उनके लिए आय के प्रमुख स्रोत रहे हैं। इसके अतिरिक्त, शिकार और मछली पकड़ना भी उनके भोजन और आजीविका का हिस्सा रहा है। हालाँकि, वर्तमान समय में इन पारंपरिक आजीविका स्रोतों पर कई प्रकार के संकट उत्पन्न हो गए हैं। वनों की कटाई, भूमि का क्षरण, जलवायु परिवर्तन तथा सरकारी नीतियों में परिवर्तन के कारण जनजातीय समुदायों के पारंपरिक संसाधनों तक पहुँच सीमित हो गई है (कुमार, 2022)। इस अध्ययन का उद्देश्य झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका के स्रोतों का भौगोलिक विश्लेषण करना तथा उनसे संबंधित चुनौतियों को समझना है।

**उद्देश्य :**

इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य झारखंड में जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका के स्रोतों 'जैसे कृषि, वन उत्पाद, शिकार तथा मछली पकड़ना' का भौगोलिक विश्लेषण करना है तथा यह समझना है कि ये गतिविधियाँ प्राकृतिक पर्यावरण के साथ किस प्रकार अंतर्संबंध स्थापित करती हैं। झारखंड का भौगोलिक स्वरूप, जिसमें पठारी भू–आकृति, घने वन, नदियाँ तथा मानसूनी जलवायु शामिल हैं, जनजातीय जीवन और उनकी आजीविका को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है (सिंह, 2021)। इस शोध का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह भी है कि पारंपरिक आजीविका के विभिन्न स्रोतों पर भौगोलिक कारकों 'जैसे स्थलाकृति, वर्षा, मिट्टी और वन संसाधनों' के प्रभाव का विश्लेषण किया जाए (शर्मा, 2020)। इसके अतिरिक्त, अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, भूमि क्षरण तथा सरकारी नीतियों में परिवर्तन के कारण जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका पर किस प्रकार के प्रभाव पड़ रहे हैं। यह शोध यह भी विश्लेषण करता है कि आधुनिक विकास प्रक्रियाओं, औद्योगीकरण और बाजार व्यवस्था के कारण जनजातीय जीवनशैली में किस प्रकार परिवर्तन हो रहा है (कुमार, 2022)। अंततः, इस अध्ययन का उद्देश्य सतत विकास के दृष्टिकोण से ऐसे व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना है, जिनके माध्यम से पारंपरिक आजीविका स्रोतों का संरक्षण करते हुए जनजातीय समुदायों के आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण को सुनिश्चित किया जा सके।

- ☐ झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका के प्रमुख स्रोतों का अध्ययन करना।
- ☐ कृषि, वनोपज, शिकार और मछली पकड़ने पर भौगोलिक कारकों के प्रभाव का विश्लेषण करना।
- ☐ पारंपरिक आजीविका पर जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ वनों की कटाई, भूमि क्षरण और संसाधनों की कमी से उत्पन्न समस्याओं का विश्लेषण करना।
- ☐ आधुनिक विकास प्रक्रियाओं और बाजार व्यवस्था के प्रभावों को समझना।

- जनजातीय समुदायों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति पर आजीविका परिवर्तनों के प्रभाव का मूल्यांकन करना।
- सतत विकास के लिए उपयुक्त नीतिगत और व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

**परिकल्पना :**

इस अध्ययन की प्रमुख परिकल्पना यह है कि झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका प्रणाली 'जैसे कृषि, वनोपज संग्रह, शिकार तथा मछली पकड़ना' स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियों पर अत्यधिक निर्भर है, और इन परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तन सीधे उनकी आजीविका को प्रभावित करते हैं। छोटानागपुर पठार की स्थलाकृति, मानसूनी जलवायु, वन क्षेत्र की उपलब्धता तथा जल स्रोतों की स्थिति इन गतिविधियों की प्रकृति और उत्पादकता को निर्धारित करती है। दूसरी परिकल्पना यह है कि वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, भूमि क्षरण तथा औद्योगिक विकास के कारण पारंपरिक आजीविका स्रोतों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है, जिससे जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिति कमजोर हुई है और उन्हें वैकल्पिक रोजगार की तलाश में पलायन करना पड़ रहा है। तीसरी परिकल्पना यह है कि यदि पारंपरिक आजीविका को आधुनिक तकनीकी उपायों, सरकारी योजनाओं तथा सतत विकास के सिद्धांतों के साथ समन्वित किया जाए, तो यह न केवल जनजातीय समुदायों के आर्थिक सशक्तिकरण में सहायक होगा बल्कि पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

**शोध पद्धति :**

इस अध्ययन में झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका के स्रोतों का भौगोलिक विश्लेषण करने के लिए मिश्रित अनुसंधान पद्धति का उपयोग किया गया है, जिसमें गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार के डेटा का समावेश किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के रूप में झारखंड के विभिन्न जनजातीय बहुल जिलों 'जैसे रांची, खूंटी, सिमडेगा, लातेहार और गुमला' का चयन किया गया, जहाँ पारंपरिक आजीविका के विविध स्वरूप देखने को मिलते हैं (सिंह, 2021)। प्राथमिक डेटा संग्रह के लिए मैदानी सर्वेक्षण, प्रत्यक्ष साक्षात्कार तथा संरचित प्रश्नावली का उपयोग किया गया। इस प्रक्रिया में लगभग 100 जनजातीय परिवारों, 15 स्थानीय प्रतिनिधियों तथा 5 सरकारी अधिकारियों से जानकारी प्राप्त की गई। प्रश्नावली में कृषि उत्पादन, वनोपज संग्रह, मछली पकड़ने, शिकार गतिविधियों तथा उनसे जुड़ी समस्याओं से संबंधित प्रश्न शामिल थे। द्वितीयक डेटा विभिन्न स्रोतों 'जैसे सरकारी रिपोर्ट, जनगणना आँकड़े, शोध पत्रिकाएँ तथा पुस्तकों' से संकलित किया गया (शर्मा, 2020, कुमार, 2022)। एकत्रित आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत, तालिका एवं तुलनात्मक विधि द्वारा किया गया, जिससे पारंपरिक आजीविका स्रोतों और उनसे संबंधित चुनौतियों का समग्र भौगोलिक विश्लेषण संभव हो सका।

झारखंड भारत का एक प्रमुख जनजातीय राज्य है, जहाँ की लगभग 26 प्रतिशत जनसंख्या विभिन्न आदिवासी समुदायों से संबंधित है। इन समुदायों की पारंपरिक आजीविका प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित रही है, जिसमें कृषि, वन उत्पादों का संग्रह, शिकार, मछली पकड़ना तथा पशुपालन प्रमुख हैं। भौगोलिक दृष्टि से झारखंड छोटानागपुर पठार का हिस्सा है, जहाँ की स्थलाकृति ऊँची–नीची पहाड़ियों, घने वनों तथा जल स्रोतों से युक्त है। इस भौगोलिक संरचना का जनजातीय जीवन और उनकी आजीविका पर गहरा प्रभाव पड़ता है

(सिंह, 2021)।

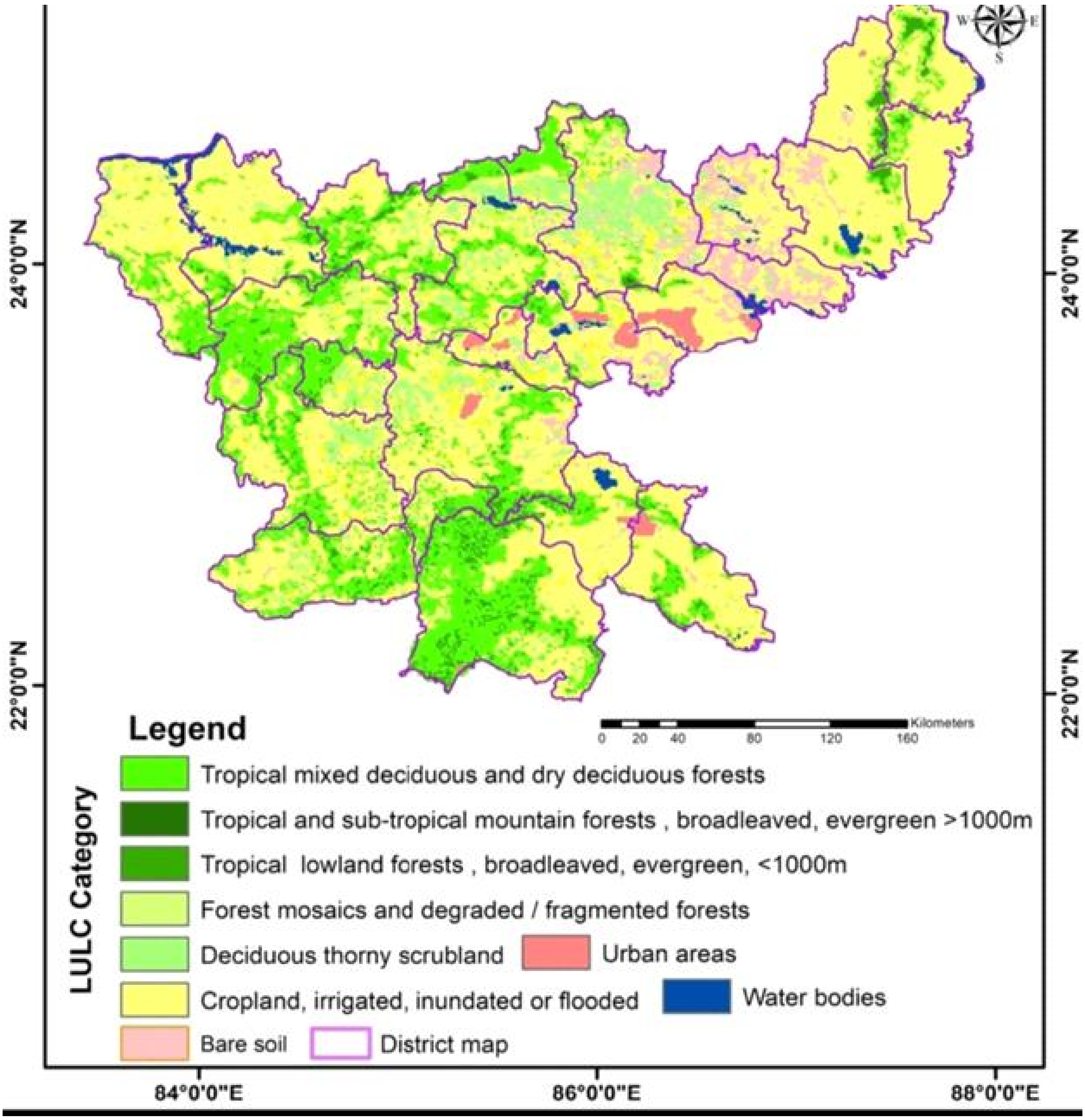


स्रोत : भारतीय वन सर्वेक्षणय सिंह (2021)

### 1. कृषि आधारित आजीविका :

झारखंड में जनजातीय समुदायों की आजीविका का प्रमुख आधार वर्षा आधारित कृषि है। यहाँ की कृषि मुख्यतः मानसून पर निर्भर होती है, जिससे उत्पादन में अनिश्चितता बनी रहती है। धान, मक्का, बाजरा और दालें प्रमुख फसलें हैं। पठारी क्षेत्र होने के कारण मिट्टी की उर्वरता सीमित होती है तथा सिंचाई सुविधाओं की कमी के कारण कृषि उत्पादन अपेक्षाकृत कम रहता है (शर्मा, 2020)। हाल के वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा की अनियमितता बढ़ी है, जिससे फसलों की उत्पादकता प्रभावित हो रही है। भूमि क्षरण और वनों की कटाई के कारण मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट आई है, जिससे कृषि और अधिक चुनौतीपूर्ण हो गई है।

**2. वन उत्पाद आधारित आजीविका :**

वन संसाधन झारखंड के जनजातीय समुदायों की जीवनरेखा हैं। महुआ, तेंदूपत्ता, साल बीज, लाख, शहद और औषधीय पौधे इनके प्रमुख वनोपज हैं। ये उत्पाद न केवल भोजन का स्रोत हैं, बल्कि आय अर्जन का भी महत्वपूर्ण माध्यम हैं।

| **वनोपज** | **उपयोग** | **आर्थिक महत्व** |
|---|---|---|
| महुआ | खाद्य एवं पेय पदार्थ | स्थानीय व्यापार |
| तेंदूपत्ता | बीड़ी निर्माण | आय का प्रमुख स्रोत |
| साल बीज | तेल एवं खाद्य | बाजार में मांग |
| लाख | औद्योगिक उपयोग | निर्यात योग्य उत्पाद |

स्रोत : भारतीय वन सर्वेक्षण, सिंह (2021)

हालाँकि, वनों की कटाई, औद्योगीकरण और वन कानूनों के कारण जनजातीय समुदायों की वन संसाधनों तक पहुँच सीमित हो गई है। इससे उनकी पारंपरिक आजीविका प्रभावित हो रही है (कुमार, 2022)।

**3. शिकार आधारित आजीविका :**

शिकार जनजातीय समुदायों की पारंपरिक जीवनशैली का हिस्सा रहा है। यह उनके भोजन और सांस्कृतिक परंपराओं से जुड़ा हुआ है। लेकिन वर्तमान समय में वन्यजीव संरक्षण कानूनों और जैव विविधता संरक्षण नीतियों के कारण शिकार गतिविधियाँ काफी हद तक सीमित हो गई हैं। इसके अलावा, वन्यजीवों की संख्या में कमी के कारण भी यह आजीविका अब पहले जैसी प्रभावी नहीं रही।

**4. मछली पकड़ना :**

झारखंड में अनेक नदियाँ, तालाब और जलाशय मौजूद हैं, जो मछली पकड़ने के लिए उपयुक्त हैं। जनजातीय समुदायों के लिए यह भोजन और आय दोनों का स्रोत है।

| **जल स्रोत** | **प्रमुख क्षेत्र** | **उपयोग** |
|---|---|---|
| नदी | दामोदर, सुवर्णरेखा | मछली पकड़ना |
| तालाब | ग्रामीण क्षेत्र | घरेलू उपयोग |
| जलाशय | बाँध क्षेत्र | व्यावसायिक मछली पालन |

हालाँकि, जल प्रदूषण, जल स्रोतों का सूखना तथा सरकारी नियंत्रण के कारण मछली पकड़ने की पारंपरिक गतिविधियाँ प्रभावित हो रही हैं (शर्मा, 2020)।

**5. भौगोलिक कारकों का प्रभाव :**

| **भौगोलिक कारक** | **प्रभाव** |
|---|---|
| स्थलाकृति (पठार) | कृषि सीमित, जल संचयन कठिन |
| वर्षा | कृषि उत्पादन पर निर्भरता |
| वन क्षेत्र | वनोपज उपलब्धता |

जल स्रोत : मछली पकड़ने पर प्रभाव

भौगोलिक कारकों के कारण जनजातीय समुदायों की आजीविका प्राकृतिक परिस्थितियों पर अत्यधिक निर्भर रहती है।

**6. आधुनिक परिवर्तन और चुनौतियाँ :**

वर्तमान समय में कई सामाजिक–आर्थिक और पर्यावरणीय परिवर्तन जनजातीय आजीविका को प्रभावित कर रहे हैं :

- **जलवायु परिवर्तन :** वर्षा की अनिश्चितता और तापमान में वृद्धि।
- **वनों की कटाई :** वनोपज की कमी।
- **औद्योगीकरण :** भूमि अधिग्रहण और विस्थापन।
- **सरकारी नीतियाँ :** वन संसाधनों तक सीमित पहुँच।
- **बाजार प्रणाली :** पारंपरिक उत्पादों का कम मूल्य।

इन सभी कारकों के कारण जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका संकट में पड़ गई है (कुमार, 2022)।

**7. सामाजिक–आर्थिक प्रभाव :**

पारंपरिक आजीविका में कमी के कारण जनजातीय समुदायों में बेरोजगारी और गरीबी बढ़ रही है। कई लोग रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। इससे उनकी सांस्कृतिक पहचान और पारंपरिक ज्ञान पर भी प्रभाव पड़ रहा है (सिंह, 2021)।

**8. सतत आजीविका की आवश्यकता :**

इस स्थिति में यह आवश्यक है कि पारंपरिक आजीविका को आधुनिक तकनीकों और सरकारी योजनाओं के साथ जोड़ा जाए। उदाहरण के लिए :

- ☐ कृषि में आधुनिक तकनीक का उपयोग।
- ☐ वनोपज के प्रसंस्करण और विपणन में सुधार।
- ☐ मछली पालन को व्यावसायिक रूप देना।
- ☐ कौशल विकास और प्रशिक्षण।

इस प्रकार, यदि पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विकास को संतुलित किया जाए, तो जनजातीय समुदायों की आजीविका को सुदृढ़ बनाया जा सकता है (शर्मा, 2020, कुमार, 2022)।

झारखंड में जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका पूरी तरह से प्राकृतिक संसाधनों और भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर है। वर्तमान समय में पर्यावरणीय और सामाजिक परिवर्तन इन आजीविका स्रोतों के लिए गंभीर चुनौती बनते जा रहे हैं।

**समस्याएँ एवं समाधान :**

झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका प्रणाली वर्तमान समय में अनेक जटिल चुनौतियों से प्रभावित हो रही है। सबसे प्रमुख समस्या जलवायु परिवर्तन है, जिसके कारण वर्षा का असमान वितरण, सूखा तथा अनियमित मानसून जैसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं। इससे वर्षा आधारित कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और उत्पादन में गिरावट आई है (शर्मा, 2020)। इसके अतिरिक्त, वनों की कटाई और

खनन गतिविधियाँ वन संसाधनों को कम कर रही हैं, जिससे महुआ, तेंदूपत्ता और साल बीज जैसे वनोपज की उपलब्धता घट रही है (कुमार, 2022)। भूमि क्षरण और मृदा अपरदन भी एक गंभीर समस्या है, जिससे कृषि योग्य भूमि की उर्वरता कम हो रही है। वहीं, जल स्रोतों का प्रदूषण और सूखना मछली पकड़ने की पारंपरिक गतिविधियों को प्रभावित कर रहा है। शिकार पर कानूनी प्रतिबंध और वन्यजीवों की घटती संख्या के कारण यह आजीविका भी सीमित होती जा रही है (सिंह, 2021)। इसके साथ ही, बाजार तक सीमित पहुँच, बिचौलियों का हस्तक्षेप तथा उचित मूल्य का अभाव जनजातीय समुदायों के आर्थिक शोषण को बढ़ावा देता है।

अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि पारंपरिक आजीविका अभी भी जनजातीय जीवन का आधार बनी हुई है, लेकिन इसकी स्थिरता निरंतर घट रही है। कृषि, वनोपज और मत्स्य गतिविधियों में आय की अस्थिरता पाई गई है। साथ ही, युवाओं में रोजगार के लिए पलायन की प्रवृत्ति बढ़ रही है, जिससे पारंपरिक ज्ञान और सांस्कृतिक विरासत प्रभावित हो रही है। हालाँकि, यह भी पाया गया कि जहाँ सरकारी योजनाएँ, स्वयं सहायता समूह (SHGs) और स्थानीय भागीदारी सक्रिय है, वहाँ आजीविका के वैकल्पिक और टिकाऊ मॉडल विकसित हो रहे हैं। अतः स्पष्ट है कि यदि संसाधनों का संरक्षण और समुदाय आधारित प्रबंधन सुनिश्चित किया जाए, तो पारंपरिक आजीविका को पुनः सुदृढ़ बनाया जा सकता है।

**निष्कर्ष :**

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि झारखंड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका 'जैसे कृषि, वनोपज संग्रह, शिकार तथा मछली पकड़ना' पूरी तरह से स्थानीय भौगोलिक एवं पारिस्थितिक परिस्थितियों पर निर्भर है। छोटानागपुर पठार की स्थलाकृति, मानसूनी जलवायु, वन संसाधनों की उपलब्धता तथा जल स्रोत इन आजीविका गतिविधियों को सीधे प्रभावित करते हैं। हालाँकि, वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, भूमि क्षरण, औद्योगीकरण तथा संसाधनों पर बढ़ते दबाव के कारण इन पारंपरिक आजीविका स्रोतों पर गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। इसके परिणामस्वरूप जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिति कमजोर हो रही है तथा उन्हें वैकल्पिक रोजगार की तलाश में पलायन करना पड़ रहा है (शर्मा, 2020, कुमार, 2022)। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि यदि पारंपरिक आजीविका को आधुनिक तकनीकों, सरकारी योजनाओं तथा सतत विकास के सिद्धांतों के साथ समन्वित किया जाए, तो यह न केवल जनजातीय समुदायों के आर्थिक सशक्तिकरण में सहायक होगा बल्कि पर्यावरणीय संतुलन को भी बनाए रख सकता है (सिंह, 2021)। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि झारखंड में जनजातीय आजीविका के संरक्षण और विकास के लिए एक संतुलित, सहभागी और पर्यावरण—संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाना अत्यंत आवश्यक है, जिससे सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

**सुझाव :**

1. **वन एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण :** जनजातीय क्षेत्रों में वनों की कटाई पर नियंत्रण रखते हुए सामुदायिक वन प्रबंधन को बढ़ावा दिया जाए, ताकि वनोपज की निरंतर उपलब्धता बनी रहे।
2. **आधुनिक कृषि तकनीकों का प्रसार :** वर्षा आधारित कृषि को अधिक उत्पादक बनाने के लिए सिंचाई सुविधाओं, उन्नत बीज, जैविक खाद तथा मृदा संरक्षण तकनीकों का उपयोग बढ़ाया जाए।
3. **वनोपज के मूल्य संवर्धन और विपणन की व्यवस्था :** महुआ, तेंदूपत्ता, लाख आदि वनोपज के प्रसंस्करण

एवं उचित बाजार उपलब्ध कराकर जनजातीय उत्पादों को बेहतर मूल्य दिलाया जाए।

4. **जल संसाधनों का विकास और मत्स्य पालन को प्रोत्साहन :** तालाब, जलाशय और नदियों के संरक्षण के साथ–साथ वैज्ञानिक मछली पालन को बढ़ावा दिया जाए, जिससे आय के अतिरिक्त स्रोत विकसित हों।
5. **कौशल विकास एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम :** जनजातीय युवाओं को कृषि, वनोपज प्रसंस्करण, हस्तशिल्प तथा वैकल्पिक रोजगार के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया जाए, ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें।
6. **सामुदायिक भागीदारी एवं सरकारी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन :** योजनाओं के निर्माण और कार्यान्वयन में स्थानीय समुदायों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए तथा उनके अधिकारों और हितों की रक्षा की जाए।

**संदर्भ सूची :**


1. कुमार, एम. (2022). पारिस्थितिकी पर्यटन एवं जनजातीय आजीविका में सामुदायिक भागीदारी. झारखंड सामाजिक विज्ञान समीक्षा, 7(4), 33–44.
2. मेहता, डी. (2023). जनजातीय अर्थव्यवस्था और महिलाओं की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन. समाज और पर्यावरण अध्ययन, 6(3), 112–126.
3. मिश्रा, एन. (2021). जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका और वनोपज का महत्व. सामाजिक विज्ञान दृष्टि, 9(3), 77–85.
4. प्रसाद, पी. (2021). जनजातीय संस्कृति, आजीविका और पर्यावरणीय संबंध. भारतीय सांस्कृतिक अध्ययन, 5(1), 70–79.
5. शर्मा, आर. (2020). भारत में पारंपरिक आजीविका और सतत विकास. नई दिल्ली : पर्यावरण प्रकाशन. PP. 55–72.
6. सिंह, ए. (2021). झारखंड के जनजातीय क्षेत्रों का भौगोलिक विश्लेषण. भारतीय भूगोल अध्ययन पत्रिका, 12(3), 88–97.
7. सिंह, पी. (2021). झारखंड की जनजातीय संरचना और आजीविका प्रणाली. रांची : जनजातीय अनुसंधान संस्थान. PP. 120–138.
8. वर्मा, एस. (2023). ग्रामीण विकास और जनजातीय आजीविका के नवीन आयाम. राष्ट्रीय विकास शोध पत्रिका, 8(2), 101–115.
9. झारखंड सरकार. (2022). झारखंड आर्थिक सर्वेक्षण 2021–22. रांची : योजना एवं विकास विभाग. PP. 85–102.
10. भारतीय वन सर्वेक्षण. (2021). भारत वन स्थिति रिपोर्ट, 2021. देहरादून : पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 116-121

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# अभिलेख : आर्थिक पक्षों के प्रमाण

**कु. महिमा प्रजापति**
शोध छात्रा, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व, लखनऊ विश्वविद्यालय।

**सारांश :**

भारतीय इतिहास लेखन को प्रामाणिक एवं व्यवस्थित रूप देने में अभिलेखों का विशेष योगदान रहा है। अभिलेख शासक, सामंत वर्ग, उच्च अधिकारियों एवं रानियां द्वारा उत्कीर्ण करवाया जाता था। अभिलेख राजाज्ञा एवं स्तुतिपरक एक लेख थे जिन्हें चिरस्थायीत्व हेतु शिलाओं, स्तम्भों, मूर्तियों, गुहाभित्ति, ताम्रपत्र, मुद्राओं तथा मुहरों पर उत्कीर्ण किया गया। अभिलेखों में शासन–संबंधी यथा दंड–नीति, विदेश–नीति, युद्ध–अभियान, कर–व्यवस्था, श्रेणी–संगठन, व्यापार तथा तत्कालीन सामाजिक व्यवस्थाएं, लोक प्रचलित धर्म एवं उनका महत्व, राजा का व्यक्तिगत धर्म, लोक–कल्याणकारी कार्य, कला एवं संस्कृति आदि अनेक पक्षों की जानकारी प्राप्त होती है।

अभिलेखों से प्राचीन समाज के आर्थिक जीवन से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होते हैं। इनमें कृषि–उत्पादन, सिंचाई–व्यवस्था, भूमि–लगान तथा सिंचाई शुल्क जैसी व्यवस्थाओं का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त उद्योग–व्यवसाय, श्रेणी–संगठन (गिल्ड प्रणाली) तथा व्यापार–वाणिज्य की संरचना और उनके नियंत्रण का ज्ञान भी अभिलेखों द्वारा प्राप्त होता है। भूमि की माप, राजस्व निर्धारण, भू–सीमा (सीमांकन) और भू–व्यवस्था (राजस्व प्रशासन) से संबंधित उल्लेख भी कई अभिलेखों में मिलते हैं, जिनसे तत्कालीन प्रशासनिक ढाँचे की स्पष्ट जानकारी मिलती है। साथ ही प्रचलित विनिमय प्रणाली जैसे – सिक्के, मुद्रा–माप और तौल–प्रणाली का विवरण भी अभिलेखों में दर्ज मिलता है।

कुछ अभिलेखों में आपातकालीन घटनाओं तथा किसी विशेष क्षेत्र में उपलब्ध विशिष्ट उत्पाद एवं शिल्प–कला का भी वर्णन प्राप्त होता है। ये तथ्य उस काल की अर्थव्यवस्था के बहुमुखी और गतिशील रूप को समझने में सहायक होते हैं।

**की वर्ड :**

अभिलेख, आर्थिक जीवन, कृषि एवं सिंचाई, राजस्व व्यवस्था, उद्योग एवं श्रेणी–संगठन, व्यापार–वाणिज्य, क्षेत्रीय–उत्पाद, विनिमय–प्रणाली।

**भूमिका :**

भारत, प्राचीन काल से धर्म के साथ–साथ अर्थ समाज रहा हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि आधारित रही है। साहित्य स्रोतों के अतिरिक्त अभिलेखीय साक्ष्य के माध्यम से भी भारतीय अर्थव्यवस्था की

जानकारी हमें प्राप्त होते हैं। अभिलेखों के माध्यम से आर्थिक जीवन के अंतर्गत कृषि, सिंचाई, शिल्प–उद्योग, श्रेणी–संगठन, व्यापार–वाणिज्य एवं राजस्व–व्यवस्था की जानकारी होती है।

**कृषि :**

आदिमानव, नवपाषाणकाल में कृषि उत्पादन के कार्यों से भली भांति परिचित था। नवपाषाण के विभिन्न स्थलों यथा– मेहरगढ़, बागोर, आजमगढ़, संत कबीरनगर आदि स्थानों से कृषि एवं पशुपालन के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। हड़प्पा सभ्यता उन्नत कृषि उत्पादों के अधिशेषों से प्रेरित नगरीय जीवन का उदाहरण है इस काल में कृषि, शिल्प–उद्योग तथा व्यापार–वाणिज्य चरमोत्कर्ष पर था। वैदिक काल आते–आते लोहे के ज्ञान से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई जिससे ग्रामीण जीवन प्रगति कर जनपद एवं महाजनपदों में विकसित हुआ।

विभिन्न साहित्यिक एवं अभिलेखीय स्रोतों में कृषि उत्पादों की जानकारी प्राप्त होती है। पाणिनि[1] ने दो प्रकार के उपज का उल्लेख किया है– 1 कुष्टपच्याः 2 अकुष्टपच्याः। कुष्टपच्य अन्नों में शालि, ब्रीहि, यश, मूद्रग, कुंतल, तिल, उमा आदि आते हैं जो तीन फसलों में उपलब्ध होती थी –

1 आश्व यूजक, जो आश्विन माह में बोई जाती थी।

2 ग्रैष्मक, जो ग्रीष्म ऋतु में बोई जाती थी।

3 वासन्तक, जो बसंत ऋतु में बोई जाती थी।

मौर्य काल के संदर्भ में कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कृषि का वर्णन है तथा मेगास्थनीज ने सात जातियों में दूसरी जाति के रूप में कृषक वर्ग का उल्लेख किया है। सोहगौरा कांस्य फलक लेख एवं महास्थान शिला फलक लेखों से धान तथा अन्य कृषि उत्पादन के साथ कोष्ठागारों के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। सोहगौरा से मधु, अजवायन, आम तथा महास्थान से तिल एवं सरसों के साक्ष्य प्राप्त होते हैं जिससे उस क्षेत्र की उत्पादित फसलों का ज्ञान होता है।[2]

**तिघवानि माथुल –चचु गोदाम – भलकन......**

बेग्राम ताम्र लेख[3] में चार प्रकार की भूमि का वर्णन है –

1 **समुदयबाह्य** – ऐसी भूमि जिसमें अन्न उत्पन्न ना होता हो।

2 **खिल क्षेत्र** – ऐसी भूमि जो कभी जोती ना गई हो।

3 **अप्रीतिकर** – ऐसी भूमि जिससे राज्य को किसी प्रकार की आय ना हो।

**बाह्यद्यस्तम्ब खिल क्षेत्ताणामकिंचित्प्रतिकराणां।**

दामोदर ताम्रलेख (124) में भी भूमि के प्रकारों का उल्लेख है –

1 **अप्रदा** – ऐसी भूमि जो राज्य की और से किसी को दी ना गई हो।

2 **अग्रहत** – ऐसी भूमि जो जोती ना गई हो।

3 **खिल।**

**अप्रदाप्रहतखिल क्षेत्रं**[4]

**भूमि व्यवस्था :**

भूमि की माप का लेखा–जोखा रखने तथा भूमि व्यवस्थित रखने हेतु विभिन्न अधिकारियों यथा–गोप, स्थानिक, सीताध्यक्ष तथा रज्जुक आदि की नियुक्ति की जाती थी। इनका उल्लेख अभिलेखों में भी किया गया

है।

अशोक के तीसरे शिलालेख[4]क में युक्त, रज्जुक और प्रादेशिक तीन अधिकारियों का उल्लेख है– सर्वत ति जिते मम युता च राजु के च प्रादेशिके च पंचसु वासेसु अनुसंधानों नियातु। रज्जुक, भूमि के नाप– जोख करने वाला अधिकारी था।

**क्षेत्रसीमा :**

भूमि को व्यवस्थित रखने, भूमि विवाद को कम करने, मूल्यांकन करने एवं राज्य की आय में वृद्धि करने के लिए भूमि सर्वेक्षण कराया जाता था जिसके लिए क्षेत्र की सीमा निर्धारण आवश्यक था। अतः राज्य द्वारा प्राकृतिक एवं कृत्रिम पहचान द्वारा सीमा निर्धारित की जाती थी, यथा–पर्वत, नदी, गुफा तथा मंदिर आदि सीमा निर्धारण के तत्व हैं।

धारावर्ष ध्रुवसेन के भोर राज्य संग्रहालय ताम्रपत्र[5] में स्पष्ट उल्लेख है कि वासुदेव भट्ट को श्रीमाल विषय के अंतर्गत लघुविंग नामक ग्राम जिसकी चारों दिशाओं की सीमा में पूर्व में श्रीमाल नगर, दक्षिण में लयणगिरी, पश्चिम में वृहद विंगक ग्राम, उत्तर में नीरा नामक नदी है, उद्रंग तथा परिकर सहित दान किया गया है।

**वासुदेव भट्टा**

**य श्रीमाल विषयातर्ग्गतलघुविं ......चतुराघा**

**तनोपलक्षितो ग्राम**

**सिंचाई :**

विभिन्न राज्यों ने लोक–कल्याणकारी कार्यों में जल–आपूर्ति की व्यवस्था की। सिंचाई हेतु तालाब, नहर, झील एवं कुएं का निर्माण करवाया। अशोक, खारवेल, रुद्रदामन तथा स्कंदगुप्त आदि के अभिलेखों से इसका विवरण प्रस्तुत करते हैं –

**झील :**

रुद्रदामन के गिरनार अभिलेख से ज्ञात होता है कि चंद्रगुप्त मौर्य[6] के शासनकाल में जूनागढ़ प्रांत के प्रांतपति पुष्यगुप्त वैश्य द्वारा गिरनार में सुदर्शन झील जलापूर्ति हेतु बनाया गया।

**मौर्यस्य राज्ञ चन्द्र गुप्त स्वयं राष्ट्रियेण वैश्येन पुष्य गुप्तेन कारियों।**

इसी अभिलेख में रुद्रदामन[7] द्वारा अत्यधिक वर्षा द्वारा सुदर्शन झील के भग्न होने पर उसकी पुनर्निर्माण का उल्लेख है जिसे वह अपने व्यक्तिगत कोष से अमात्य पहलव सुविशाख के निरीक्षण में करवाता है।

**पौरजानपदजनानुग्रहार्थ......पहलवेन कुलैप पुत्रेण मात्येन सुविशाखेन....भर्तुरभिवध् दयानुष्ठित मि ति।**

स्कंदगुप्त के जूनागढ़ अभिलेख[8] में उल्लेखित है कि गुप्त संवत 136 में सुदर्शन झील का बांध टूट गया जिसे पर्णदत्त के पुत्र चक्रपालित ने गुप्त संवत 137 में पुनर्निर्माण करवाया तथा अभी यह बांध 100 हाथ लंबा, 68 हाथ चौड़ा, सात पुरुषों के बराबर ऊंचा तथा 200 हाथ गहरा हो गया है।

**ग्रैष्मस्य हास्य तु ........(ह) स्तशतद्वयस्य संबन्ध यत्रान्महता।**

**नहर :**

खारवेल के हाथी गुम्फालेख[9] से खारवेल के शासनकाल के पांचवें वर्ष के कार्यों में उल्लेखित है कि नंद वंशीय राजा महापद्मानंद द्वारा 300 वर्ष पूर्व उद्घाटित नहर को तनुसिल नामक स्थान से अपने राजधानी तक

ले आया। इस प्रकार इस लेख से महापद्मानंद द्वारा नहर बनवाने तथा खारवेल द्वारा उसके विस्तार का उल्लेख है –

**पंचमे च दानी वसे नंदराज ति वह सत ओ ...**

**नगरं पवेस य ति सो**

**रूद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख**[10] से सम्राट अशोक के राष्ट्रिय युवराज तुषास्फ द्वारा सुदर्शन झील से नहरें बनवाने का उल्लेख है।

**अशोकस्य मौर्यस्य – ते यवनराजेन तुषास्फेनाधिष्ठाय प्रणा लीभिरल न कृत।**

**कुएं और तालाब** :

अशोक की द्वितीय शिलालेख तथा सातवें स्तंभ लेख में राजमार्गों पर आधे–आधे कोस के अंतर पर कुएं के बनवाने का उल्लेख है।

**पथेसु कुटा च खानापिता व्रछा च रोपापिता परिभोगाय पसुमनुसासः –द्वितीय शिलालेख**[11]

**अदकोसिक्यनि पि में उदुपाननि खानापितानि – सप्तम स्तंभ लेख**[12]

**खारवेल के हाथी गुफा लेख**[13] में शीतल जल वाले जलाशयों के निर्माण का उल्लेख मिलता है– सितल तड़ाग पाडियां च बंधापयति।

**राजस्व :**

राज्य की आय, भूमि–शुल्क, सीमा–शुल्क, व्यापार–शुल्क तथा अन्य प्रकार के करो द्वारा होती हैं। मौर्य काल में भारतीय अर्थव्यवस्था का विकसित रूप दृष्टिगोचर होता है। अर्थशास्त्र में राजस्व के रूप में विभिन्न करों का उल्लेख है। विभिन्न अभिलेखों के माध्यम से राज्य द्वारा लगाए गए करो तथा कर संग्रह अधिकारियों का ज्ञान होता है।

**अशोक का रूम्मिनदेई लघु स्तंभ लेख**[14] भाग एवं बलि कर का उल्लेख करता है। लेख के अनुसार अशोक, बुद्ध की जन्म– भूमि को बलि नामक धार्मिक कर से मुक्त कर दिया था तथा भाग नामक कर जो सामान्यत उपज का 1/6 भाग होता है को कम करके 1/8 भाग कर दिया था।

**लुंबिनी गामे उबलिके कटे**

**आठ भागिये च**

**हर्ष के बांस खेड़ा ताम्रपत्र लेख**[15] में प्रमातार नामक राजस्व विभाग के अधिकारी का उल्लेख है साथ ही तुल्य, भोग, मेय–कर, भाग, सुवर्ण आदि करो का उल्लेख है।

**तुल्योमेयभागभोगकरहिरण्यादि**

विष्टि अर्थात बेगार एवं प्रणय नामक आपातकालीन कर का साक्ष्य रुद्रदामन के गिरनार अभिलेख से मिलता है।[16]

**कर विष्टि प्रणयक्रियभिः**

भूमि के अलावा सिंचाई पर भी कर राज्य द्वारा लगाया जाता था। इसका उल्लेख कुमारगुप्त के दामोदरपुर ताम्र लेख वर्ष 128 में हुआ है।[17] इसमें तीन दिनार कुल्यवाप के दर से दो दिनार लेकर अर्हट्ट तथा पानक सहित पांच द्रोण भूमि ऐरावत गोराज्य के पश्चिम में दान की गयी।

**पञ्च द्रोणा अर्ध ट्रक पानकैश्च सहितेति दत्ताः**

**श्रेणी संगठन एवं शिल्प उद्योग :**

कृषि अधिशेषों के फलस्वरुप शनैः–शनैः विभिन्न उद्योग–धंधों का उदय हुआ जिसे कुशल शिल्पियों द्वारा संचालित किया जाता था', इन्हीं शिल्पियों के द्वारा स्थापित व्यवस्थित समुदाय श्रेणी कहलाता था। इन श्रेणियां द्वारा राज्य को अत्यधिक आय होती थी। इनके कार्यों की देखरेख के लिए राज्य द्वारा अधिकारी भी नियुक्त किया जाता था। प्रत्येक श्रेणी किसी एक विशेष उद्योग से संबंधित होती थी, इन श्रेणियां को निगम, पूग, निकाय आदि नाम से भी जाना जाता है।

स्कंदगुप्त के इंदौर ताम्रपत्र लेख में (146) इंद्रपुर निवासी तैलक नामक श्रेणी के द्वारा तौल कर दो पल तेल निरंतर दान किए जाने का उल्लेख है।[18]

**इन्द्रपुर निवासिन्यास्तैलिक**

**मंदसौर अभिलेख (मालवा संवत 893)** में रेशमी वस्त्र बुनकर की श्रेणी का लाट देश से दशपुर में आकर बसने का तथा अन्य व्यवसाय यथा–ज्योतिष–विद्या, युद्ध–कौशल के कार्य, संगीत–कला आदि को अपनाने का उल्लेख है तथा रेशम के बुनकरों की श्रेणी द्वारा सूर्य मंदिर के निर्माण का कराया गया।[19] दामोदरपुर ताम्र पत्र अभिलेख के अनुसार एक से अधिक नगर श्रेष्ठी होते थे। पहाड़पुर अभिलेख में भी एक से अधिक नगर श्रेष्ठियों के होने का उल्लेख किया गया है।[20]

श्रेणी संगठन विश्रामगृह, पेयजल की व्यवस्था, मंदिर बनवाने, तालाब खुदवानें, उपवन लगवाने तथा अन्य लोक कल्याणकारी कार्य प्रजा हेतु करती थी।

**निष्कर्ष :**

इस प्रकार विभिन्न कालखण्डों में घटित आर्थिक जीवन के विभिन्न पक्षों को उद्घाटित करने में अभिलेखों का विशेष योगदान रहा है। अभिलेख कृषि, सिंचाई, उद्योग–धंधे, व्यापार–वाणिज्य, राजस्व–कर के साहित्यिक तत्वों को प्रमाणित करने में पूर्णता सक्षम हैं।

**सन्दर्भ ग्रन्थ :**


1. अग्रवाल, वासुदेव शरण– पाणिनीकालीन भारतवर्ष, द्वितीय संस्करण, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, संवत 2026, पृष्ठ संख्या 203
2. गुप्त, परमेश्वरी लाल– प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख, खंड 2, षष्ठम संस्करण, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2013, पृष्ठ संख्या
3. वहीं, पृष्ठ संख्या 125
4. वही, पृष्ठ संख्या 120–121
4. पाण्डेय, राजबली– अशोक के अभिलेख, ज्ञान मंडल लिमिटेड, वाराणसी, संवत 2022, पृष्ठ संख्या 4
5. राजपुरोहित, बी एल–प्राचीन भारतीय अभिलेख, 2007, शिवालिक प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 206– 213
6. गुप्त, परमेश्वरी लाल– वहीं, खण्ड 1, पृष्ठ संख्या 199

7. वही, पृष्ठ संख्या 200
8. खण्ड 2, पृष्ठ संख्या 139–140
9. वही, खण्ड 1, पृष्ठ संख्या 96
10. वही, पृष्ठ संख्या 199
11. पाण्डेय, राजबली, वही, पृष्ठ संख्या 3
12. वही, पृष्ठ संख्या 148
13. गुप्त, परमेश्वरी लाल, वही, खण्ड 1, पृष्ठ संख्या 85
14. वही, पृष्ठ संख्या 135
15. वही, खण्ड 2, पृष्ठ संख्या 357
16. गोयल, श्री राम– प्राचीन भारतीय अभिलेख संग्रह, खंड 1, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1982, पृष्ठ संख्या 339
17. गुप्त, परमेश्वरी लाल – खण्ड 2, पृष्ठ संख्या 122– 123
18. वही, पृष्ठ संख्या 150
19. वही, पृष्ठ संख्या 102– 113
20. सिंह, शरद–प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, द्वितीय संस्करण, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2013, पृष्ठ संख्या 278

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 122-125
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# Comparative study of academic achievement and learning styles of CBSE and State Board students
# CBSE और राज्य बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं अधिगम शैली का तुलनात्मक अध्ययन

**डॉ. महेश कुमार शर्मा**
Assistant Professor, Faculty of Education, Principal D.El.Ed. Institute of Advance Studies in Education Gandhi Vidya Mandir, Sardarshahar.

**सारांश (Abstract)**

भारत में शैक्षिक बोर्ड प्रणाली बहु–बोर्ड संरचना पर आधारित है। विभिन्न बोर्ड अपनी–अपनी पाठ्यचर्या, मूल्यांकन प्रणाली और शिक्षण दृष्टिकोण के अनुसार कार्य करते हैं। केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) राष्ट्रीय स्तर पर एक समान पाठ्यक्रम प्रदान करता है, जो अवधारणा–आधारित, कौशल–केंद्रित और प्रतिस्पर्धात्मक परीक्षाओं की तैयारी पर अधिक बल देता है। CBSE की पाठ्यचर्या में वैज्ञानिक सोच, समस्या–समाधान, प्रयोगात्मक गतिविधियाँ और डिजिटल शिक्षण संसाधनों का समावेश होता है।

इसके विपरीत, राजस्थान जैसे राज्यों में संचालित माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान (RBSE/State Board) राज्य की सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषाई आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यक्रम निर्धारित करता है। इसमें स्थानीय इतिहास, संस्कृति, और मातृभाषा–आधारित शिक्षण पर विशेष जोर दिया जाता है। अधिकांश राज्य बोर्ड स्कूलों में संसाधनों की उपलब्धता, भौतिक अवसंरचना और शिक्षक प्रशिक्षण की गुणवत्ता में क्षेत्रीय भिन्नताएँ देखी जाती हैं। राज्य बोर्ड में मूल्यांकन प्रणाली पारंपरिक और परीक्षा–केंद्रित होती है, जिससे स्मरण–आधारित अधिगम (Rote Learning) का प्रभाव अधिक होता है।

इस शोध में राजस्थान राज्य के CBSE और राज्य बोर्ड से जुड़े कक्षा 10 के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि और अधिगम शैली का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। अध्ययन में कुल 200 विद्यार्थियों को शामिल किया गया, जिनमें 100 CBSE और 100 राज्य बोर्ड के विद्यार्थी थे। शैक्षिक उपलब्धि का मूल्यांकन अर्धवार्षिक परीक्षा अंकों के आधार पर किया गया, जबकि अधिगम शैली का मूल्यांकन विद्यार्थियों द्वारा भरी गई स्व–निर्मित प्रश्नावली के माध्यम से किया गया। अधिगम शैली में दृश्य (Visual), श्रव्य (Auditory) और क्रियात्मक (Kinesthetic) आयामों पर ध्यान दिया गया।

प्रारंभिक विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि CBSE विद्यार्थियों की औसत शैक्षिक उपलब्धि राज्य बोर्ड के

विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाई गई। साथ ही, अधिगम शैली के संदर्भ में CBSE के विद्यार्थी अवधारणा–आधारित और क्रियात्मक गतिविधि–उन्मुख अधिगम की ओर अधिक झुकाव रखते हैं, जबकि राज्य बोर्ड के विद्यार्थी पारंपरिक स्मरण–आधारित अधिगम शैली में अधिक सक्रिय दिखाई देते हैं।

यह तुलनात्मक अध्ययन केवल परीक्षा अंकों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक कौशल, समस्या–समाधान क्षमता और सीखने की प्रक्रिया पर भी प्रकाश डालता है। इस प्रकार, राजस्थान में CBSE और राज्य बोर्ड से जुड़े विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि और अधिगम शैली के अंतर को समझना न केवल शैक्षिक गुणवत्ता और नीति निर्माण के लिए आवश्यक है, बल्कि यह शिक्षकों, अभिभावकों और शोधकर्ताओं को भी यह दिशा देता है कि शिक्षा को अधिक समावेशी और प्रभावी बनाने के लिए किन क्षेत्रों पर ध्यान देना आवश्यक है।

**मुख्य शब्द :** CBSE, राज्य बोर्ड, शैक्षिक उपलब्धि, अधिगम शैली, तुलनात्मक अध्ययन।

**प्रस्तावना :**

भारत की बहु–बोर्ड शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत राजस्थान राज्य में भी विभिन्न शैक्षिक बोर्ड कार्यरत हैं। राजस्थान में राज्य स्तर पर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान (RBSE/BSER) विद्यालयी शिक्षा का संचालन करता है, जबकि राष्ट्रीय स्तर पर केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) से संबद्ध अनेक विद्यालय भी राज्य में संचालित हैं। इन दोनों बोर्डों की पाठ्यचर्या, परीक्षा प्रणाली, शिक्षण–पद्धति तथा मूल्यांकन दृष्टिकोण में कुछ महत्वपूर्ण अंतर पाए जाते हैं, जिनका विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं अधिगम शैली पर प्रभाव पड़ता है।

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (RBSE) राज्य की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भाषाई आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम निर्धारित करता है। इसमें स्थानीय इतिहास, संस्कृति एवं क्षेत्रीय संदर्भों को विशेष महत्व दिया जाता है। अधिकांश सरकारी विद्यालय RBSE से संबद्ध हैं, जहाँ संसाधनों की उपलब्धता, शिक्षक–छात्र अनुपात तथा भौतिक अवसंरचना में क्षेत्रीय विविधता देखने को मिलती है–विशेषकर ग्रामीण एवं अर्ध–शहरी क्षेत्रों में परीक्षा प्रणाली प्रायः वार्षिक बोर्ड परीक्षा पर आधारित होती है, जिसमें वर्णनात्मक प्रश्नों का अधिक समावेश रहता है।

इसके विपरीत, राजस्थान में संचालित CBSE विद्यालय–विशेषकर शहरी क्षेत्रों जैसे जयपुर, जोधपुर, कोटा एवं उदयपुर–में आधुनिक शिक्षण संसाधन, डिजिटल कक्षाएँ, प्रयोगशालाएँ एवं सह–पाठ्यक्रम गतिविधियाँ अधिक विकसित रूप में उपलब्ध होती हैं। CBSE की पाठ्यचर्या अवधारणा–आधारित, कौशल–केंद्रित तथा प्रतिस्पर्धात्मक परीक्षाओं (जैसे इंजीनियरिंग एवं मेडिकल प्रवेश परीक्षाएँ) की तैयारी के अनुरूप मानी जाती है।

**राजस्थान के संदर्भ में शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन यह संकेत देता है कि –**

☐ शहरी क्षेत्रों के CBSE विद्यालयों में औसत परीक्षा परिणाम अपेक्षाकृत उच्च पाए जाते हैं।

☐ RBSE विद्यालयों में ग्रामीण पृष्ठभूमि के विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने से सामाजिक–आर्थिक कारकों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

☐ अधिगम शैली की दृष्टि से, CBSE विद्यार्थियों में गतिविधि–आधारित एवं अवधारणा–आधारित अधिगम की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है, जबकि RBSE विद्यार्थियों में स्मरण–आधारित अधिगम अपेक्षाकृत अधिक देखा जाता है।

हालाँकि, यह अंतर केवल बोर्ड के कारण नहीं, बल्कि विद्यालयी संसाधनों, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षक गुणवत्ता एवं शैक्षिक वातावरण जैसे बहुआयामी कारकों से भी प्रभावित होता है। इसलिए राजस्थान राज्य में CBSE एवं RBSE बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं अधिगम शैली का तुलनात्मक अध्ययन न केवल शैक्षणिक गुणवत्ता के मूल्यांकन हेतु आवश्यक है, बल्कि राज्य की शिक्षा नीति को अधिक प्रभावी एवं समावेशी बनाने के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

**अध्ययन के उद्देश्य :**

1. CBSE एवं राज्य बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना करना।
2. दोनों बोर्ड के विद्यार्थियों की अधिगम शैली का विश्लेषण करना।
3. उपलब्धि एवं अधिगम शैली के मध्य संबंध ज्ञात करना।

**परिकल्पनाएँ (Hypotheses)**

H01 : CBSE एवं राज्य बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

H02 : दोनों बोर्ड के विद्यार्थियों की अधिगम शैली में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

**अनुसंधान पद्वति :**

1. अनुसंधान प्रकार : वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक।
2. नमूना : 200 विद्यार्थी (100 CBSE, 100 राज्य बोर्ड)– कक्षा 10
3. उपकरण :
   a. उपलब्धि परीक्षण (100 अंकों का)
   b. अधिगम शैली प्रश्नावली (दृश्य, श्रव्य, क्रियात्मक आयाम)
4. सांख्यिकीय तकनीक : औसत (Mean), मानक विचलन (SD), t–परीक्षण

**डेटा प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण :**

**(क) शैक्षिक उपलब्धि (अंकों में)**

| बोर्ड | N | Mean | SD | t & value |
|---|---|---|---|---|
| CBSE | 100 | 78-40 | 8-25 | 3-12 |
| राज्य बोर्ड | 100 | 72-10 | 9-10 | राज्य बोर्ड |

**व्याख्या :** t-value (3.12) 0.05 स्तर पर महत्वपूर्ण पाई गई। अतः H01 अस्वीकृत। CBSE विद्यार्थियों की उपलब्धि अधिक पाई गई।

**(ख) अधिगम शैली (औसत स्कोर)**

| अधिगम शैली | CBSE (Mean) | राज्य बोर्ड (Mean) |
|---|---|---|
| दृश्य (Visual) | 34-5 | 28-2 |
| श्रव्य (Auditory) | 30-1 | 29-4 |
| क्रियात्मक (Kinesthetic) | 35-2 | 31-8 |

**व्याख्या :** CBSE विद्यार्थी दृश्य एवं क्रियात्मक अधिगम शैली में उच्च स्कोर करते हैं, जबकि राज्य बोर्ड

विद्यार्थी अपेक्षाकृत पारंपरिक/स्मरण–आधारित पद्धति की ओर अधिक झुकाव रखते हैं।

**(ग) उपलब्धि एवं अधिगम शैली के मध्य सहसंबंध**

| बोर्ड | t & value |
|---|---|
| CBSE | 0-62 |
| राज्य बोर्ड | 0-48 |

यह दर्शाता है कि CBSE विद्यार्थियों में अधिगम शैली एवं उपलब्धि के बीच मध्यम से उच्च सकारात्मक संबंध है।

**प्रमुख निष्कर्ष :**

1. CBSE विद्यार्थियों की औसत शैक्षिक उपलब्धि राज्य बोर्ड से अधिक पाई गई।
2. CBSE विद्यार्थियों में गतिविधि–आधारित एवं अवधारणा–आधारित अधिगम की प्रवृत्ति अधिक है।
3. राज्य बोर्ड विद्यार्थियों में स्मरण–आधारित अधिगम शैली का प्रभाव अधिक पाया गया।
4. अधिगम शैली का शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव देखा गया।

**शैक्षिक निहितार्थ :**

1. राज्य बोर्ड में अवधारणा–आधारित शिक्षण पद्धति को बढ़ावा दिया जाए।
2. दोनों बोर्ड में गतिविधि–आधारित एवं ICT–सहायक शिक्षण को लागू किया जाए।
3. विद्यार्थियों की अधिगम शैली के अनुसार शिक्षण रणनीति विकसित की जाए।

**निष्कर्ष :**

अध्ययन से स्पष्ट है कि CBSE एवं राज्य बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं अधिगम शैली में महत्वपूर्ण अंतर है। पाठ्यचर्या, मूल्यांकन प्रणाली एवं शिक्षण विधि इन अंतरों के प्रमुख कारण हो सकते हैं। यदि राज्य बोर्ड भी अवधारणा–आधारित एवं कौशल–उन्मुख शिक्षण को अपनाएँ, तो विद्यार्थियों की उपलब्धि में सुधार संभव है।

**संदर्भ :**


1. केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड. (2022). Annual Report 2021–22. CBSE.
2. उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद. (2022). High school examination report. UPMSP.
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद. (2005). National curriculum framework 2005. NCERT.
4. शिक्षा मंत्रालय. (2022). Unified District Information System for Education Plus (UDISE+) 2021–22 report. Government of India.
5. राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण. (2021). National Achievement Survey 2021 report. Government of India.
6. प्रथम. (2022). Annual Status of Education Report (ASER) 2022. ASER Centre.
7. यूनेस्को. (2022). Global education monitoring report 2022. UNESCO Publishing.
8. यूनिसेफ. (2021). The state of the world's children 2021. UNICEF.
9. विश्व बैंक. (2018). World development report 2018 : Learning to realize education's promise. World Bank.
10. निति आयोग. (2021). School education quality index (SEQI) Report. Government of India.


Contact No. 9460563985,7357573985

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 126-129

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# राजस्थान की प्रसिद्ध महिला चित्रकार डॉ. वीरबाला भावसार का व्यक्तित्व व कृतित्व

**अमनदीप कौर,** शोधार्थी

**डॉ. सोनिया रानी**

Asst. Prof. of Faculty of Art & Craft Science

टांटिया यूनिवर्सिटी, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

वीरबाला भावसार के सम्पूर्ण चित्रण का सार दो पंक्तियों में है। वे रेत या मिट्टी से कभी अलग नहीं हुई। कभी रंगों में काम करने की इच्छा नहीं हुई? ऐसा पूछने पर बताती हैं – कभी ऐसा लगा नहीं कि रेत में कुछ कमी है जो रंगों से पूरी की जाए। रेत उनका निजी प्रयोग है।

**वीरबाला लिखती हैं :**

"माटी ही ललित रूप है, जिसकी उपज रस है।
और सौन्दर्य है – जिसे सुना जा सकता है,
देखा जा सकता है, जहाँ स्वर्गीय आनन्द है
जो न लगे खेती में, कवि उगाए रेती में।"

**जीवन परिचय :–**

वीरबाला भावसार का जन्म 10 अक्टूबर 1941 को गुजरात के अहमदाबाद शहर में हुआ। मूल निवास बांसवाड़ा होने से उनका बचपन वहीं पर बीता। पिता धूलजी भाई भावसार व माता विजयादेवी दोनों स्वतंत्रता सेनानी और गांधीवादी विचार के पोषक थे। वीरबाला ने अहमदाबाद जाकर कला शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने कई लेख भी प्रकाशित किये। वीरबाला की कला में सैद्धान्तिक एवं प्रयोगिक दोनों पक्ष समान रूप से चले रहे हैं। उनके कार्य और कथन में विरोधाभास नहीं है। उनका मानना है कि जीवन में बहुत सी समस्याएं होती हैं, परन्तु अपने में आत्मविश्वास रखकर आगे बढ़ना चाहिए। वीरबाला राजस्थान में चित्रकला की प्रथम महिला प्रोफेसर रही।

**कला शिक्षा :–**

वीरबाला ने कला शिक्षा अहमदाबाद जाकर प्रारम्भ की। ललित कला में डिप्लोमा (डिप्लोमा इन फाइन आर्ट्स) 1966 गुजरात से प्राप्त किया। सन 1967 में आर्ट मास्टर गुजरात से, 1970 में एम.ए. चित्रकला उज्जैन से व 1986 में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। बांसवाड़ा और डूंगरपुर की आदिवासी कला को लेकर 1996 में

राजस्थान विश्वविद्यालय से आदिवासी कला में शोध कार्य किया तथा ग्रामीण और लोक कलाओं का अध्ययन किया।

**कला यात्रा :–**

वीरबालाजी ने शुरू–शुरू में छोटे–छोटे हैंडमेड शीट के कागजों में रेत से चित्र बनाये। यह बात 1965 की है। फिर 1971 में कैनवास पर रेत से चित्र बनाये। यहीं से निरंतर प्रयोगशील रहकर वीरबाला भावसार ने एकल और सामूहिक प्रदर्शनियों के माध्यम से अपनी निजी कला शैली का परिचय दिया है तथा देश की प्रमुख पत्र पत्रिकाओं में सुर्खियां प्राप्त की।

दिल्ली के रवीन्द्र भवन की कला दीर्घा में आपके चित्रों की प्रथम प्रदर्शनी का आयोजन हुआ।

**प्रदर्शनियाँ :–**

वीरबाला ने रेट्रोस्पेक्टिव सहित 25 एकल प्रदर्शनियाँ 1971 से 2012 तक भारत के विभिन्न शहरों में कर चुकी हैं जैसे – अहमदाबाद, नई दिल्ली, जयपुर, मुंबई, कोलकाता, भोपाल, उदयपुर, लखनऊ। यही नहीं आपने 8 राज्य और 6 राष्ट्रीय कैम्पों में भी भागीदारी निभाई है। साथ ही 9 राज्य और 8 राष्ट्रीय कला मेलों में भी भाग ले चुकी हैं।

**चयन :–**

आपके चित्र राष्ट्रीय कला प्रदर्शनियों में 1983, 1988, 1989 और 2000 में चयनित हुए। गुजरात ललित कला अकादमी में 1963 से 1971 तक कुल 3 बार, राजस्थान ललित कला अकादमी में 1977 से 82 से 2001, 2010 तक कुल 21 बार, राज्य व अखिल भारतीय प्रदर्शनियों 1992, 1994 में चयन, अन्य अखिल भारतीय कला प्रदर्शनियों में 1967 से 2000 तक कुल 26 बार चयनित।

**सेमिनार/कॉन्फ्रेंस :–**

आप ललित कला अकादमी, लखनऊ में राधा कमल मुखर्जी व्याख्यान माला, 2008 की मुख्य वक्ता रही, राज्य ललित कला अकादमी, राजस्थान विश्वविद्यालय एवं ऑल इंडिया कॉन्फ्रेंस सहित कुल ग्यारह पत्र वाचन किये।

**अध्यापन :–**

वीरबाला भावसार ने गुजरात की कला संस्थाओं में अध्यापन (2 वर्ष व्याख्याता, 2 वर्ष प्राचार्य) 1971 से 1974 तक कार्य किया साथ ही राजस्थान विश्वविद्यालय के चित्रकला विभाग में सहायक प्रोफेसर से प्रोफेसर 1974 से 2001 तक रही। 1998 से 2001 तक विभागाध्यक्ष तथा 12 शोधार्थियों को शोध कार्य में मार्गदर्शन किया।

**पुरस्कार :–**

वीरबालाजी को अनेक पुरस्कारों से नवाजा गया। जैसे – राज्य ललित कला जयपुर द्वारा राज्य पुरस्कार – 1982, अखिल भारतीय पुरस्कार–1992, महाराणा सज्जनसिंह सम्मान–2000, मेवाड़ फाउंडेशन उदयपुर–2000, श्री हरीशचन्द्र साहित्यकार एवं चित्रकार सम्मान–जयपुर 2011, महाकौशल कला परिषद पुरस्कार–रायपुर 1988, टिटास पुरस्कार–होशियारपुर 1987, प्रतिष्ठा समारोह प्रदर्शनी पुरस्कार–उज्जैन 1987, प्रथम राष्ट्रीय महिला कला रत्न पुरस्कार–टोंक 2007, समाज रत्न–जयपुर 2008, छात्र कला पुरस्कार–ललित कला अकादमी गुजरात 1964

**प्रकाशन :–**

उनकी पुस्तक "आदिवासी कला" प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली से 1993 में प्रकाशित हुई। यह पुस्तक काफी चर्चित रही है। इसके अतिरिक्त 2001 से 2012 तक कविताओं व लघु कथाओं की 12 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कविता संग्रह–10 बागड़ी (राजस्थानी) कविता संग्रह–1 लघुकथा संग्रह–1 कला एवं सौन्दर्य पर 44 लेख एवं अन्य विषयों पर 24 लेख प्रकाशित हुए। उनके द्वारा लिखे गये लेख विभिन्न कला पत्र–पत्रिकाओं व समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए।

**चित्र निर्माण प्रक्रिया :–**

वीरबालाजी के चित्र आदिवासी, लोककला और प्रकृति प्रेरणा का स्रोत बने, जिसके लिए रेत का टेक्स्चर अनुकूल लगने लगा। प्राचीनत्व और लोक शैली के चरित्र को लाने के लिए भी वीरबालाजी को रेत का माध्यम उपयोगी लगा। इस प्रकार वे पूरी तरह रेत को ही समर्पित हो गई। वे रेत या मिट्टी से कभी अलग नहीं हुई। उनके अनुसार मिट्टी एक सुधाट्य माध्यम है। उल्लेखनीय है कि वे अपने चित्रों में रेत से ही तरलता, गहराई दूरी, धनत्व, रेखीय सघनता, पारदर्शिता, परिप्रेक्ष्य, विभिन्न प्रकार के तान, टेक्स्चर, स्पेस का आभास, आकाश व पृथ्वी के बीच झूलते आकार आदि सभी कुछ दर्शाती है। वे अपने चित्रों में फेविकोल अथवा अन्य किसी ऐडेसिव को कैनवास के धरातल पर पहले लगाती है फिर छलनी अथवा हथेली या जंगलियों की सहायता से उस पर रेत बिछाती चलती है और नया संसार सृजित होने लगता है। बाद में आस–पास पड़ी रेत को कैनवास से हटा देती है। जिस जगह को उन्हें नजदीक व गहरा दिखाना होता है वहां वे रेत की दसरी परत को चडा देती है। वीरबालाजी अपने इस कार्य को इतने अच्छे से करती है कि जिस जगह जितनी रेत चाहिए उतनी ही गिराती है।

वीरबालाजी के 'गाँव' नाम चित्र में उन्होंने पांच दरवाजे दिखाए हैं। झोपड़ियों के और उनके बीच में से निकलता हुआ एक रास्ता दिखाया गया है। पेड़ भी बनाए है। इस चित्र में वीरबालाजी ने छाया और प्रकाश को बड़े ध्यानपूर्वक दिखाया। पेड़ की पत्तियों को भी दर्शाया गया है। एक सूखा पेड़ भी है और इस चित्र का आकार 36" x 24" है और ये कैनवास व रेत द्वारा बनाया गया है। (चित्र नं.–1)

'प्राचीन संसार' नामक पेन्टिंग भी रेत से खादी पर बनाई गई है। इसका आकार 36" x 24" है और इसमें सात जानवर व चार मानव आकृतियाँ दिखाई गई हैं। जानवर दौड़ रहे हैं। एक जानवर सीड़ियां चड़ रहा है। दो मानव आकृतियां हाथ पकड़े खड़ी हैं। मानो उनको देख रही है और दौड़ते हुए पांच जानवर है और दो मानव

आकृतियां उनके पीछे है जिसमें से एक स्त्री और एक पुरुष है। स्त्री का बायां हाथ ऊपर है और दायां नीचे। पुरुष स्त्री के पीछे है। दोनों के बाल गरदन तक दिखाए गए हैं। रेतीले पहाड़ भी हैं और कुछ झाड़ियों को भी दर्शाया गया है। दो जानवर को पेन्टिंग के आएं और ऊपर की ओर दिखाया गया है। (चित्र नं. 2)

'गांव की ओर ये चित्र 1997 में बीरवालाजी ने बनाया। इसका आकार 36" x 24" है और ये कैनवास पर रेत द्वारा बनाया गया। इसमें वीरबालाजी ने सोलह मानव आकृतियां दर्शायी हैं। जिसमें से एक सबसे आगे है फिर दो उसके पीछे हैं और फिर दस मानव आकृतियां उनके पीछे हैं जिसमें से एक को नृत्य करते दिखाया गया है। तीन फिर उनके पीछे उनके ऊपरी हिस्से में दिखाई गई है। रेत के टीले व पेड़–पौधों को भी चित्रित किया गया है। सूखे पेड़ भी दर्शाये हैं। कुछ पत्ते नीचे गिरे हुए हैं और झाड़ियों को भी बनाया गया है। (चित्र नं. 3)

**संदर्भ ग्रन्थ :-**


1. वेबसाईट www.dr.veerbalabhavsar.com
2. सुमन जनकावत, मीनाक्षी कासलीवाल 'भारती' का व्यक्तित्व व कृतित्व, 2008, पृ. 11
3. वेबसाईट www.dr.veerbalabhavsar.com
4. डॉ. मीनाक्षी कासलीवास 'भारती', वीरबाला भावसार, 2013, पृ. 5, 6, 8, 26, 27
5. डॉ. आर.के. वशिष्ठ, डॉ. भवानी शंकर शर्मा राजस्थान की महिला चित्रकार, 1990–91, पृ. 14
6. वेबसाईट : www.dr.veerbalabhavsar.com.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 130-133

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# साहित्य में स्त्री का आत्म–प्रतिबिंब

**देवार्चन चक्रवर्ती**
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
रवेंशॉ विश्वविद्यालय, कटक, ओड़िशा।

साहित्य एक शुष्क मरुभूमि से अधिक कुछ नहीं होती अगर इसमें नारी रूपी वर्षा का सिंचन न हुआ होता। कवि को जब भी साहित्य में रूखापन दिखा तब उसने अपनी कलम नारी की दिशा में मोड़ दी। जब भी किसी उपन्यास या कहानी के पात्र लड़खड़ाए, तब सहारा बन कर एक नारी ही आती दिखाई पड़ी। बिना नारी के साहित्य की कल्पना लगभग असंभव ही जान पड़ता है।

अगर बहुत अच्छे से साहित्य के इतिहास पर नजर दौड़ाई जाए तो यह समझने में ज्यादा समय नहीं लगेगा, कि अधिकतर साहित्य पुरुषों द्वारा रचा गया साहित्य है। जीवन नारी का, कलम पुरुष की, कहानी नारी की कथावाचक सदा ही पुरुष। इस बात को अन्यथा नहीं लेना चाहिए। पुरुषों ने जब भी नारी को लिखा, निसंदेह सुंदर लिखा। चाहे प्रेमचंद की जालपा हो या निर्मल वर्मा की लतिका, दोनों के अपने संघर्ष थे, दोनों की अपनी परिस्थितियाँ। पर उन संघर्षों के बीच, उन परिस्थितियों के साथ वे सदैव सुंदर एवं सदैव शाश्वत रहीं।

परंतु पुरुष ने केवल वही लिखा जो उसके आँखों से होते हुए उसके अंतर्मन तक पहुँच पाया। पुरुष वह बात कभी नहीं लिख पाया जो दरअसल स्त्री के अंतर्मन में दिखती–छिपती रहती है। यह बात स्वाभाविक भी है क्योंकि पुरुष ने कभी वो जिया ही नहीं जो नारी जीती आ रही है। और बिना जिए दारुण जीवन के प्रति मनुष्य की केवल सहानुभूति ही मिल सकती है जिससे दया की गंध आती है। स्वानुभूति की झलक तो केवल तब दिखाई देती है जब एक नारी की कहानी स्वयं एक नारी लिखती है।

एक समय था जब नारी को अक्षरों से यथासंभव दूर रखा जाता था। समयक्रम में परिवर्तन होने लगे और नारी का आगमन साहित्य के क्षेत्र में हुआ परंतु इस बार सृजन–विषय के रूप में नहीं बल्कि सृजनकर्ता के रूप में। वर्षों से दबी वेदना, संघर्ष, सुप्त–आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति अब साहित्य में धीरे–धीरे होने लगी। हिन्दी की प्रथम नारी लेखिका के रूप में राजेन्द्रबाला घोष का आगमन 1907 में 'दुलाईवाली' कहानी के माध्यम से होता है। 'दुलाईवाली' से पूर्व भी इनकी रचनाएं प्राप्त होती हें, जैसे कि 1904 में 'चंद्रदेव से मेरी बातें' और 1906 में 'कुम्भ में छोटी बहु'। परंतु 'दुलाईवाली' कहानी में इन्होंने सर्वप्रथम स्त्री चेतना का पुट दिया। ध्यान देने की बात यह है, कि उनकी यह कहानी राजेंद्रबाला घोष के नाम से न छप कर 'बंगमहिला' के नाम से छपी। क्योंकि उस समय भी नारी के लेखन को सामूहिक रूप से अपनाया नहीं गया था। परंतु बंगमहिला के आगमन के साथ ही स्त्री–लेखन की परंपरा हिन्दी साहित्य में प्रारंभ हो गई। राजेंद्रबाला की कहानी 'दुलाईवाली' व्यंगयात्मक शैली

में लिखी गई एक रचना है जिसमें स्त्री चेतना और आंचलिकता की भावना है। हिन्दी की प्रथम नारी लेखिका कहते हुए यह बात स्पष्ट कर देना आवश्यक हो जाता है, कि बंगमहिला हिन्दी साहित्य की प्रथम महिला लेखिका हैं जिन्होंने स्त्री–चेतना को नजर में रखते हुए अपनी साहित्य रचना की। समकालीन साहित्यकारों के साथ समान गति में कंधे से कंधा मिला कर सृजन करने वाली ये प्रथम महिला कथाकार बनी। तत्कालीन मुख्य धारा के लेखकों की पंक्ति मे इनका भी नाम लिया गया। "यदि 'इंदुमति'किसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो हिन्दी की यही पहली मौलिक कहानी ठहरती है। इसके उपरांत 'ग्यारह वर्ष का समय' फिर दुलाईवाली का नंबर आता है।"[1] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में कहानी विधा की चर्चा करते हुए इस पंक्ति का उल्लेख किया है। इन्होंने अपनी रचनाओं में नारी अस्मिता के प्रश्नों को प्रबल मात्र में उठाने का भरसक प्रयास किया। हर काल में यह मान्यता रही है कि नारी और पुरुष दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, और साथ ही यह धारणा भी चलती आयी है कि नारी को कभी भी पुरुष जितने अधिकार न मिले।

**'माँ–बाप ने पैदा किया था गूंगा**
**परिवेश ने लंगड़ा बना दिया**
**चलती रही परिपाटी पर**
**बैसखियाँ चरमराती हैं।**
**अधिक बोझ से अकुलाकर**
**विकसित मन हुंकारता है**
**बैसखियों को तोड़ दूँ।'**[2]

सुशीला टाकभौरे ने 'विद्रोहिणी' कविता के इन पंक्तियों के माध्यम से समाज में व्याप्त नारी विषयक समस्या, संघर्ष और समाधान तीनों की छवि एक साथ दिखलाती हैं। इस कविता को पढ़ कर 'द सेकंड सेक्स' में सिमोन की लिखी हुई पंक्ति याद आती है, "स्त्री पैदा नहीं होती बनाई जाती है"। इस बात में कितनी सत्यता है इसका प्रमाण हमारा सतत इतिहास देता आया है। खास कर स्त्री–लेखन साहित्य का इतिहास। परिवार में एक बेटी के पैदा होने के साथ कहीं न कहीं एक उदासी भी पैदा हो जाती है। उसके लिए अलग से नियम–कानून बनने लगते हैं। कितना हँसना है, कहाँ हँसना है, बात करने की स्वाधीनता कितनी होनी चाहिए, कपड़े कहाँ तक होने चाहिए आदि आदि...। पुरुष अगर जोर हँसे से तो उसको शोभा देता है, परंतु एक नारी की मुस्कान अगर हंसी में भी बदल जाए तो वह अशोभनीय हो जाता है। "यदि पुरुषों में महिलाओं के गुण आ जाये तो वह देवता हो जाता है और यदि महिलाओं में पुरुष के गुण या जाए तो वह कुलटा हो जाती है।"[3] प्रेमचंद जैसे साहित्यकार उस समय यह बात समझने में सक्षम थे परंतु आजके अत्याधुनिक समाज में कुछ ऐसे विद्वजन हैं जो इस बात को समझने में असमर्थ हैं। यह कहना उचित नहीं होगा कि इतने वर्षों में स्त्री–चेतना के क्षेत्र में एक भी परिवर्तन नहीं आयाय परंतु परिवर्तन की गति जिनती प्रखर होनी चाहिए थी उतनी नहीं हुई।

विमर्श शब्द का प्रयोग हमेशा से उस वर्ग के लिए किया जाता है जो अपने अधिकारों से वंचित, पीड़ित एवं शोषित हो। और समाज को यह प्रश्न अपने आप से करना चाहिए कि ऐसी परिस्थिति का आगमन समाज में हुआ ही क्यों, जिससे स्त्री को विमर्श शब्द की आवश्यकता पड़ी? समाज का मूल्यबोध किस स्तर तक गिरा होगा, व्यक्ति की अपनी मर्यादा और कर्म–भावना किस हद तक कलुषित हुई होगी कि नारी को उस देश में

अबला का करार दे दिया गया, जिस देश में शक्ति की पूजा की जाती है? जब समाज का पुरुष अपने आप से यह सवाल पूछने में असमर्थ रहा तब नारी ने यह संकल्प लिया कि उसे यह सवाल भी स्वयं पूछने हैं और जवाब भी स्वयं को ही देना है। कुछ इस तरह शुरू हुआ हिंदी साहित्य में स्त्री–लेखन।

1930 के आसपास साहित्य के क्षेत्र में देखा गया कि महिलाओं का एक वर्ग संकल्पबद्ध हो कर साहित्य के क्षेत्र में अपना योगदान देने लगी। केवल लेखन कार्य ही नहीं, बल्कि विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादन के साथ–साथ, साहित्यिक–संगोष्ठियों में भी अपनी पूर्ण सहभागिता करने लगी।

आठवें दशक तक आते–आते स्त्री लेखन के क्षेत्र में अवश्य ही परिवर्तन नजर आते है। छठी शताब्दी तक साहित्य में केवल पुरुष लेखकों का बोलबाला था। आठवें दशक में स्त्री विमर्श के झंडे इसलिए इतनी मात्रा में फहराए गए क्योंकि उस समय महिला लेखिकाओं की संख्या और लोकप्रियता दोनों ही बहुत आधिक बढ़ गई। सीमोन की लिखी एक पंक्ति ने भी भारत में स्त्री विमर्श के क्षेत्र में अपना गहरा प्रभाव छोड़ा था, "स्त्री की स्थिति अधीनता की है। स्त्री सदिओं से ठगी गई है और यदि उसने कुछ स्वतंत्रता हासिल की है तो बस उतनी ही जितनी पुरुष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देनी चाही। यह त्रासदी उस आधे भाग की है, जिसे आधी आबादी कहा जाता है।"[4]

स्त्री विमर्श रूपी जो लहर 1960 के आस–पास आई थी, 1980 तक पहुंचते–पहुंचते वह एक आंदोलन में बदल चुका था। ममता कालिया, चित्रा मुद्गल, कृष्णा अग्निहोत्री, मृदुला गर्ग, मैत्रयी पुष्पा, प्रभा खेतान, नासिरा शर्मा, मृणाल पाण्डेय, रमणिका गुप्ता, अलका सरावगी आदि वे उल्लेखनीय नाम हैं जिन्होंने नारी के व्यवहारिक जीवन की समस्याओं को, उसकी मानसिक त्रासदिओं को बहुत ही मार्मिक ढंग से अपने सृजन में उतारा। आठवें दशक में जिस परिवर्तन की आस में महिलाओं ने कलम उठाया था वह परिवर्तन बिसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में देखने को मिला। केवल चार दीवारों से नहीं, बल्कि हर प्रकार के जकड़न से स्वयं को मुक्त करने की सफल कोशिश बीसवीं शताब्दी की नारी करने लगी। पितृसत्तात्मक समाज के द्वारा डाले गए बेड़ियों के टूटने की आवाज इसी समय से धीरे–धीरे आने लगी। महादेवी वर्मा की 'श्रृंखला की कड़ियाँ' से जिस नारीवादी लेखन परंपरा की सशक्त शुरुआत हुई उसको बल प्रदान करते हुए सफल बनाने में तमाम और महिलाओं ने अपना योगदान दिया। मन्नू भण्डारी का 'त्रिसंकु', उनकी आत्मकथा 'एक कहानी यह भी', मृदुला गर्ग का 'कठ गुलाब', 'चित्तकोबरा', कृष्णा शोबती का 'मित्रों मरजानी', प्रभा खेतान का उपन्यास 'छिन्नमस्ता' एवं उनकी आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' पदमा सचदेव का 'अब न बनेगी देहरी', उषा प्रियंबदा का 'पचपन खंबे लाल दीवारें', 'रुकोगी नहीं राधिका', अमृता प्रीतम की आत्मकथा 'रसीदी टिकट', जैसी आदि रचनाओं में नारी अस्मिता का जो बेबाक चित्रण देखने को मिलता है, वह स्त्री विषयक लेखन और स्त्री–लेखन के बीच के भेद को सर्वसम्मुख प्रस्तुत करता है। इन रचनाओं को पढ़ने के बाद पाठकों का दृष्टिकोण स्त्री–लेखन के प्रति हमेशा के लिए बदल गया।

स्त्री–लेखन हिंदी साहित्य का एक अभिन्न अंग बन चुका है। एक समय वो था जब स्त्री के हिस्से में अक्षरों की भागीदारी बिल्कुल भी नहीं थी और एक आज का परिवर्तित समय है, जब स्त्री–लेखन को हटा कर हिंदी साहित्य की परिकल्पना करना भी मुमकिन नहीं है। हिंदी साहित्य में स्त्री लेखन के जरीए आए हुए परिवर्तन से यह बात प्रमाणित हो जाती है कि अगर एक स्त्री चाहे तो अपने दृढ़ मनोबल के सहारे समाज के किसी भी क्षेत्र में अपने लिए स्थान बना सकती है।

**संदर्भ सूची :**


1. शुक्ल, रामचन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, विश्वभारती प्रकाशन, संस्करण 2005, पृ. 360
2. www-hindwi-org टाकभौरे, सुशीला, विद्रोहिणी कविता।
3. प्रेमचंद, गोदान, वायु एजुकेशन ऑफ इंडिया, संस्करण 2019, पृ. 196
4. बोउवार, द सीमोन, स्त्री उपेक्षिता, हिंदी पॉकेट, संस्करण 2012



Email : chakrabartydebarchan7@gmail,com

Ph. 8249753432

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 134-139
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# नानपारा रियासत : एक अध्ययन

**मो. नसरूल मुस्तफ़ा खान,** शोधार्थी
**डॉ. तबस्सुम फरखी,** प्रोफेसर एवं शोध–निर्देशक
इतिहास विभाग, एम. एल. के. पी. जी. कालेज, बलरामपुर।

**सार :**

अठारहवीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य की केंद्रीय शक्ति कमजोर होने के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय शक्तियाँ केंद्र उभरने लगे, जिन्हें उत्तराधिकारी राज्य कहा गया। अवध दिल्ली से स्वतंत्र होने वाली पहली क्षेत्रीय शक्तियों में से एक था। जिसकी 1722 में एक ईरानी साहसी व्यक्ति, सआदत खां, बुरहानुलमुल्क ने स्थापना की थी। 1801 में वेलेस्ली द्वारा अवध का लगभग आधा क्षेत्र छीन लेने के बाद, इसका क्षेत्रफल 23,923 वर्ग मील बचा था, जिसमें लखनऊ, सुल्तानपुर, एल्डरमाऊ, प्रतापगढ़, पश्चिमरथ, बैसवारा, सलोन, अहलादगंज, गोंडा–बहराइच, सरकार–खैराबाद, सांडी और रसूलाबाद आदि बारह जिले शामिल थे। इन जिलों के ग्रामीण क्षेत्रों में 'तालुका' और 'तालुकदार' एक स्थाई विशेषता थी। इनके नीचे ज़मींदारों, किसानों और भूमिहीन मजदूरों की विशाल संख्या थी। भू–राजस्व हेतु तालुकदार, किसान और सरकार के बीच मध्यस्थ होता था। इन तालुकदारों की अपने तालुके के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका थी। नानपारा, बहराइच जिले की सबसे धनाढ्य मुस्लिम रियासत थी। राजा जंग बहादुर इस रियासत के बहुत शिक्षित और प्रभावशाली तालुकदार थे। यह शोध–पत्र इस रियासत का एक प्रमाणिक ऐतिहासिक पड़ताल करता है।

**की–वर्ड :** उत्तराधिकारी राज्य, सआदत खां, तालुका, नानपारा।

अवध के ग्रामीण क्षेत्र में आंशिक रूप से स्वायत्त भू–स्वामी वर्ग की एक ऐसी संरचना विद्यमान थी जिसे तालुकदार कहा जाता था। तालुकदारों का उदय और विकास के विषय में सी.ए.इलियट का मत है कि मुस्लिम आक्रमण के परिणामस्वरूप पूर्व की ओर भागने वाले राजपूतों के एक के बाद एक कबीले विशेष क्षेत्रों में बसते गए। बाद में आने वाला कबीला, पहले से बसे हुए कबीले को बेदखल कर देता या उसे अधीन बना लेता था। इलियट महोदय इसे राजपूत उपनिवेशीकरण कहा है।[1] प्रोफेसर इरफान हबीब के अनुसार यह प्रक्रिया तब तक चलती रही जब तक कि प्रत्येक प्रमुख कबीले ने, मुगल काल के आसपास, अपना प्रभुत्व क्षेत्र स्थापित नहीं कर लिया। अवध में यही प्रभुत्त का क्षेत्र बाद में तालुका कहलाया और कबीले का मुखिया तालुकदार। बाद में तालुका बनाने की प्रक्रिया केवल राजपूत उपनिवेशीकरण तक सीमित नहीं रही। बाद में अन्य धर्म और जाति के लोगों ने शाही सेवा का लाभ उठाकर अपने तालुकों का गठन किया।

अवध का गोंडा–बहराइच ज़िला, जो घाघरा नदी के कारण दुर्गम क्षेत्र होने के कारण तालुका निर्माण की

दृष्टि से एक उर्वर प्रदेश था। मुग़ल काल और नवाबी शासन में बहराइच जनपद के चारों दिशाओं में रियासतें स्थापित हुई। बहराइच जिले के तीन–चौथाई से अधिक भू–भाग पर तालुकदारों का अधिकार था, और उनमें से आधे पर केवल चार तालुकदार का अधिकार था।'' बहराइच के उत्तर में बहुत बड़ा क्षेत्र पहाड़ी सरदारों और बंजारों के कब्जे में थे। ये बंजारे इतने उपद्रवी हो गए थे कि उन्होंने उत्तर को लगभग अप्राप्य बना दिया था। नानपारा का क्षेत्र भी इन्हीं उपद्रवी सरदारों और बंजारों की नियंत्रण में था। अपने शासनकाल के आरंभ में, शाहजहाँ ने अपने प्रिय पुत्र, राजकुमार दारा की पत्नी सलोना बेगम को, वर्तमान नानपारा क्षेत्र के 148 गाँव जागीर में दिया। इसलिए इस क्षेत्र को सलोनाबाद कहा जाता था।[2] बंजारों के उपद्रव के कारण बेगम का इस जागीर पर अधिकार स्थापित नहीं हो पाया था। बाद में यहीं पर नानपारा रियासत स्थापित हुई।

नानपारा, नेपाल सीमा से संलग्न एक महत्वपूर्ण रियासत थी। 359 गांव के साथ यह ब्रिटिश भारत में अवध की सबसे बड़ी और धनाढ्य मुस्लिम रियासत थी। इसका एक गांव तत्कालीन बाराबंकी जनपद में और शेष 358 गांव बहराइच जिले में पड़ते थे। इस रियासत के क्षेत्रफल में 468 वर्ग मील या 1,210 वर्ग किमी का क्षेत्र शामिल था। 1911 की जनगणना के अनुसार इस रियासत की सकल जनसंख्या 1,54,000 और जन घनत्व 330 व्यक्ति प्रति वर्ग मील था। 1914–15 में नानपारा रियासत का अनुमानित सकल किराया 12,00,000 रुपये से अधिक था। स्थानीय परंपरा के अनुसार, नानपारा शहर की स्थापना एक तेल व्यवसायी निधाई ने की थी। इसलिए इसे निधाई–पुरवा कहा जाता था। बाद में नाम बिगड़कर नदपारा हो गया और तत्पश्चात बदलकर नानपारा हो गया।[4] ऐतिहासिक दृष्टि से बहराइच शहर मुगल काल में शाही छावनी था और यहां एक किला था। मुगल बादशाह शाहजहां ने एक पठान रिसालदार, रसूल खान को 1637 ई. में बहराइच के किले का क़िलेदार नियुक्त किया था। नानपारा के राजा अपनी वंशावली की शुरुआत इसी रसूल खान से मानते हैं। रसूल खान तोग़ जाति के अफ़गानी पठान थे, जिन्हें बादशाह शाहजहाँ ने परगना सलोनाबाद के बंजारों का दमन करने का कार्य सौंपा था। उन्हें वेतन और सैनिकों के वेतन के रूप में नानपारा गांव और परगना सलोनाबाद के चार अन्य गांवों (कुल पांच गांव) का अनुदान में दिया गया। लेकिन रसूल खां ने, बौंडी राज के कमरिया गांव में आवास बनाया। जमाँ खान के पुत्र (रसूल खां के पोते) मुहम्मद खान पहले व्यक्ति थे जिन्होंने नानपारा में अपना निवास बनाया बाद में उनके पुत्र मोहम्मद खां ने नानपारा रियासत की नींव रखी थी।[5]

जब मुहम्मद खान ने नानपारा में निवास बनाया तो धीरे–धीरे बहराइच शहर और किलेदार के पद को इस परिवार ने त्याग दिया। लेकिन परिवार अभी भी मनसबदार बना रहा और अपनी जागीर संभालता रहा। करम खान ने उपद्रवी बंजारों का दमन करने में सफलता प्राप्त की। उनके इस बहादुरी पूर्ण कार्य से प्रसन्न होकर लोग करम खान को राजा कहकर पुकारने लगे। 1763 में नवाब शुजाउद्दौला ने राजा की पदवी इस पठान परिवार के प्रमुख को आधिकारिक रूप से प्रदान की। इस राजा की उपाधि को 1877 में ब्रिटिश सरकार ने वंशानुगत के रूप में मान्यता दे दी। राजा करम खां के पुत्र राजा मुस्तफा खां थे। उन्होंने अवध सरकार की ओर से मेजर हैनकॉक द्वारा मांगे गए 5,000 रुपये के अतिरिक्त राजस्व देने से इनकार कर दिया, तो उन्हें लखनऊ तलब किया गया। जहाँ 1777 में दुर्भाग्यपूर्ण रूप रूप से उनकी मृत्यु हो गई। तत्पश्चात उनके पुत्र राजा सालेह खान ने गद्दी संभाली, बाद में उनके पुत्र राजा मदार बख्स ने गद्दी संभाली। राजा मदार बक्स ने खेती को प्रोत्साहित किया कि उनके 16 वर्षों के शासन में रियासत का राजस्व 14,000 रुपये से बढ़कर 65,000 रुपये प्रति वर्ष हो गया।

राजा मदार बख्श की मृत्यु 1807 ईस्वी में हुई। उसके बाद उनके वर्षीय पुत्र राजा मुनव्वर अली को उत्तराधिकारी बनाया गया। राजा के अल्पायु होने के कारण नानपारा रियासत को 1819 ईस्वी तक प्रत्यक्ष प्रबन्धन (खाम) के अधीन रखा गया। 1827 ईस्वी में मुनव्वर अली ने रियासत का प्रबंध अपने हाथों में ले लिया। राजा जंग बहादुर के निजी सचिव विनोद चंद्र घोषाल लिखते हैं कि "राजा मुनव्वर अली खान, मौज–मस्ती के लिए राजधानी लखनऊ जाते रहते थे। 1847 में उनकी मुलाकात लखनऊ दरबार की एक फैशनपरस्त महिला, एक प्रतिष्ठित सुंदरी, उमराव बेगम से हुई। जिसके प्रेम में फंसकर राजा ने 1847 ई. में विवाह कर लिया। यहीं से रियासत के बुरे दिन की शुरुआत हुई।

**दो रानियों की लड़ाई :** दुर्भाग्य से राजा मुनव्वर अली की शिकार करते समय गलती से गोली लगने से मृत्यु हो गई थी। राजा मुनव्वर अली के कई पत्नी थी। सबसे बड़ी पत्नी महारानी बेगम थी, जो राजा जंग बहादुर केसीआईएफ की मां थी और बड़ी रानी के नाम से प्रसिद्ध थी। लेकिन राजा मुनव्वर अली पर अधिक प्रभाव रखने वाली पत्नी 'उमराव बेगम' थी, जो 'छोटी रानी' के नाम से प्रसिद्ध थी।[6] उमराव बेगम मेंहदी कुली खान की बेटी थीं, जो शिया सांप्रदाय से थे और अवध के अंतिम नवाब वाजिद अली शाह दरबार में प्रभावशाली व्यक्तियों में एक थे। अवध के विलय के मुकदमे की पैरवी के लिए जब राजमाता लंदन रानी विक्टोरिया से मिलने गई थी तो उनके साथ जाने वालों में मेहंदी कुली खां भी थे।[7]

राजा मुनव्वर अली खां की मृत्यु के बाद, पड़ोसी सरदार और राजा इकट्ठे हुए और उनके पुत्र, जंग बहादुर, जो उस समय बहुत छोटा था, को बड़ी रानी के संरक्षण में "मसनद" पर बैठा दिया। हालाँकि, मृतक राजा की दूसरी पत्नी, छोटी रानी (उमराव बेगम) ने युवा राजा जंग बहादुर की ताजपोशी को स्वीकार करने से इनकार कर दिया और दिवंगत राजा के एक शिशु चचेरे भाई, अली खां के दावे का समर्थन करने के बहाने गद्दी को हड़पने की कोशिश की। बड़ी रानी ने उसे जागीर और मासिक भत्ता नकद देने की पेशकश की, जो दिवंगत राजा द्वारा उस पर तय किया गया था। लेकिन वह मारपीट करने पर आमादा थी और अपने भाई हुसैन कुली खां की सहायता से दरबार के प्रमुख अधिकारियों को अपने पक्ष में कर लिया था। उमराव बेगम को बहारून निसाकी सहायता से, नवाब वाजिद अलीशाह की मां जैनब आलिया बेगम का समर्थन भी प्राप्त था। बड़ी रानी ने बेटे जंग बहादुर के साथ मिलकर छोटी रानी का सामना किया। दोनों महिलाओं के बीच चले दीर्घकालिक लड़ाई में न केवल राजघराना बल्कि साधारण जनता बर्बाद और उजाड़ हो गई। इस परिवारिक लड़ाई के दुष्परिणाम को 1855 रेजीडेंट सर जेम्स आउट्रम ने अपनी रिपोर्ट में विस्तृत लिखा है।"[9] इसकी पुष्टि इस तथ्य से भी होती है की बहुत प्रयास करने पर राजा लखनऊ दरबार को देय धनराशि का आधा ही भुगतान कर पाते थे। अंग्रेजों ने भी इस परिवारिक झगड़े का लाभ उठाने का प्रयास किया। विनोद चंद्र घोषाल लिखते हैं कि बहराइच के एक अंग्रेज अधिकारी ने राजा को समझाया की वह अंग्रेज़ सरकार और बहराइच में ईसाई धर्म के प्रचार प्रसार के लिए दान करे।"[10] दोनों रानियां की लड़ाई में बड़ी रानी और उनके नाबालिक पुत्र का पलड़ा भारी था। क्योंकि इन्हें रियासत के आम जनता की सहानभूति प्राप्त था। इस लड़ाई में बड़ी रानी का सेनापति कल्लन खां तोमंदार, कुख्यात बदमाश फ़ज़ल अली और बैरम खान की भी सहायता प्राप्त थी। विनोद चंद्र घोषाल लिखते हैं कि कल्लन खां एक लंबा, बहादुर, इस्पात की तरह कठोर तथा कोयले की तरह काला था।[11] फजल अली को उतरौला राजा ने बड़ी रानी की सहायता के लिए नानपारा भेजा था। इस परिवारिक झगड़े से मुख्य

पीड़ित कृषक वर्ग था। राजा और रानियों के सैनिक बारी–बारी से उन्हें लूटते थे।[12]

**राजा सर जंग बहादुर खान के.सी.आई.ई.सी.आई.ई. (1845–1902) :**

राजा सर जंग बहादुर खान का जन्म 1845 ईस्वी में नानपारा में हुआ था। वह दो वर्ष के थे तभी उनके पिता राजा मुनव्वर अली का देहांत हो गया। 1856 में अवध के विलय के समय नानपारा रियासत दो रानियां के बीच लड़ाई का केंद्र बना था। कंपनी सरकार ने राजा जंग बहादुर को वैध उत्तराधिकारी माना परन्तु अल्प–आयु (12 वर्ष) के कारण रियासत को 1856 से 1862 तक कोर्ट आफ वार्ड के अधीन रखा। कंपनी के समरी बंदोबस्त में इस रियासत को मात्र 6–7 गांव की हानि हुई थी। फिर भी, रियासत ने देश और बेग़म हज़रत महल के प्रति वफादारी दिखाते हुए 1857 की क्रांति में शुरू से अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई लड़ी।[13] राजा जंग बहादुर ने 1862 में 17 वर्ष की आयु में रियासत की कमान पूर्णरूप से अपने हाथों में ले ली। अवध पर अंग्रेजों के पुनः कब्ज़े (1858–59) के बाद कुली परिवार नानपारण में पुनः प्रकट हुआ और राजा को अपने बस में करने के उनका विवाह 16 जुलाई 1863 को सुल्तान शान बेगम (मेंहदी कुली खां की छोटी बेटी ) से 18 वर्ष की आयु में कूटरचित तरीके से करा दिया।[14] विवाह होते ही अनुभवहीन राजा से कुली परिवार ने बहुत धन–दौलत लूटा। सुल्तान शान बेगम से राजा के तीन संतान, दो पुत्री और एक पुत्र, पैदा हुए।

राजा जंग बहादुर एक कुशल प्रशासक, उच्च श्रेणी के न्यायाधीश तथा उत्कृष्ट खिलाड़ी थे। वह नशा, शराब और भोग–विलास से दूर रहते थे। उन्होंने प्रदर्शन में धन बर्बाद ना करके मितव्ययिता से राज का संचालन किया। बहराइच में राजा के बारे में यह कहावत प्रचलित थी कि राजा द्वारा दिया गया वचन एक पंजीकृत बॉन्ड है।[15] यूरोपीय अधिकारी भी राजा के प्रशंसक थे। राजा जंग बहादुर नानपारा म्युनिसिपल बोर्ड के अध्यक्ष के अलावा द्वितीय श्रेणी के आनरेरी मजिस्ट्रेट एवं ऑनरेरी मुंसिफ के पद पर बहुत जिम्मेदारी से कार्य किया। वह नियमित रूप से प्रतिदिन चार से पांच घंटा दीवानी तथा क्रिमिनल्स मुकदमा की सुनवाई करते थे। न्यायिक कार्य के प्रति उनकी गंभीरता इन आकड़ों से स्पष्ट होती है। सन 1900 ई. में पूरे अवध में ऑनरेरी मुंसिफों ने 3,833 मामलों का निपटारा किया था जिसमें से राजा जंग बहादुर खान ने 1,200 मुकद्दमा यानी 31.2 प्रतिशत मुक़दमों का फैसला अकेले किया था। यह पूरे अवध में किसी एक मजिस्ट्रेट द्वारा किया गया सबसे अधिक निर्णय था।[16] 1884 में ब्रिटिश सरकार ने राजा जंग बहादुर को उनकी राजभक्ति और जनभावना के सम्मान में एक तोप का उपहार प्रदान किया। 1886 में उन्हें भारतीय साम्राज्य के सबसे प्रतिष्ठित सम्मान के.सी.आई.ई.सी.आई.ई. और 1901 में 'नाइटहुड' की उपाधि दी गई।

राजा ने कई सुधार एवं विकास के कार्य किये थे। उन्होंने अपने जीवन में समाज के लिए बहुत बड़ी मात्रा में धन एवं भूमि दान में दिए थे।[17] उन्होंने विभिन्न सार्वजनिक कार्यों– रेलवे, सड़क आदि के लिए लगभग 1,500 पक्का बीघा ज़मीन बिना किसी मुआवज़ा के सरकार को दान किया था। इतना ही नहीं, ब्रिटिश सरकार ने जब कतरनिया रेलवे लाइन का निर्माण शुरू किया तो राजा ने बड़ी मात्रा में भूमि और लकड़ी सरकार को दी थी।

राजा जंग बहादुर एक शिक्षित व्यक्ति थे और उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में बहुत योगदान दिया। बड़ी मात्रा में धन उन्होंने शिक्षा संस्थानों को दान किया। धार्मिक शिक्षा के लिए उन्होंने अपने रियासत में मदरसे और मकतब चालू किये। अंग्रेजी शिक्षा के लिए उन्होंने नानपारा में एंग्लो–वर्नाक्युलर स्कूल का संचालन अपने खर्चे पर किया।

इसके अतिरिक्त, वे भारत में कई प्रसिद्ध चैरिटी संस्थाओं को छोटी–छोटी रकम दान करते थे। राजा जंग बहादुर एक उदार और सहिष्णु राजा थे। उनके दरबार में विभिन्न धर्मों के लोग काम करते थे। उनके बहुत से यूरोपीय अधिकारी अच्छे दोस्त थे। बहराइच के तत्कालीन पुलिस अधीक्षक 'कर्नल एफ.एन.एम. मेनार्ड' उनके अच्छे दोस्त थे। कर्नल मेनार्ड की मृत्यु 1890 में श्रीनगर में शिकार करते समय दुर्घटना से हो गई थी। उन्होंने प्रिय मित्र की याद में बहराइच में मेनार्ड मेमोरियल चर्च की स्थापना करायी।

राजा के एकमात्र पुत्र मोहम्मद सिद्दीक खान का जन्म 8 सितंबर 1869 ईस्वी में हुआ था। राजा की मृत्यु 1902 में हुई और उसी वर्ष मोहम्मद सिद्दीक ने नानपारा रियासत की गद्दी संभाली थी। मोहम्मद सिद्दीक खान को लोग 'साहबजादे' के नाम से पुकारते थे। राजा जंग बहादुर उन्हें अच्छी शिक्षा देना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अरबी फारसी और दीनी तालीम के लिए घर पर ही अच्छे शिक्षक नियुक्त किए। लेकिन शहजादे का मन पढ़ाई में नहीं लगता था। राजा ने उनके शिक्षा के लिए बहुत प्रयास किया। अगस्त 1883 में राजा ने कैनिंग कॉलेज लखनऊ के प्रिंसिपल एम.जे. व्हाइट को पत्र लिखकर लखनऊ से एक खानदानी और योग्य बंगाली शिक्षक, जो फारसी भी जनता हो बताने का अनुरोध किया था। डॉ. व्हाइट ने 1883 ई. में विनोद चंद्र घोषाल को भेजा। विनोद चन्द्र घोषाल को राजा ने अपना निजी सचिव और अपने बेटे व दो दामादों का शिक्षक तथा एंग्लो–वर्नाक्यूलर स्कूल का प्रबंधक नियुक्त किया गया।[18] विनोद चंद्र घोषाल लिखते हैं कि साहबजादे को पढ़ाई में कोई रुचि नहीं थी, हालाँकि उसकी याददाश्त अच्छी थी। वह गणित में बहुत कमज़ोर था। बाद में घोषाल के ही सुझाव पर राजा ने बहराइच में नव नियुक्त डिप्टी कलेक्टर ई.जी.यंग को 1886 में साहबजादे को पढ़ाने की जिम्मेदारी दी। लेकिन डिप्टी कलेक्टर को भी निराश होना पड़ा तब राजा ने उत्तर पश्चिमी प्रांत आगरा एवं अवध के लेफ्टिनेंट गवर्नर कॉल्विन ऑकलैंड से भी अपने बेटे की पढ़ाई को लेकर चर्चा की थी।[19]

मोहम्मद सिद्दीक खान का विवाह सीतापुर के तालुकदार मिर्जा फैयाज बेग की पुत्री कमर जमानी बेगम के साथ हुई थी।[20] कुली परिवार, बेटे को पिता के विरुद्ध लड़ाने का हर संभव प्रयास किया। उसे पिता के जीवन में ही गद्दी प्राप्त करने के लिए उकसाया गया। मां और ननिहाल के लोगों के बहकावे में आकर मोहम्मद सिद्दीक खां अपने योग्य पिता के प्रति विरोध और शत्रु भाव रखते थे। कुली परिवार के ही उसके एक रिश्तेदार ने पहली बार 1886 में उसे शराब पीना सिखा दिया। शहजादे को शराब, भांग, चरस की लत इतनी बुरी तरह से पड़ी हुई थी कि जब वह मक्का हज करने के लिए गया तो वहां भी वह शराब नहीं छोड़ पाया और मक्का में ही अधिक शराब पीने से मृत्यु हो गई।[21]

**उपसंहार :**

नानपारा रियासत बहराइच के चार बड़ी रियासतों में एक थी। इसकी स्थापना मुगल काल में हुई थी, जिसने निरंतर प्रगति करते हुए ब्रिटिश काल में बहराइच मंडल की सबसे बड़ी मुस्लिम रियासत का दर्जा प्राप्त किया था। यह कहना अतिश्योक्त नहीं होगा की नानपारा उन गिने–चुने रियासतों में शामिल थी जिन्होंने ने निःस्वार्थभाव से अंग्रेजों के विरुद्ध आज़ादी की पहली लड़ाई लड़ी थी। जब अंग्रेज़ कर्नल अपने कुछ अंग्रेज साथियों के साथ जान की रक्षा के लिए सकरौरा से नानपारा पहुंचा तो तत्कालीन रानी ने अपने महल का दरवाज़ा बंद करा दिया और कर्नल को सन्देश भेजा की तुरंत रियासत से निकल जाइए। यह एक अशांति क्षेत्र को शांत करते हुए स्थापित हुई थी। रियासत के राजा जंग बहादुर एक प्रबुद्ध और न्याय प्रिय राजा थे। अपने

तालुका और तालुके के बाहर भी उन्होंने जन–कल्याण के कार्य हेतु हर संभव सहायता दी। हालाँकि रियासत को पारिवारिक लड़ाई के कारण बहुत नुकसान हुआ था। अवध दरबार के हस्तक्षेप तथा लखनऊ के कुली परिवार के दिन–प्रतिदिन के षड्यंत्र के बावजूद न केवल अस्तित्व बचा रहा, बल्कि अंग्रेजों के विरुद्ध साहस से लड़ना रियासत की मजबूती और दृढ़ता का प्रमाण है। अवध पर पुनः कब्ज़ा करने बाद लार्ड कैनिंग ने शत्रु मानकर रियासत को अन्य राजभक्त तालुकदारों में बाँटकर समाप्त कर दिया।

**सन्दर्भ सूची :**


1. सी.ए.इलियट, द क्रोनिकल्स ऑफ उन्नाव, पेज 28–29 ।
2. गजेटियर डिस्ट्रिक्ट बहराइच, पेज 130 ।
3. विनोद चन्द्र घोषाल, सम नोट्स ऑन नानपारा राज।
4. ए गजेटियर ऑफ द प्रोविंस ऑफ अवध– वॉल्यूम 3 पेज 7
5. गजेटियर ऑफ डिस्ट्रिक्ट बहराइच, पेज 130
6. विनोद चंद्र घोषाल, सम नोट्स आन नानपारा राज, पृष्ठ 4
7. पूर्वोक्त पृष्ठ, पेज 20
8. बहरून निशा, मलिकाए–किश्वर के दरबार की नर्तकी, और जन्म से पंजाबी।
9. बहराइच डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृष्ठ
10. पूर्वोक्त पृष्ठ, पेज
11. पूर्वोक्त पृष्ठ पेज 7
12. पूर्वोक्त पृष्ठ, पेज 7
13. रूद्रांशु मुखर्जी, अवध इन रिवोल्ट 1857–1857 पृष्ठ 159
14. विनोद चंद्र घोषाल, सम नोट्स ऑन नानपारा राज, पेज 16
15. पूर्वोक्त पृष्ठ, पेज 13
16. पूर्वोक्त पृष्ठ पेज
17. पूर्वोक्त, पृष्ठ 13
18. पूर्वोक्त पृष्ठ पेज
19. पूर्वोक्त पृष्ठ पेज
20. पूर्वोक्त पृष्ठ 30
21. पूर्वोक्त पृष्ठ 30

’’ फाइनल रिपोर्ट आन द सेटलमेंट ऑफ बहराइच डिस्ट्रिक्ट, 1901 पृष्ठ 2


khannasrul786@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 140-144

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# श्रीरामचरितमानस का भारतीय परम्परा पर सांस्कृतिक प्रभाव

**पूनम,** शोधार्थी,
**प्रोफेसर संजीव कुमार,** शोध निर्देशक
हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा।

## शोध पत्र

भारत देश प्राचीन समय से ही आध्यात्म एवं साधना, भक्ति का मार्ग प्रशस्त करता आया है। हमारे वेद पुराण, उपनिषद्, ग्रंथ आदि इस आध्यात्मिक मार्ग का सांस्कृतिक आधार रहे हैं। जैसे रामायण, महाभारत, श्रीमद्भगवद्गीता एवं तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस आदि। इन सभी धार्मिक ग्रंथों के माध्यम से ही, भारतीय परंपरा पूर्ण रूप से सांस्कृतिकता के पक्ष को धारण करती है। श्रीरामचरिमानस में तो संपूर्ण ज्ञान एवं भक्ति का सांस्कृतिक स्वरूप एवं प्रभाव समाहित है। हमारी भारतीय परंपराओं में अनेकों त्योहार, अनुष्ठान तथा धार्मिक कार्य समाहित हैं। इन परंपराओं पर संस्कृति का प्रभाव पड़ना एक स्वाभाविक रूप है। गोस्वामी तुलसीदास ने इस ग्रंथ में संपूर्ण रूप से संस्कृति को उजागर किया है। उन्होंनें इसमें दोहों, चौपाइयों तथा छंदों के माध्यम से श्रीराम जी की कथा का सुंदर चित्रण प्रस्तुत किया है। भारतीय परंपरा में राम कथा के मौलिक गुणों को गाथा रूप में गाया एवं सुना जाता है। वर्तमान समय में भी इस ग्रंथ का सांस्कृतिक प्रभाव भारतीय परंपराओं पर देखा जाता है। मानव के जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत तक की सांस्कृतिकता को इस ग्रंथ में वर्णित किया गया है। हमारी परंपरागत प्रणाली का पूर्ण रूप इसे कहा जा सकता है। हमारे समाज में जितने भी अनुष्ठान होते हैं। उनमें इसकी सांस्कृतिकता का चित्रण एवं स्वरूप देखने को मिलता है जब एक बालक का जन्म होता है तो उसे श्रीराम जी के जन्म की भाँति संपूर्ण अनुष्ठानों की

सांस्कृतिकता से परिपूर्ण किया जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने इसका वर्णन करते हुए लिखा है कि–

कौसल्या जब बोलन जाई।

ठुमुक ठुमुक प्रभ चलहिं पराई।।

निगम 'नेति' सिव अंत न पावा।

ताहि धरै जननी हठि धावा।। (1)

अर्थात् जब माता कौसल्या श्रीराम जी को बुलाती है। तब राम जी ठुमुक–ठुमुक कर भाग जाते हैं। जिनका वेद 'नेति' अर्थात इतना ही कहकर निरूपण करते हैं और शिव जी ने जिनका अंत नहीं पाया, माता उन्हें हठपूर्वक पकड़ने के लिए दौड़ती है।

'धूसर धूरि भरें तनु आए।

भूपति बिहसि गोद बैठाए।। (2)

वो शरीर में धूल को लपेटे हुए है और पिता दशरथ ने हँसकर उन्हें गोद में बैठा लिया। वर्तमान में भी नन्हें बालक ऐसा ही करते हैं। तुलसीदास जी ने इसमें संस्कारों का इतना सुंदर चित्रण किया है जिसको वर्तमान समय में भी सांस्कृतिकता पूर्ण निभाया जाता है। भारतीय पंरपरा का एक प्रमुख आधार है, हमारी संस्कृति। इसका प्रभाव पारंपरिकता के संपूर्ण अनुष्ठानों एवं धार्मिक कार्यों में निहित है। विवाह प्रसंग की परंपराओं में भी संस्कृति की भूमिका स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। इसमें राम–सीता का विवाह और शिव–पार्वती का विवाह मुख्य उदाहरण माने जाते हैं। इसमें परंपरागत रूप की संपूर्ण संस्कृतियों का चित्रण समाहित है। वर्तमान भारतीय परंपरा इस सांस्कृतिक धारणा से कैसे विमुख हो सकती है। हमारे वेदों में भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है जिसमें देव पूजा को और प्रकृति को आधार मानकर किया जाता है–

"सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरसः" (3)

अर्थात् सूर्य ही गंधर्व है और उसकी किरणें ही अप्सरा है। हमारी संस्कृति का स्वरूप हमारे वेदों में भी निहित है। इस कारण श्रीराम कथा भी संस्कृति को सात्विक एवं धार्मिक रूप से प्रभावित करती है क्योंकि इसमें श्रीराम जी के मूल्यों तथा आदर्शों का मूल रूप से चित्रण किया गया है। वर्तमान में राम की लीलाओं का वर्णन नाट्य रूपांतरों के माध्यम से किया जाता है। यह हमारी परंपरा रही है कि रामलीलाएं मंचित होनी चाहिए और होती भी है क्योंकि जन समुदाय इन नाट्य मंचों को देखता है और धीरे–धीरे उसे अपने व्यक्तित्व में धारण करता है। भारत में जो संस्कृति समन्वय की प्रकिया चल रही है। उसका संपूर्ण आधार श्रीरामचरितमानस ही माना गया है इसमें जितने भी अनुष्ठानों, राज्यों एवं राजनीतियों का सांस्कृतिक चित्रण किया गया है। उतना किसी अन्य ग्रंथ में नहीं किया गया। गोस्वामी जी ने संस्कारों का इतना सुंदर चित्रण किया है कि भारतीय परंपरा इसको अपनी सांस्कृतिक धरोहर मानती है। इसमें आदर्श चरित्रों का वर्णन किया गया है। जिनकी सांस्कृतिक साधना को संपूर्ण मानव जाति ने ग्रहण किया है। संस्कारों की संपूर्ण विवेचना वर्तमान में भारतीय परंपरा के साथ–साथ संस्कृति भी बन गई है। जब एक बालक का धरती पर जन्म होता है तो उसके साथ उससे जुड़ी सांस्कृतिक निधियां भी जन्म ले लेती हैं। यह सांस्कृतिक निधियां हमारे संस्कारों का मूल चित्रण प्रस्तुत करती है। हमारे मूल्य, आदर्श, विचार तथा आचरण में पूर्ण से समाहित भी होती है। हमारे जीवन के पारंपरिक त्योहार, हमारी संस्कृति को धार्मिक में पूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं जिसमें हर्ष, उल्लास तथा उत्साह जैसे पक्ष होते है, यह पक्ष हमारी संस्कृति को प्रमुखता प्रदान करते हैं। हमारी पारंपरिक पोशाके भी, हमें सांस्कृतिक सोहार्द प्रदान करती है। भारतीय परंपरा में वस्त्रों एवं परिधानों को भी अपनी संस्कृति तथा सभ्यता से जोड़ा जाता है जिस प्रकार पाश्चात्य परिधानों से वहां की संस्कृति का पता चलता है। उसी प्रकार भारतीय परंपरा रूपी संस्कृति के संपूर्ण बिन्दुओं का पता उनके परिधानों से चलता है। परिधान से ही ज्ञात होता है कि हमारी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि कैसी होगी? जैसे महिलाएं साड़ी पहनने पर सभ्य लगती हैं और पुरूष धोती–कुर्ता पहनने के पश्चात् सभ्य एवं संस्कृतिपूर्णता का परिचय देते हैं। महिलाओं के पारंपरिक परिधान एवं आभूषणों से ही संस्कृति

को पहचान मिलती है कि उनकी सांस्कृतिकता कैसी है? परिधानों एवं आभूषणों की पारंपरिकता से ही भारतीय संस्कृति को पहचान मिलती है इसके साथ ही आचरण अथवा व्यवहार से भी हमारी संस्कृति सात्विक रूप से प्रभावित होती है। वही भोजन भी इसका मुख्य आधार माना गया है। कहा जाता है जैसे खाया अन्न वैसा होगा मन। जैसा भोजन ग्रहण किया जाएगा हमारा आचरण भी वैसा ही बन जाता है। इसलिए सात्विक एवं शुद्ध आहार ही ग्रहण करना चाहिए।

शुद्ध मन एवं आत्मा के प्रभाव से मानव जन अपनी संस्कृति से जुड़ा रहता है। उसी प्रकार वह भगवद भजन भी करता है। मानव जन जितना अपने ईश्वर का भजन अथवा चिंतन करता है। वह उतना ही अपनी धार्मिक संस्कृति से जुड़ता चला जाता है। हमारी परंपराओं में भजन का महत्त्व बहुत अधिक माना गया है। हमारी लोक परंपराएं इससे अछूती नहीं हैं। भारतीय परंपरा में लोक परंपरा को भजन–कीर्तन के रूप में संस्कृतिपूर्ण निभाया जाता है। लोक भजनों के माध्यम से, अपनी संस्कृति को उद्भाषित किया जाता है। जिसमें संपूर्ण समाज जन सम्मिलित होते हैं। श्रीराम जी के भजनों के माध्यम से इनकी कथा का गुणगान किया जाता है। भक्तजन गाकर अपने प्रभु की कथा सुनाते हैं। यह परंपरा हमारी संस्कृति को धार्मिक रूप से प्रभावित करती है।

"आना जनक दुलार हमारे हरि कीर्तन में,

आप भी आना संग राम जी को लाना,

लाना सारा परिवार हमारे हरि कीर्तन में

आना जनक दुलार हमारे हरि कीर्तन में।"(4)

इसमें सीता माता को अपने कीर्तन में बुलाने के साथ–साथ संपूर्ण सदस्यों को भी वर्णित किया है। इस प्रकार जब लक्ष्मण को शक्ति बाण लगता है तो इस प्रसंग को भी गाया जाता है।

इतने सूर्य उदय ना होए, संजीवन बूटी ले आइए अर्थात हनुमान जी को राम जी कह रहे हैं। उसी प्रकार जब सीता जी अकेली वन को गई तो लक्ष्मण जी उनको छोड़ने जाते हैं, परंतु बिना बताए ही लौट आते हैं। भक्त इस को भाव पूर्ण रूप से गाकर सुनाते हैं।

"आगे लक्ष्मण, पीछे–पीछे सीता दोनों चले जायें, हरे हो रघुनाथ हरे।

हरे–हरे बड़ की सीली–सीली छाँट, सीता की आँख खुली, लक्ष्मण वन को छोड़ चले हो रघुनाथ हरे।।" (5)

इन प्रसंगों से ज्ञात होता है कि हमारी परंपराएं कितनी गहरी एवं श्रेष्ठ हैं जिनकी प्रभाविता इतनी धार्मिक एवं सात्विक है कि संपूर्ण संसार में संस्कृति का रूप धारण करके विस्तृत हुई है।

## निष्कर्ष

अंततः कहा जा सकता है कि श्रीरामचरितमानस तो हमारी भारतीय परंपराओं की संस्कृति का आधार है। गोस्वामी तुलसीदास ने अपने ग्रंथ में ऐसे सांस्कृतिक बिन्दु समाहित किये हैं, जिसके कारण हमारी संस्कृति सात्विक एवं धार्मिक रूप से प्रभावित होती है। फिर चाहे वह संस्कार हों, भक्ति, धर्म अथवा आचरण हो सभी पक्ष भारतीय परंपरा की सांस्कृतिकता को भव्य रूप प्रदान करते हैं।

## संदर्भ सूची


1. श्रीरामचरिमानस (तुलसीदास) – गीता प्रेस गोरखपुर
2. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर – लोक भारती प्रकाशन
3. हिन्दु संस्कृति अंक (कोश) – गीता प्रेस गोरखपुर
4. वैदिक सम्पत्ति (पं. रघुनन्दन शर्मा) – हिंडौन सिटी (राजस्थान)
5. हरियाणवी साहित्य का इतिहास (डा. राजबीर धनखड़) – सुकीर्ति प्रकाशन (कैथल)

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 145-148

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# 'परिंदे' कहानी : अस्तित्व, आधुनिक चेतना और अकेलापन

**मालती देवी**
शोधार्थी (हिंदी विभाग), हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय।

**सार :**

निर्मल वर्मा की कहानी "परिंदे" हिंदी साहित्य की "नई कहानी" धारा की प्रतिनिधि रचना मानी जाती है। यह कहानी आधुनिक मनुष्य की अस्तित्वगत व्यथा, अकेलेपन, स्मृति और संबंधों की जटिलता को सूक्ष्म संवेदनात्मक स्तर पर प्रस्तुत करती है। कहानी का शीर्षक "परिंदे" स्वयं एक महत्वपूर्ण प्रतीक है। यह कहानी बाहरी घटनाओं से अधिक आंतरिक अनुभवों की कहानी है, जिसमें पात्र अपने अकेलेपन, स्मृतियों और अधूरे संबंधों से जूझते हैं। यह स्वतंत्रता, अस्थिरता, अकेलेपन और जीवन की क्षणभंगुरता का प्रतीक है। कहानी अस्तित्ववादी चिन्तन से गहरे जुड़ी हुई है। अस्तित्ववादी चिंतकों का मानना है कि मनुष्य वर्तमान में जो भी है पूर्व में लिए गये निर्णयों के आधार पर है। अर्थात मनुष्य अपने जीवन का निर्माता स्वयं है और वही अपने अस्तित्व को अर्थ देता है। अस्तित्ववादी चिन्तन यूरोप का दर्शन माना जाता है इसके प्रमुख विचारक ज्यां–पाल सार्त्र, अल्बर्ट कामू व इंगमार बर्गमन हैं। इस शोध आलेख में "परिंदे" कहानी के माध्यम से कहानी में अस्तित्ववाद, आधुनिक चेतना के माध्यम से मनोविश्लेषणवाद और नई कहानी आन्दोलन का समाज व साहित्य पर प्रभाव दिखाया गया है।

**बीज शब्द** – परिंदे, अस्तित्ववाद, क्षणभंगुरता, अलगाव, संवेदना, खालीपन, उद्देश्यहीनता, मुक्ति, मन, जीवन।

**प्रस्तावना :**

"परिंदे" कहानी वर्ष 1957 में हंस पत्रिका में स्वतंत्र रूप से प्रकाशित होती है। संग्रह के रूप यह वर्ष 1960 में प्रकाशित होती है। परिंदे एक प्रतीकात्मक कहानी है। हिंदी साहित्य में 1950 के दशक के बाद "नई कहानी आंदोलन" का उदय हुआ, जिसमें व्यक्ति के आंतरिक जीवन, संवेदनाओं और अस्तित्वगत संकट को केंद्र में रखा गया। निर्मल वर्मा इस आंदोलन के प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं। उनकी कहानी "परिंदे" को इस आंदोलन की आधारभूत कृति के रूप में देखा जाता है। "निर्मल वर्मा के 'परिंदे' का प्रकाशन सन् '60 में हुआ। सन् '59 में ही देश से बाहर चले गए थे और सन् '70 तक उन्होंने चेकोस्लोवाकिया प्रवास सहित यूरोप के अनेक देशों की लम्बी यात्राएं कीं।"[1] इन यात्राओं से उनके दर्शन पर पाश्चात्य जीवन दर्शन और जीवन शैली का गहरा प्रभाव पड़ा जो उनके साहित्य कर्म पर स्पष्ट दिखाई देता है। निर्मल वर्मा हिंदी के प्रमुख कथाकार, निबंधकार और उपन्यासकार थे। उन्हें "स्मृति का कहानीकार" कहा जाता है क्योंकि उनकी रचनाओं में अतीत और वर्तमान का गहरा अंतर्संबंध मिलता है। उनका पहला कहानी संग्रह "परिंदे" इसका सशक्त उदाहरण है।

"परिंदे" कहानी में एक युवक और युवती के बीच के संबंधों को अत्यंत सूक्ष्म और प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। "परिंदे" कहानी एक प्रतीकात्मक कहानी है। यह प्रतीकों के माध्यम से पात्रों की मानसिक स्थिति को दर्शाती है। वे भी परिंदों की तरह उड़ना चाहते हैं, लेकिन बंधे हुए हैं, अपनी सीमाओं से। उदाहरण के लिए, उस छोटे से हिल स्टेशन पर रहते लतिका को खासा अरसा बीत गया है लेकिन कब पतझड़ और गर्मियों का घेरा पार कर सर्दी की छुट्टियों की गोद में सिमट जाता है, उसे कभी याद नहीं रहता। उससे पूछने पर कि वह घर नहीं जा रही, उसके पास एक ही वाक्य होता है, 'आई लव द स्नो फॉल। "यही बात उसने पिछले साल भी कही थी और शायद पिछले से पिछले साल भी। उसे लगा मानो लड़कियां उसे संदेह की दृष्टि से देख रही है, मानो उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया। उसका सिर चकराने लगा मानो बादलों का स्याह झुरमुट किसी अनजाने कोने से उठ कर उसे अपने में डुबो लेगा।"[2]

निर्मल वर्मा की कहानियों में स्मृति का विशेष महत्व है। "परिंदे" में भी पात्र अतीत की यादों में जीते हैं। इसलिए कहानी में घटनाओं की बजाय भावनाओं और मानसिक अवस्थाओं पर अधिक जोर दिया गया है। "परिंदे" केवल एक प्रेम या संबंध की कहानी नहीं है, बल्कि यह आधुनिक मनुष्य की मानसिक स्थिति, अलगाव और जीवन की निरर्थकता की अनुभूति का दार्शनिक आख्यान है। "निर्मल की कहानियां क्योंकि कहानी का एक नई दिशा में मोड़ हैं इसलिए नंदकिशोर आचार्य भी अपनी सहमति नामवर सिंह के साथ दर्ज करते हुए निर्मल वर्मा की कहानियों को 'कहानी में एक नई परंपरा का आरंभ बिंदु' कहते हैं।"[3] निर्मल की कहानियां अपने स्वभाव में पूर्ववर्ती कहानी की किसी भी परंपरा का अनुसरण करती दिखाई नहीं देती। व्यक्ति मन के जिस ठहराव तथा नीरवता को निर्मल की कहानियां व्यक्त करती हैं, वे अन्यत्र दुर्लभ है। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार "निर्मल वर्मा मन की गहरी परतों को उघाड़ने वाले कहानीकार हैं।"[4]

अध्यापिका और वार्डन के रूप में कार्यरत लतिका मेजर गिरीश की मृत्यु के बाद जीवन में आए बदलाव और अकेलेपन को चाह कर भी दूर नहीं कर पाती या शायद वह करना ही नहीं चाहती। भविष्य के प्रति उसकी उदासीनता और शून्यता उसका स्वभाव बन गया है। लतिका के मेजर गिरीश नेगी के साथ जिए और भोगे गए अनुभव उसकी स्मृति का हिस्सा बन गए हैं। कहानी के मुख्य पात्र लतिका, डॉ. मुकर्जी और मि.ह्यूबर्ट गहरे अकेलेपन से जूझ रहें हैं। ये सभी पात्र बाहरी दुनिया में सामान्य दिखते हैं, लेकिन भीतर से भावनात्मक रूप से टूटे हुए हैं। यह स्थिति मन के अवचेतन में दबे दर्द को दर्शाती है सभी पात्र अपने प्रेम, पीड़ा और इच्छाओं को खुलकर व्यक्त नहीं कर पाते हैं। ये भावनाएँ दबकर कुंठा और मानसिक तनाव बन जाती हैं। यह कहानी आधुनिक मनुष्य के जीवन का जीवंत दस्तावेज है।" इस अकेलेपन में कोई गिला नहीं, उलाहना नहीं, सब खींचातानी खत्म। जो अपना है, वह बिल्कुल अपना–सा' परिन्दे' की नायिका लतिका का अकेलापन कोई दूर नहीं कर सकता। एक पहाड़ी हिल स्टेशन पर बतौर हो गया है। जो अपना नहीं है, उसका दुख नहीं, अपनाने की फुर्सत नहीं......"[5] यह अनिर्णयवाद की स्थिति को दर्शाती है। आधुनिक मनुष्य इन्ही समस्याओं से गुजर रहा है। जीवन का अर्थ क्या है? रिश्ते क्यों टूटते हैं? व्यक्ति इतना अकेला क्यों है? कहानी में यह प्रश्न निरंतर बना रहता है। यह प्रश्न आधुनिक मनुष्य के आंतरिक संकट को दर्शाता है। कहानी के पात्र कई स्तरों पर उलझे हुए दिखाई देते हैं जैसे अकेलापन, अस्तित्व–बोध, संबंधों की जटिलता, स्मृति और समय से।" अभी तक जो कहानी सिर्फ कथा कहती थी या कोई चरित्र पेश करती थी अथवा एक विचार का झटका देती थी वही निर्मल के हाथों

जीवन के प्रति एक नया भावबोध जगाती है। साथ ही ऐसे दुर्लभ अनुभूति–चित्र प्रदान करती है जिन्हें हम कम से कम हिंदी में कहानी के माध्यम से प्राप्त करने के अभ्यस्त नहीं थे... फकत सात कहानियों का संग्रह 'परिंदे' निर्मल वर्मा की ही पहली कृति नहीं है बल्कि जिसे हम 'नई कहानी' कहना चाहते हैं उसकी भी पहली कृति है।"[6]

कहानी का प्रमुख विषय अकेलापन है। पात्र भीड़ में रहते हुए भी भीतर से अकेले हैं। यह अस्तित्ववाद की उस अवधारणा को दर्शाता है जिसमें मनुष्य अपने अस्तित्व से संघर्ष करता है। कहानी में मौन इतना प्रखर है कि संवाद अनावश्यक लगते हैं। मौन कहानी में संवाद से अधिक प्रभावी माध्यम है, जो पात्रों की आंतरिक स्थिति को व्यक्त करता है। कहानी में पात्र जीवन के अर्थ की खोज करते दिखाई देते हैं। यह अस्तित्ववादी दर्शन से प्रभावित दृष्टिकोण को दर्शाता है। कहानी में प्रेम संबंध स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं होते, बल्कि संकेतों और मौन के माध्यम से प्रकट होते हैं। यह आधुनिक संबंधों की अस्पष्टता को दर्शाता है। निर्मल वर्मा आधुनिक समाज में संबंधों के विघटन पर विचार करते हैं। समाज में कोई संबंध पूर्ण नहीं है क्योंकि मनुष्य अपने में पूर्ण नहीं है। इस अधूरेपन का अहसास ही अकेलेपन में परिणत होता है।

भाषा की दृष्टि से देखें तो ,निर्मल वर्मा के गद्य की भाषा संवेदनशील, आत्मपरक और गहरी अनुभूति से भरी हुई है। "संगीतात्मकता और दृश्यों का संवेदनशील वर्णन उनकी शैली की विशेषता है। निर्मल वर्मा संवेदना की सूक्ष्मता और पारदर्शिता के लिए महत्त्वपूर्ण हैं, व्यापकता के लिए नहीं।"[7] सरल शब्दों के माध्यम से जटिल भावनाओं को व्यक्त करना उनकी शैली का विशिष्ट उदाहरण है। उनकी शैली में काव्यात्मक लय, सूक्ष्म और चित्रात्मकता वातावरण की सजीवता मिलती है। जिससे पाठक दृश्य और मनःस्थितियों को गहराई से महसूस कर पाता है। वे संकेत और मौन के जरिए अर्थ रचते हैं, जिससे उनकी भाषा और अधिक प्रभावशाली बनती है। साथ ही, उनके गद्य में आधुनिकता और अस्तित्ववादी विचारों का प्रभाव दिखाई देते हैं, जो अकेलेपन और अजनबीपन जैसे विषयों को गहराई से प्रस्तुत करते हैं। नामवर सिंह के अनुसार, "कहानी का गद्य इतना संवेदनशील तो पहले कभी न था। 'परिंदे' को देखकर लगता है कि भाषा के क्षेत्र में जो काम इतने दिन में प्रयोगशील कविता भी न कर सकी उसे अंततः कहानी के गद्य ने कर दिखाया। निर्मल के मानव–चरित्र प्राकृतिक वातावरण में किसी पौधे, फूल या बादल की तरह अंकित होते हैं गोया वे प्रकृति के ही अंग हैं। कहानी प्रभाव सृष्टि की दृष्टि से संगीत की हद छू सकती है या नहीं मुझे नहीं मालूम लेकिन इतना मालूम है कि निर्मल की कहानियां संगीत का– सा प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ हैं। निर्मल ने शब्द की अभेद्य दीवार को लांघ कर शब्द के पहले के 'मौन जगत्' में प्रवेश करने का भी प्रयत्न किया है और वहां जाकर प्रत्यक्ष इंद्रिय– बोध के द्वारा वस्तुओं के मूल रूप को पकड़ने का साहस दिखलाया है इसीलिए उनकी कहानी कला में नवीनता है, भाषा में नव–जातक की –सी सहजता और ताजगी है।"[8]

कहानी का शीर्षक "परिंदे" स्वयं एक महत्वपूर्ण प्रतीक है। यह स्वतंत्रता, अस्थिरता और जीवन की क्षणभंगुरता का प्रतीक है। निर्मल वर्मा की कहानी "परिंदे" में प्रतीकों का अत्यंत प्रभावशाली प्रयोग हुआ है। "परिंदे" स्वयं मनुष्य की स्वतंत्रता, उड़ान और मुक्ति की आकांक्षा के प्रतीक हैं, जो खुला आकाश चाहते हुए भी बंधनों में फँसे रहते हैं। कहानी का सूना कमरा और शांत वातावरण पात्रों के भीतर के खालीपन और अकेलेपन को दर्शाते हैं। जबकि सर्द मौसम उनके भावनात्मक ठंडेपन और रिश्तों में दूरी का प्रतीक बन जाता है। खिड़की यहाँ

एक महत्वपूर्ण प्रतीक है, जो बंधन और स्वतंत्रता के बीच की सीमा को व्यक्त करती है। पात्र बाहर की दुनिया को देखते हैं लेकिन उसमें शामिल नहीं हो पाते। इसके साथ ही, कहानी में बार–बार आने वाला मौन दबी हुई भावनाएं और अनकहा दर्द जो कहानी में एक खास किस्म की पीड़ा को बनाए रखते हैं। इस प्रकार, इन प्रतीकों के माध्यम से लेखक यह दिखाता है कि आधुनिक मनुष्य अपने अस्तित्व की खोज में भटक रहा है और स्वतंत्रता की इच्छा के बावजूद भीतर से गहरे अकेलेपन और निरर्थकता का अनुभव करता हुआ जी रहा है।

**निष्कर्ष :**

"परिंदे" कहानी हिंदी साहित्य में कहानी क्षेत्र में मील का पत्थर है। यह कहानी आधुनिक मनुष्य की मानसिक स्थिति का सटीक चित्रण करती है। निर्मल वर्मा ने इस कहानी के माध्यम से हिंदी कहानी को एक नई दिशा दी। कई आलोचकों ने "परिंदे" को "अनुभूति की कहानी" कहा है, जिसमें सामाजिक यथार्थ की अपेक्षा आंतरिक अनुभवों का अधिक महत्व है। पात्र संवेदनशील, अंतर्मुखी और आत्मसंघर्ष से ग्रस्त है। स्त्री पात्र भी समान रूप से जटिल हैं। वह अपने भावों को व्यक्त नहीं करती, बल्कि संकेतों में जीती है। मनुष्य बाहर से नहीं, अंदर से ज्यादा टूटता है। दबी भावनाएँ और अधूरे रिश्ते मानसिक पीड़ा का कारण बनते हैं हर व्यक्ति के भीतर एक "परिंदा" है, जो मुक्त होना चाहता है।

**संदर्भ सूची :**


1. हिंदी कहानी का विकास, मधुरेश, सुमित प्रकाशन, अलोपीबाग इलाहाबाद, 2020,पृष्ठ संख्या– 87
2. निर्मल वर्मा : अन्तर्यात्रा : सं. नंदकिशोर आचार्य– वाणी प्रकाशन, 2003, पृ. 32–33
3. निर्मल वर्मा : अन्तर्यात्रा : सं. नंदकिशोर आचार्य– वाणी प्रकाशन, 2003, भूमिका से।
4. विश्वनाथ त्रिपाठी : हिंदी साहित्य का सरल इतिहास–ओरिएंट ब्लैकस्वॉन प्रकाशन, 2007, पृष्ठ 163
5. निर्मल वर्मा : अन्तर्यात्रा : सं. नंदकिशोर आचार्य– वाणी प्रकाशन, 2003, पृ. 57–58
6. नामवर सिंह : कहानी नई कहानी–लोकभारती प्रकाशन, 1982, पृ.–59
7. विश्वनाथ त्रिपाठी : हिंदी साहित्य का सरल इतिहास. पृ.–163
8. नामवर सिंह : कहानी नई कहानी. पृ.–62, 64, 74


ई. मेल maltithakur236@gmail.com मो. 8580969773

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 149-154

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# ज्ञानप्रकाश विवेक के साहित्य में धार्मिक विघटन

**सुमन लता,** शोधार्थी
**डॉ. सुनीता सिंह,** शोध निर्देशिका
ओम स्टर्लिंग ग्लोबल यूनिवर्सिटी, हिसार, हरियाणा।

**धार्मिक विघटन** :

धर्म किसी भी समाज में मूल्यों, विश्वासों एवं प्रथाओं की एक प्रणाली है, जो पवित्र आचरण से संबंधित है। धर्म का आधार उस अलौकिक सत्ता के प्रति विश्वास है। जिसके विषय में व्यक्ति कार्य-करण का संबंध खोज नहीं पाता। हिंदी के प्रमुख साहित्यकार ज्ञान प्रकाश विवेक के साहित्य में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदनाएँ और बदलते मूल्यों के साथ-साथ धार्मिक विघटन का चित्रण भी अत्यंत प्रभावशाली रूप में मिलता है। उनके कथा-साहित्य में धर्म केवल आस्था का विषय नहीं रह जाता, बल्कि वह सामाजिक संरचना, सत्ता, और व्यक्ति के स्वार्थों से जुड़कर अपने मूल स्वरूप से विचलित होता दिखाई देता है।

**धार्मिक विघटन का अर्थ :**

धार्मिक विघटन से आशय है—धर्म के मूल मूल्यों (सत्य, अहिंसा, करुणा, सहिष्णुता) का क्षरण और उसकी जगह आडंबर, पाखंड, कट्टरता तथा स्वार्थ का बढ़ना। विवेक के साहित्य में यह विघटन आधुनिक समाज की एक गंभीर समस्या के रूप में उभरता है।

डॉ. हुकुमचंद राजपाल के अनुसार, "धर्म अभौतिक संस्कृति का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। जो व्यक्ति की क्रियाओ तथा व्यवहार को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। धर्म का तात्पर्य किसी अधिमानवीय, अलौकिक अथवा समाज से उच्चशक्ति पर विश्वास है। जिसका आधार भय, श्रद्धा, भक्ति तथा पवित्रता की धारणा है तथा इसकी अभिव्यक्ति, प्रार्थना पूजा या आराधना द्वारा होती है।"[1] इस प्रकार अलौकिक सत्ता के भय एवं शक्ति का मिश्रित रूप धर्म के जन्म का कारण है।

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार,"धर्म का लक्ष्य है, परमेश्वर से संपर्क स्थापित करना। धार्मिक जीवन, आत्मदर्शन, आत्मिक ज्ञान और अन्त: स्फूर्त ईश्वर-दर्शन का जीवन है। इसमें मनुष्य को अबाध-स्वतंत्रता प्राप्त होती है और वह सामान्य इंद्रिय बोध की अध:दासता से छुटकारा पा जाता है।"[2]

जे०एस० मुकेज़ी के मत में,"आधुनिक युग में धर्म का संचालन ऐसे व्यक्तियों के हाथों में है। जो अपनी निजी स्वार्थपूर्ति के लिए इसका संचालन करते हैं। अज्ञानता तथा अंधविश्वास के कारण आम आदमी धर्म के स्वरूप को नहीं पहचान पाता। वह स्वार्थी लोगों द्वारा बताए गए धर्म को ही धर्म मानता है और उसी आधार पर अपना जीवन-यापन करता है। इन्हीं स्वार्थी लोगों के कारण आज धर्म, अंधविश्वास और रूढ़ियों का समूह बन गया है। ऐसे

सिद्धांत एवं प्रथाएं है। जिन पर सावधानीपूर्वक चिंतन करने पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता, उन्हें उचित नहीं बताया जा सकता।"[3]

धर्म समाज को प्रभावित करने की क्षमता रखता है, लेकिन समाज में परिवर्तन के साथ धर्म के स्वरूप में भी परिवर्तन आ जाता है। आज धर्म के प्रति विश्वास और श्रद्धा में कमी आई है। वर्तमान में पुराणों और शास्त्रों के वक्तव्यों में विश्वास करने वालों की संख्या में कमी हुई है। व्यक्ति तर्क और विवेक के आधार पर उपयोगी क्रियाओं को ही स्वीकार करता है।

ज्ञान प्रकाश विवेक ने अपने साहित्य में धर्म के विकृत स्वरूप व कुरीतियों का वर्णन किया है। एक और तो शिक्षा और वैज्ञानिकता के कारण तर्क का विकास हुआ है। दूसरी ओर पुजारियों के नैतिक पतन के कारण धर्म का ह्रास हुआ है। राजनीतिज्ञों ने सत्ता प्राप्ति के लिए धर्म का दुरुपयोग किया है। ईश्वर एवं उसकी बनाई गई सृष्टि के प्रति श्रद्धा का भाव व उस श्रद्धा को अभिव्यक्त करने के लिए व्यक्ति जिन क्रियाओं को करता है, उन्हें धार्मिक विश्वास कहते हैं ।प्रत्येक धर्म में श्रद्धा को अभिव्यक्त करने के लिए कुछ क्रियाएं होती हैं, जैसे हिंदू धर्म में व्रत, यज्ञ, पूजा-पाठव दान आदि। कुछ धार्मिक क्रियाओं को व्यक्ति स्वयं कर लेता है, जबकि कुछ क्रियाओं को करने के लिए उसे पुजारियों की जरूरत होती है, जैसे यज्ञ एवं नामकरण संस्कार आदि ।

**ज्ञानप्रकाश विवेक के साहित्य में धार्मिक विघटन के आयाम :**

1. **धर्म का आडंबर और पाखंड :**

उनकी कहानियों में कई पात्र ऐसे मिलते हैं जो धर्म का बाहरी प्रदर्शन तो करते हैं, लेकिन उनके आचरण में नैतिकता का अभाव होता है।

मंदिर, पूजा और धार्मिक अनुष्ठान केवल दिखावे तक सीमित हो जाते हैं।

धर्म के नाम पर लोगों को भ्रमित किया जाता है।

2. **धर्म का स्वार्थ और राजनीति से जुड़ाव :**

विवेक यह दिखाते हैं कि कैसे धर्म का उपयोग व्यक्तिगत लाभ और सत्ता प्राप्ति के लिए किया जाता है।

धार्मिक भावनाओं को भड़काकर समाज में विभाजन पैदा किया जाता है।

धर्म एक साधन बन जाता है, उद्देश्य नहीं।

3. **साम्प्रदायिकता और विभाजन :**

उनकी रचनाओं में साम्प्रदायिक तनाव और आपसी अविश्वास का चित्रण मिलता है।

विभिन्न धर्मों के बीच दूरी और संघर्ष बढ़ता है।

मानवीय रिश्ते धर्म के कारण टूटने लगते हैं।

4. **मानवीय मूल्यों का ह्रास :**

धार्मिक विघटन का सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि व्यक्ति मानवीय मूल्यों से दूर हो जाता है।

करुणा, प्रेम और सहिष्णुता की जगह घृणा और हिंसा ले लेती है।

धर्म का वास्तविक उद्देश्य—मानवता—पीछे छूट जाता है।

5. **आधुनिकता और परंपरा का टकराव :**

विवेक के साहित्य में आधुनिक जीवन शैली और पारंपरिक धार्मिक मान्यताओं के बीच संघर्ष भी दिखाई देता है।

युवा पीढ़ी अंधविश्वासों से दूर जाना चाहती है।

पुरानी पीढ़ी परंपराओं को बनाए रखने पर जोर देती है।

'मेहमान' कहानी के द्वारा ज्ञानप्रकाश विवेक ने धार्मिक अविश्वास को व्यक्त किया है, "भगवान को बुरा लगे तो लगे। शराब तो अब नए कल्चर में स्टेटस की तरह शुमार होने लगी।टी०वी० के सीरियलों में खूबसूरत फ्लैट और फ्लैट बार, हर दूसरे सीन में स्त्री-पुरुष जाम खनकाते हैं। और हर पांचवें सीन में एक दूसरे के मुंह पर फैंकते नज़र आते हैं। गुस्सा दिखाने और गुस्सा उतारने का नया स्टाइल है। नशीला, भौतिक और ऑडियो विजुअल।ओ माई गॉड भगवान ने इंडियन सैल्यूट की बोतल उठाई है, भगवान के हाथ में शराब की बोतल।"[4]

'नई दिल्ली एक्सप्रेस उपन्यास' में युवा पीढ़ी के लिए उपवास और सहवास में कोई अंतर नहीं है। धार्मिक विश्वास मात्र श्रद्धा की अभिव्यक्ति के माध्यम नहीं हैं , अपितु ये सामाजिक नियंत्रण का भी कार्य करते हैं। लेकिन धर्म के स्वरूप के साथ-साथ व्यक्ति की आस्था और विश्वास का भी पतन हो चुका है,

"टेल मी वन क्वेश्चन?.... फिर एक लड़की ने सवाल किया है?

"उपवास और सहवास में क्या फर्क है?"

"कोई फर्क नहीं?"

"कैसे" चकित होकर लड़की पूछ रही है।

"यार वेरी सिंपल! दोनों में भक्ति। दोनों में प्रेयर। दोनों में आनंद.... परम आनंद!"

आज धार्मिक विश्वासों को श्रद्धा अभिव्यक्ति का माध्यम कम समझ जाता है, और प्रसिद्धि प्राप्त करने के साधन के रूप में ज्यादा समझ जाता है। 'गली नंबर तेरह' का शक्स दान और धार्मिक क्रियाओं को करके प्रसिद्धि प्राप्त करना चाहता है। जिसका उपयोग वह आगे आने वाले चुनाव में कर सके, "इसका मतलब यह हुआ है कि यह शख्स दान देने से पूर्व माहौल निर्मित कर रहा था, ताकि दान का नहीं उसका महत्व बढ़े। महत्व सचमुच बढ़ गया था। वह बिना कुछ कहे। पांंच सौ का नोट निकालकर दे देता तो वह बात न होती। तमाम लोग उसके प्रभाव में आ चुके थे। वह शख्स उन लोगों के बीच दानवीर के रूप में बैठा था-दपदपाताचेहरा लिये।"[5]

'शहर गवाह है' कहानी में लेखक ने दंगों के आयोजन और नेताओं की कुत्सित नीतियों पर व्यंग्य किया हैं, "लेकिन अब दंगे के लिए किसी माकुल बहाने की जरूरत नहीं होती.... दंगे अब दंगे नहीं रहे। आयोजन हो गए हैं, जिनका कार्यक्रम पूर्व निर्धारित होता है। दंगे होते हैं और सियासत के काले चेहरे वक्तव्य झाड़कर अपनी कंदराओं में पनाह ले लेते हैं।"[6]राजनेता दंगे करवाकर अपनी सियासत की रोटियां सेकते रहते हैं। समुदाय की धार्मिक भावनाओं को उकसाकर धार्मिक शोषण करते रहते हैं। इस प्रकार लेखक ने धार्मिक दंगों के लिए राजनेताओं को उत्तरदायी माना है।

धार्मिक दंगों के दौरान हर जगह अराजकता की स्थिति होती है प्रत्येक व्यक्ति को शक की निकाह से देखा जाता है। धार्मिकता के नाम पर मानवता को मौत के घाट उतार दिया जाता है," लेकिन शहर का मसीहा अनायास कहीं कूच कर गया था। शहर एक जंगल में तब्दील हो गया था जहां भेड़िये अपनी व्यवस्था चलाने लगे थे, जहां आतंक अपना फरमान जारी करने लगा था।"[7]

'गली नंबर तेरह' उपन्यास में लेखक ने अनेक विघटनकारी तत्वों का उल्लेख किया है,"फैक्टरी में एक मुसलमान मजदूर का हिंदू सुपरवाइजर से झगड़ा हो गया था। झगड़ा दो हिंदू या दो मुसलमान के बीच होता तो खबर न बनती। अब यह खबर थी। खबर जिसके अक्षरों पर पैनै नाखून उगे थे, जो माहौल को जख्मी बनाने में अपनी अहम भूमिका निभाने लगे थे। गलत उंगलियों पर गलत समीकरण। परिवेश किसी कांच का सा टूटा, बिखरा,चुबता हुआ। कुछ लोग अपने-अपने खोल के बाहर निकले, कुछ भीतर दुबके।"[8] फिर रैलियां निकली अपने-अपने पक्ष की। अपने मजहब की। ऐसे वक्त में नारे संगीन की तरह खतरनाक क्यों हो जाते हैं? अल्पसंख्यक लोग अपनी अस्मिता के प्रति चिंतित थे। परंतु बहुसंख्यक इस बात को लेकर चिंतित थे कि उन्हें कम करके आंका जा रहा है।

धर्म अब आत्मिक विकास का साधन न रहकर जीविका तथा धन उपार्जन करने का साधन बन गया है। धार्मिक क्रियाओं में श्रद्धा-तत्व का ह्रास होने से धर्म केवल प्रदर्शन बनकर रह गया है। धर्म और संस्कृति एक दूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं। जब एक में परिवर्तन हो जाता है, तो उसका प्रभाव दूसरे पर जरूर पड़ता है। आज पूरे विश्व ने एक बाजार का रूप ले लिया है। चारों तरफ उपभोक्तावाद और बाजारवाद का बोलबाला है। आध्यात्मिक मूल्यों पर भौतिक मूल्य भारी पड़ते जा रहे हैं। आज तीर्थ यात्राओं एवं कथा-वाचन के द्वारा विजनेस को विज्ञापित किया जाता हैं। धार्मिक पंडे भी लोगों की भावनाओं का लाभ उठाकर स्वार्थ सिद्धि में लगे हुए हैं।

'बंधुआ' कहानी में लेखक ने लोगों के धार्मिक डर को साधन बनाकर आजीविका कमाने का उल्लेख किया है, "जब्बरा के सामने पीतल का कमण्डल, लोहे का सिंदूर, तेल सना शनि, धूप का मोटा सा टुकड़ा रख कर बोला, "[9]यो अपणे शनि देवता हैं, अपने नहीं लोगों का। अपनी रोजी-रोटी के जुगाड़।.... कान खोल के सुण। आज तन्ने दुनियादारी का सबक सिखा दूं। लोग मन से कमजोर और डरपोक होया करे सैं। अकलमंद मांणस ने सनीचर और मंगल दो दिन बना दिये। यो बी सुन! अपने मुलक में शनि और मंगल हर आदमी पर भारी पड़ रहे सैं। भारी रहने भी चाहिए। नई तो मेरे जीसे शनि-मंगल की कमाई खाने वाले भूखे मर जाएंगे।"[10]

'दिल्ली दरवाजा' उपन्यास में लेखक ने लोगों की इस प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है,"यह शहर बाहर से ठीक-ठाक रखता है, भीतर से ताड़ता है। यह शहर लेमिनेशन का शहर है जनाब! हर चेहरे पर लेमिनेशन! सुख का दुख.... का.... चिताओं का.... आध्यात्मिकताओं का लेमिनेशन! लोग कुछ ज्यादा ही आध्यात्मिक हुए हैं इस दौर में। अचानक, इस कदर धार्मिक हो उठना, खतरे पैदा करता है। एक ज़माना पहले, रिटायर लोगों का शगल होती थी आध्यात्मिकता! अब नौजवान भी इस क्षेत्र में कूद पड़े हैं। जैसे आध्यात्मिकता भी 'करियर' हो। वैसे पाठकगण, एक रहस्य यह भी है कि आप शब्दों का प्रपंच रख सकते हैं तो इसे करियर के तौर पर भी आज़माया जा सकता है।"[11]

'तहरीर' कहानी में भ्रष्ट आचरण से खोखली हो चुकी आत्मा को धार्मिक भीरुता के कारण धार्मिक क्रियाओं के बाहरी आडंबर से स्वयं को दिलासा देना चाहता है, "बाद में मेरा मन बदल गया। मैं अथॉरिटी में नौकरी करता हूं। शुरू-शुरू में रिश्वत नहीं लेता था। रिश्वत मिलनी शुरू हुई तो मैं अपने मोहल्ले के भगवती जागरण में मत्था टेकने लगा। कई सारी धार्मिक कैसेटें भी हैं मेरे पास। में खुद कावर लेने नहीं गया। लेकिन दो बार मैं कावड़ मंगवाई है। कावड़ भी ऐसी वैसी नहीं। एक्सप्रेस कावड़

ट्रेन में भी कीर्तन वाले डिब्बे में बैठा रहता हूं।"[12] भ्रष्ट कृत्य में लिप्त व्यक्ति धार्मिक क्रियाओं को पूर्ण करना ही धर्म समझ बैठा है। धार्मिक आचरण के प्रभाव का ह्रास हुआ है। इस कारण धर्म, धार्मिक क्रियाओं के आडंबर मेंउलझ कर अपना वास्तविक रूप खो चुका है।

'नई दिल्ली एक्सप्रेस' उपन्यास में लेखक ने में भक्ति के नाम पर शारीरिक सुख में लीन भक्तों के द्वारा भक्ति के विकृत स्वरूप का वर्णन किया है, "भक्तनी की हार्दिक इच्छा थी कि युवा भक्त उसे देखे लेकिन कुछ कम। धार्मिक डिब्बे में इस तरह का प्रेम वर्जित था। बात देखने भर की होती तो चल भी जाती। लेकिन युवा भक्त,

हमेशा युवा भक्तिनी के साथ बैठता। जगह बहुत कम होती। कम जगह में दो शरीर। स्त्री पुरुष। आपस में सटे हुए। कीर्तन वाले डिब्बे की धार्मिक यात्रा रोमांचक हो जाती। तब उल्लास गर्मी, उष्मा का संचार और ज्यादा होने लगता जब युवा भक्त, भजन की लय पर तालियां बजाता और उसकी कोहनी, युवा भक्तिनी के वक्ष को स्पर्श कर जाती। यह स्पर्श सुखकारक होता। दोनों, भक्त और भक्तिनी, आंखें मूंदे रहते। लेकिन उनके जिस्मो का रोम-रोम जाग रहा होता।"[13]

'तलघर' उपन्यास में भजन कीर्तन के नाम पर व्यर्थ शोर शराबे का वर्णन किया है भजन कीर्तन करते हुए भी तथाकथित भक्तजन एक दूसरे से लड़ाई-झगड़ा करते रहते हैं, "ताश के कीर्तन के अतिरिक्त एक डिब्बा भजन वालों का भी होता है। उस डिब्बे में भजनों का इतना शोर होता है कि ऐसा लगता है जैसे भगवान के भक्त, भगवान से पुरानी खुन्नस उतार रहे हैं। उस डिब्बे में अगर भगवान गलती से आ जाता तो यकीनन चलती गाड़ी से छलांग लगा देता।"[14]भक्ति के नाम पर प्रदर्शन करते भक्तजन धर्म के वास्तविक स्वरूप से बहुत दूर होने का वर्णन लेखक ने किया है

'शिकारगाह' कहानी संग्रह में लेखक ने जीवन की समस्याओं से पीड़ित व्यक्ति को धर्म का आवरण ओढ़ते हुए दर्शाया है जिसका भक्ति-भावना से कोई संबंध नहीं होता है, "तीनों भाइयों ने तीन कथावाचकों को अपना गुरु बना लिया था। तीनों भाई दूरदर्शन के अहसानमंद थे, क्योंकि कथावाचकों की 'नित्य उपस्थित' दूरदर्शन के मार्फ़त हुई थी। कथावाचक आवाज़ और शब्दों की ताकत को जानते थे। वे जानते थे कि संसार दुखों का ही नहीं मुश्किलों का भी घर है। हर आदमी मुश्किल में फंसा हुआ है। वे जानते थे कि हिंदुस्तान का हर आदमी धर्म भीरु ही नहीं, कायर भी है। वह अपनी जिंदगी आसान बनाना चाहता है। गया हुआ आदमी किसी रास्ते की तलाश में था और कथावाचक तो शब्दों की बैटरी और आवाज़ की रोशनी लेकर बैठे थे।"[15]

**निष्कर्ष** :-

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि ज्ञान प्रकाश विवेक के साहित्य में धार्मिक विघटन का चित्रण समाज की बदलती हुई मानसिकता और मूल्यों को उजागर करता है। उनके कथा साहित्य में धर्म के नाम पर फैले आडंबर, पाखंड, अंधविश्वास और स्वार्थपूर्ण प्रवृत्तियों की स्पष्ट आलोचना दिखाई देती है। लेखक यह दर्शाते हैं कि आधुनिक समाज में धर्म का वास्तविक उद्देश्य—मानवता, नैतिकता और सद्भाव—धीरे-धीरे कमजोर होता जा रहा है और उसकी जगह बाहरी दिखावा और व्यक्तिगत लाभ ने ले ली है। लेखक का साहित्य केवल धार्मिक विघटन को उजागर ही नहीं करता, बल्कि पाठकों को यह संदेश भी देता है कि धर्म का वास्तविक उद्देश्य मानव कल्याण और सामाजिक समरसता की स्थापना होना चाहिए। इसलिए उनके साहित्य में धार्मिक विघटन का चित्रण समाज को जागरूक करने और सही दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करता है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची** :-


1. राजपाल (डॉ.)हुकुमचंद आधुनिक काव्य में जीवन मूल्य, जालंधर, भारतीय संस्कृति भवन, 1970, पृष्ठ 20

2. राधाकृष्णन( डॉ.) सर्वपल्ली, हमारी संस्कृति दिल्ली, सरस्वती विहार, 1977, पृष्ठ 17

3 मुकैज़ी, जे० एस० समाज दर्शन की रूपरेखा, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 1989, पृष्ठ 181

4. विवेक, ज्ञानप्रकाश, मेहमान, (कहानी संग्रह मुसाफिरखाना) नई दिल्ली: पेंगुइन रैंडम हाउस, 2007, पृष्ठ 65

5. विवेक, ज्ञानप्रकाश, नई दिल्ली एक्सप्रेस, नई दिल्ली: विजया बुक्स, 2019, पृष्ठ 55

6. विवेक, ज्ञानप्रकाश, गली नंबर तेरह,नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 1998, पृष्ठ 37

7. विवेक, ज्ञानप्रकाश, शहर गवाह है, (कहानी संग्रह:  इक्कीस कहानियां)नई दिल्ली, सुनील साहित्य सदन, 2001, पृष्ठ 68

8. विवेक ,ज्ञानप्रकाश, गली नंबर तेरह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 1998, पृष्ठ 34

9. विवेक, ज्ञानप्रकाश, बंधुआ (कहानी संग्रह: शिकारगाह ) नई दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, 2003, पृष्ठ 139

10. विवेक, ज्ञानप्रकाश, दिल्ली दरवाजा, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2006, पृष्ठ 18, 19

11. विवेक, ज्ञानप्रकाश तहरीर, (कहानी संग्रह: बदली हुई दुनिया) नोएडा, हार्पर कॉलिंस पब्लिशर्स इंडिया, 2009, पृष्ठ 160

12. विवेक, ज्ञान प्रकाश, नई दिल्ली एक्सप्रेस, नई दिल्ली, विजया बुक्स, 2019, पृष्ठ 112

13. विवेक, ज्ञानप्रकाश, तलघर, नई दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, 2012, पृष्ठ18

14. विवेक, ज्ञानप्रकाश, बर्फ़ (कहानी संग्रह: शिकारगाह) नई दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, 2005, पृष्ठ 24

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 155-162

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# वाराणसी में घाटों पर काम करने वाले बच्चों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन

**प्रोफेसर (डॉ.) चन्द्रशेखर सिंह**
समाज कार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

**प्रस्तावना :**

भारत एक विकासशील देश है जहाँ आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता के साथ–साथ कई जटिल समस्याएँ भी विद्यमान हैं। इनमें से एक प्रमुख समस्या है बाल श्रम (Child Labour)। बाल श्रम न केवल बच्चों के बचपन को छीनता है, बल्कि उनके शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास को भी बाधित करता है। वाराणसी, जो कि भारत का एक प्राचीन और धार्मिक शहर है, अपने घाटों के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध है। यहाँ प्रतिदिन हजारों की संख्या में पर्यटक और श्रद्धालु आते हैं। इस पर्यटन और धार्मिक गतिविधियों के कारण घाटों पर विभिन्न प्रकार के कार्यों की मांग रहती है, जैसे– नाव चलाना, फूल–माला बेचना, सामान उठाना, जूते संभालना, चाय–पानी बेचना आदि। इन कार्यों में बड़ी संख्या में बच्चे (Child Workers) भी संलग्न पाए जाते हैं। ये बच्चे अक्सर गरीबी, अशिक्षा, पारिवारिक दबाव और सामाजिक असमानता के कारण इस कार्य में शामिल होते हैं। उनका जीवन संघर्षपूर्ण होता है और वे शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षित वातावरण से वंचित रह जाते हैं।

भारत एक बहु–आयामी समाज है जहाँ एक ओर तीव्र आर्थिक विकास और आधुनिकीकरण हो रहा है, वहीं दूसरी ओर कई गम्भीर सामाजिक समस्याएँ अभी भी विद्यमान हैं। इन समस्याओं में बाल श्रम (Child Labour) एक प्रमुख और चिंताजनक विषय है, जो न केवल बच्चों के अधिकारों का उल्लंघन करता है, बल्कि समाज के समग्र विकास में भी बाधा उत्पन्न करता है। बाल श्रम का अर्थ है 'ऐसा कार्य जिसमें बच्चे अपनी आयु और शारीरिक–मानसिक क्षमता से अधिक श्रम करते हैं और जिसके कारण उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य और विकास प्रभावित होता है। भारत में बाल श्रम का संबंध मुख्यतः गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, सामाजिक असमानता और संसाधनों के असमान वितरण से जुड़ा हुआ है। वाराणसी, जिसे काशी या बनारस के नाम से भी जाना जाता है, विश्व के सबसे प्राचीन जीवित शहरों में से एक है। यह शहर धार्मिक, सांस्कृतिक और पर्यटन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। यहाँ के प्रसिद्ध घाट 'जैसे दशाश्वमेध घाट, अस्सी घाट और मणिकर्णिका घाट' प्रतिदिन हजारों श्रद्धालुओं, पर्यटकों और स्थानीय लोगों की गतिविधियों का केंद्र होते हैं। इन घाटों पर होने वाली धार्मिक क्रियाएँ, गंगा आरती, अंतिम संस्कार और पर्यटन गतिविधियाँ स्थानीय अर्थव्यवस्था को जीवंत बनाए रखती हैं। इन्हीं गतिविधियों के बीच एक महत्वपूर्ण लेकिन अक्सर अनदेखा पहलू है 'घाटों पर काम करने वाले बच्चे। ये बच्चे विभिन्न प्रकार के छोटे–मोटे कार्यों में संलग्न रहते हैं, जैसे नाविकों की सहायता करना, फूल–माला बेचना,

जूते–चप्पल संभालना, चाय–पानी बेचना, पर्यटकों का सामान उठाना आदि। इन कार्यों के माध्यम से वे अपनी और अपने परिवार की आजीविका में योगदान देते हैं। हालाँकि, इन बच्चों की कार्य–स्थिति अत्यंत असुरक्षित और अनियमित होती है। वे लंबे समय तक काम करते हैं, कम पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं और कई बार शारीरिक तथा मानसिक शोषण का सामना करते हैं। इनके पास न तो स्थायी आय का स्रोत होता है और न ही किसी प्रकार की सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध होती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी इन बच्चों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। अधिकांश बच्चे या तो विद्यालय नहीं जाते या फिर बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। शिक्षा से वंचित रहने के कारण उनका भविष्य सीमित हो जाता है और वे गरीबी के दुष्चक्र में फँसे रहते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी ये बच्चे अनेक समस्याओं से जूझते हैं। गंगा घाटों का प्रदूषित वातावरण, अस्वच्छ रहन–सहन, कुपोषण और चिकित्सा सुविधाओं की कमी उनके शारीरिक विकास को प्रभावित करती है। इसके अतिरिक्त, लगातार काम करने और असुरक्षित वातावरण में रहने के कारण उनके मानसिक स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सामाजिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो घाटों पर काम करने वाले बच्चे समाज के हाशिए पर जीवन यापन करते हैं। उन्हें सामाजिक सम्मान, सुरक्षा और अवसरों की कमी का सामना करना पड़ता है। कई बार ये बच्चे अपराध, नशे और अन्य असामाजिक गतिविधियों की ओर भी आकर्षित हो जाते हैं, जो उनके जीवन को और अधिक जटिल बना देता है। भारत सरकार ने बाल श्रम को रोकने और बच्चों के अधिकारों की रक्षा के लिए कई कानून और योजनाएँ लागू की हैं, जैसेकृबाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम और शिक्षा का अधिकार अधिनियम। इसके बावजूद, इन कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन अभी भी एक चुनौती बना हुआ है, विशेषकर अनौपचारिक क्षेत्रों जैसे घाटों पर। इस संदर्भ में यह अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह न केवल घाटों पर काम करने वाले बच्चों की वास्तविक सामाजिक स्थिति को उजागर करता है, बल्कि उनके जीवन की समस्याओं, चुनौतियों और संभावित समाधान की दिशा में भी मार्गदर्शन प्रदान करता है। यह शोध वाराणसी के घाटों पर कार्यरत बच्चों के जीवन के विभिन्न पहलुओं 'जैसे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य संबंधी स्थिति' का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। साथ ही, यह अध्ययन नीति–निर्माताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं और शोधकर्ताओं के लिए उपयोगी सुझाव भी प्रदान करता है, जिससे इन बच्चों के जीवन स्तर में सुधार लाया जा सके। अंततः, यह कहा जा सकता है कि किसी भी समाज का विकास तभी संभव है जब उसके सभी वर्गों, विशेषकर बच्चों, को समान अवसर और सुरक्षित वातावरण प्राप्त हो। घाटों पर काम करने वाले बच्चों की स्थिति में सुधार लाना न केवल एक सामाजिक आवश्यकता है, बल्कि यह हमारे नैतिक दायित्व का भी हिस्सा है।

**अध्ययन के उद्देश्य :**

1. घाटों पर कार्यरत बच्चों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. उनके कार्य की प्रकृति और कार्य परिस्थितियों का विश्लेषण करना।
3. शिक्षा, स्वास्थ्य और पारिवारिक पृष्ठभूमि की स्थिति को समझना।
4. बाल श्रम के कारणों की पहचान करना।
5. सुधार के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

**शोध समस्या का विवरण :**

वाराणसी के घाटों पर बड़ी संख्या में बच्चे विभिन्न प्रकार के कार्यों में लगे हुए हैं। यह स्थिति न केवल

कानून के विरुद्ध है, बल्कि यह बच्चों के अधिकारों का भी उल्लंघन है। मुख्य समस्या यह है कि : ये बच्चे शिक्षा से वंचित हैं, उनका शोषण होता है, उनके स्वास्थ्य और सुरक्षा की अनदेखी होती है, उनका भविष्य अनिश्चित रहता है। इसलिए यह अध्ययन यह जानने का प्रयास करता है कि इन बच्चों की वास्तविक सामाजिक स्थिति क्या है और उनके जीवन में सुधार कैसे लाया जा सकता है।

**साहित्य समीक्षा :**

विभिन्न शोधों में पाया गया है कि बाल श्रम का मुख्य कारण गरीबी और अशिक्षा है। कई अध्ययनों में यह बताया गया है कि पर्यटन स्थलों पर बाल श्रम अधिक पाया जाता है। सामाजिक कार्यकर्ताओं के अनुसार, घाटों पर काम करने वाले बच्चे अक्सर निम्न आय वर्ग से आते हैं। कुछ शोधों में यह भी सामने आया है कि ये बच्चे अपराध और नशे की ओर भी आकर्षित हो जाते हैं। हालांकि वाराणसी के घाटों पर काम करने वाले बच्चों पर विशेष रूप से सीमित अध्ययन उपलब्ध हैं, जिससे यह शोध और भी महत्वपूर्ण हो जाता है।

बाल श्रम (Child Labour) पर विभिन्न विद्वानों, शोधकर्ताओं और संस्थानों द्वारा व्यापक अध्ययन किए गए हैं। यह समस्या केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक आयामों से भी जुड़ी हुई है। प्रस्तुत साहित्य समीक्षा में बाल श्रम के कारण, स्वरूप, प्रभाव तथा विशेष रूप से शहरी और पर्यटन क्षेत्रों में कार्यरत बच्चों की स्थिति का विश्लेषण किया गया है।

**बाल श्रम की अवधारणा और परिभाषा :–**

बाल श्रम को विभिन्न विद्वानों ने अलग–अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है। प्रारंभिक अध्ययनों में बाल श्रम को किसी भी प्रकार की आर्थिक गतिविधि में बच्चों की भागीदारी के रूप में देखा गया। बाद में यह स्पष्ट किया गया कि केवल वही कार्य बाल श्रम माना जाएगा जो बच्चों के शारीरिक, मानसिक और शैक्षिक विकास को प्रभावित करता है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के अनुसार, बाल श्रम वह कार्य है जो बच्चों को उनके बचपन, शिक्षा और गरिमापूर्ण जीवन से वंचित करता है। इस प्रकार, घाटों पर कार्यरत बच्चों की स्थिति को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम "बाल कार्य" और "बाल श्रम" के बीच अंतर को स्पष्ट रूप से समझें।

**भारत में बाल श्रम की स्थिति :**

भारत में बाल श्रम एक व्यापक और गंभीर समस्या है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, देश में लाखों बच्चे 5–14 वर्ष की आयु में कार्यरत हैं। एक अध्ययन में यह पाया गया कि भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार लाखों बच्चे श्रम में संलग्न हैं और इनकी वास्तविक संख्या इससे भी अधिक हो सकती है। अन्य शोध बताते हैं कि भारत में लगभग 85% बाल श्रमिक असंगठित क्षेत्र (Unorganized Sector) में कार्य करते हैं, जहाँ उनका कोई रिकॉर्ड नहीं होता और वे सामाजिक सुरक्षा से वंचित रहते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि घाटों पर काम करने वाले बच्चे भी इसी असंगठित क्षेत्र का हिस्सा हैं और उनकी स्थिति अधिक असुरक्षित होती है।

**बाल श्रम के सामाजिक–आर्थिक निर्धारक :**

बाल श्रम के कारणों पर कई शोध किए गए हैं। एक महत्वपूर्ण अध्ययन में यह पाया गया कि गरीबी और बाल श्रम के बीच सीधा संबंध होता है।

**प्रमुख निर्धारक :**

1. **गरीबी :** परिवार की आय कम होने के कारण बच्चे काम करने के लिए मजबूर होते हैं।
2. **अशिक्षा :** माता–पिता की शिक्षा का स्तर कम होने से बच्चों की शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जाता।
3. **बेरोजगारी :** वयस्कों के रोजगार की कमी बच्चों को श्रम की ओर धकेलती है।
4. **परिवार का आकार :** बड़े परिवारों में बच्चों पर आर्थिक जिम्मेदारी बढ़ जाती है।

उत्तर प्रदेश पर किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि अधिकांश बाल श्रमिक गरीब परिवारों से आते हैं और उन्हें कम उम्र में ही काम करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। इसी प्रकार, कश्मीर के एक अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला कि निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति बाल श्रम का प्रमुख कारण है और कई बार माता–पिता बच्चों को स्कूल भेजने के बजाय काम पर लगाना अधिक लाभदायक समझते हैं।

**शहरी और पर्यटन क्षेत्रों में बाल श्रम :**

शहरी क्षेत्रों में बाल श्रम की प्रकृति ग्रामीण क्षेत्रों से भिन्न होती है। शहरों में बच्चे अधिकतर अनौपचारिक सेवाओं में लगे होते हैं जैसे 'दुकानों, होटलों, परिवहन और पर्यटन से जुड़े कार्य।' वाराणसी जैसे धार्मिक और पर्यटन स्थलों पर बाल श्रम की उपस्थिति विशेष रूप से देखी जाती है। घाटों पर बच्चों का कार्य करना पर्यटन गतिविधियों से जुड़ा हुआ है, जैसे :

- नाव चलाने में सहायता।
- प्रसाद और फूल बेचना।
- पर्यटकों की सेवा करना।

एक रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि वाराणसी के घाटों पर काम करने वाले बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए विशेष कार्यक्रम आयोजित किए गए, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह समस्या स्थानीय स्तर पर भी गंभीर रूप से मौजूद है।

**सड़क और घाटों पर रहने वाले बच्चों की स्थिति :**

वाराणसी में सड़क और घाटों पर रहने वाले बच्चों पर किए गए अध्ययन में यह पाया गया कि ये बच्चे अत्यंत असुरक्षित जीवन जीते हैं और शोषण, हिंसा तथा उपेक्षा के शिकार होते हैं। इन बच्चों की विशेषताएँ :

- स्थायी निवास का अभाव।
- परिवार से दूरी या टूटे हुए पारिवारिक संबंध।
- शिक्षा से वंचित।
- अस्वस्थ जीवन परिस्थितियाँ।

**बाल श्रम के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव :**

बाल श्रम का प्रभाव केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक और मानसिक भी होता है।

एक अध्ययन में पाया गया कि बाल श्रमिकों में :

- सामाजिक वंचना (Social Deprivation)
- मानसिक तनाव।
- भावनात्मक अभिव्यक्ति में कमी।

- शोषण और दुर्व्यवहार।

जैसी समस्याएँ सामान्य रूप से पाई जाती हैं।

**शिक्षा और बाल श्रम का संबंध :**

बाल श्रम और शिक्षा के बीच एक विपरीत संबंध पाया गया है।

- जो बच्चे काम करते हैं, वे अक्सर स्कूल नहीं जाते।
- जो बच्चे स्कूल जाते हैं, उनके काम करने की संभावना कम होती है।

एक अध्ययन में यह पाया गया कि प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने वाले बच्चों के श्रम में शामिल होने की संभावना कम होती है। इस प्रकार, शिक्षा की कमी बाल श्रम को बढ़ावा देती है और बाल श्रम शिक्षा से वंचित करता है– यह एक दुष्चक्र (Vicious Cycle) बन जाता है।

**असंगठित क्षेत्र में बाल श्रम :**

भारत में अधिकांश बाल श्रमिक असंगठित क्षेत्र में कार्य करते हैं।

**इनकी विशेषताएँ :**

- कोई नियमन (Regulation) नहीं।
- न्यूनतम वेतन का अभाव।
- शोषण की संभावना अधिक।
- सामाजिक सुरक्षा का अभाव।

घाटों पर कार्यरत बच्चे भी इसी श्रेणी में आते हैं, जहाँ उनके कार्य की कोई निगरानी नहीं होती।

**नीतियाँ और हस्तक्षेप :**

भारत सरकार ने बाल श्रम को समाप्त करने के लिए कई कानून बनाए हैं, जैसे :

- बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम।

फिर भी, शोधों में यह पाया गया है कि इन नीतियों का प्रभावी कार्यान्वयन नहीं हो पा रहा है, विशेषकर अनौपचारिक क्षेत्रों में। इसके अतिरिक्त, विभिन्न NGOs और सामाजिक संगठनों द्वारा बच्चों के पुनर्वास, शिक्षा और जागरूकता के लिए कार्य किया जा रहा है।

**शोध अंतर :**

उपलब्ध साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि :

- भारत में बाल श्रम पर कई अध्ययन हुए हैं।
- उत्तर प्रदेश में भी कुछ शोध उपलब्ध हैं।
- सड़क बच्चों (Street Children) पर भी अध्ययन किए गए हैं।

**उपरोक्त साहित्य समीक्षा से निम्न प्रमुख निष्कर्ष निकलते हैं :**

1. बाल श्रम भारत में एक गंभीर सामाजिक समस्या है।
2. गरीबी, अशिक्षा और बेरोजगारी इसके मुख्य कारण हैं।
3. शहरी और पर्यटन क्षेत्रों में बाल श्रम का स्वरूप अलग और अधिक जटिल है।

4. बाल श्रम बच्चों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास को प्रभावित करता है।

5. घाटों पर काम करने वाले बच्चों की स्थिति विशेष रूप से अध्ययन की मांग करती है।

**शोध विधि :**

**(क) शोध का प्रकार**

यह अध्ययन वर्णनात्मक (Descriptive Research) प्रकृति का है।

**(ख) डेटा संग्रह**

प्राथमिक डेटा : साक्षात्कार (Interview), प्रश्नावली (Questionnaire)

द्वितीयक डेटा : पुस्तकों, रिपोर्ट्स और इंटरनेट स्रोतों से।

**(ग) नमूना (Sample)**

50–100 बच्चों का चयन।

स्थान : दशाश्वमेध घाट, अस्सी घाट, मणिकर्णिका घाटघाटों पर कार्यरत बच्चों का परिचय।

घाटों पर काम करने वाले बच्चों की आयु सामान्यतः 8 से 16 वर्ष के बीच होती है।

**उनके प्रमुख कार्य :**

- ☐ नाव चलाना या नाव में सहायता करना।
- ☐ फूल–माला और प्रसाद बेचना।
- ☐ पर्यटकों के जूते–चप्पल देखना।
- ☐ चाय और पानी बेचना।
- ☐ सामान उठाना।

इन बच्चों का कार्य अनियमित होता है और उनकी आय भी निश्चित नहीं होती।

**सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति :**

(1) **पारिवारिक पृष्ठभूमि** – अधिकांश बच्चे गरीब परिवारों से आते हैं, उनके माता–पिता दिहाड़ी मजदूर या छोटे काम करते हैं, परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक होती है।

(2) **आय स्तर** – दैनिक आय : रू. 50 – रू. 200

(3) **आवास** – झुग्गी–झोपड़ी या कच्चे मकानों में निवास, स्वच्छता और मूलभूत सुविधाओं का अभाव।

**शिक्षा की स्थिति :**

घाटों पर काम करने वाले अधिकांश बच्चे : स्कूल नहीं जाते या पढ़ाई बीच में छोड़ चुके हैं।

**कारण** – गरीबी, काम करने की मजबूरी, शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी। इसका परिणाम यह होता है कि उनका भविष्य सीमित हो जाता है।

**स्वास्थ्य की स्थिति :**

इन बच्चों की स्वास्थ्य स्थिति अत्यंत खराब होती है – कुपोषण (Malnutrition), गंदगी और प्रदूषण के कारण बीमारियाँ, मानसिक तनाव और थकान उन्हें उचित चिकित्सा सुविधा भी नहीं मिल पाती।

**कार्य परिस्थितियाँ** – लंबे समय तक काम करना (8–10 घंटे), कोई निश्चित वेतन नहीं, शोषण और दुर्व्यवहार की संभावना कई बार पर्यटक या स्थानीय लोग इनके साथ अनुचित व्यवहार भी करते हैं।

**बाल श्रम के कारण :**

1. गरीबी।
2. अशिक्षा।
3. परिवार का दबाव।
4. सामाजिक असमानता।
5. रोजगार के अवसरों की कमी।

**सामाजिक समस्याएँ :**

घाटों पर काम करने वाले बच्चों को कई सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है :

- ☐ अपराध की ओर झुकाव।
- ☐ नशे की लत।
- ☐ सामाजिक उपेक्षा।
- ☐ बाल शोषण।

सरकारी नीतियाँ और कानून।

निष्कर्ष यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि घाटों पर काम करने वाले बच्चों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। वे गरीबी, अशिक्षा और सामाजिक उपेक्षा के शिकार हैं।

यदि समय रहते इनकी स्थिति में सुधार नहीं किया गया, तो यह समस्या और गंभीर हो सकती है।

**सुझाव (Suggestions)**

1. बाल श्रम कानूनों का सख्ती से पालन।
2. मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।
3. परिवारों की आर्थिक सहायता।
4. छळे़ट और सरकार के बीच समन्वय।
5. जागरूकता अभियान।

**संदर्भ :–**


1. International Labour Organization. (2017). Global estimates of child labour: Results and trends, 2012–2016. ILO.
2. Census of India. (2011). Primary census abstract data. Government of India.
3. Basu, K., & Van, P. H. (1998). The economics of child labor. American Economic Review, 88(3), 412–427.
4. Edmonds, E. V. (2007). Child labor. Handbook of Development Economics, 4, 3607–3709.
5. UNICEF. (2020). Child labour and education in India. UNICEF Report.
6. Ministry of Labour and Employment. (2016). Child labour prohibition and regulation amendment act. Government of India.

7. Singh, A., & Sharma, R. (2018). Child labour in India: Causes and consequences. Indian Journal of Social Work, 79(2), 215–230.
8. Kumar, S. (2019). Socio-economic determinants of child labour in Uttar Pradesh. Journal of Social Sciences, 45(1), 67–82.
9. Tripathi, M. (2021). Tourism and child labour: A case study of Varanasi ghats. International Journal of Social Research, 10(3), 120–135.
10. Basu, Kaushik, and Pham Hoang Van. "The Economics of Child Labor." American Economic Review, vol. 88, no. 3, 1998, pp. 412–427.
11. Census of India. Primary Census Abstract Data. Government of India, 2011.
12. Edmonds, Eric V. "Child Labor." Handbook of Development Economics, vol. 4, 2007, pp. 3607–3709.
13. International Labour Organization. Global Estimates of Child Labour: Results and Trends, 2012–2016. ILO, 2017.
14. Kumar, Sandeep. "Socio-economic Determinants of Child Labour in Uttar Pradesh." Journal of Social Sciences, vol. 45, no. 1, 2019, pp. 67–82.
15. Ministry of Labour and Employment. Child Labour (Prohibition and Regulation) Amendment Act. Government of India, 2016.
16. Singh, Anil, and Ritu Sharma. "Child Labour in India: Causes and Consequences." Indian Journal of Social Work, vol. 79, no. 2, 2018, pp. 215–230.
17. Tripathi, Manoj. "Tourism and Child Labour: A Case Study of Varanasi Ghats." International Journal of Social Research, vol. 10, no. 3, 2021, pp. 120–135.
18. UNICEF. Child Labour and Education in India. UNICEF, 2020.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 163-174

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में ध्यानयोग : आचार्य रजनीश (ओशो) के विशेष संदर्भ में

**प्रीति रानी**
शोध छात्र, योग विभाग
महाराजा अग्रसेन हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड।

**शोध सार -**

योग मूलतः आत्म-विज्ञान है, जिसका अंतिम लक्ष्य समाधि की प्राप्ति है, और यह केवल ध्यान के माध्यम से संभव है। ध्यान को न तो मात्र ज्ञान माना जा सकता है, क्योंकि केवल ग्रंथ पढ़ने से ध्यान नहीं आता; न ही यह केवल भक्ति है, क्योंकि प्रार्थना, नृत्य या संगीत में डूबना ध्यान नहीं है; और न ही यह केवल कर्म है, क्योंकि सेवा या कार्य करने मात्र से ध्यान प्राप्त नहीं होता। ध्यान एक विशेष अवस्था है, जो जीवन में साक्षीभाव स्थापित करने से उत्पन्न होती है। जब व्यक्ति अपने कार्यों में साक्षीभाव को विकसित कर लेता है, तब वही कर्म ध्यान का रूप ले लेते हैं। इसी प्रकार प्रेम यदि बिना जागरूकता के होता है, तो वह वासना और मोह बन जाता है, लेकिन जब वह बोधपूर्वक (ध्यान ) होता है, तो वही प्रेम मुक्ति का साधन बनकर भक्ति में परिवर्तित हो जाता है। ज्ञान के संदर्भ में भी यही बात लागू होती है। केवल जानकारी इकट्ठा करना, शास्त्र पढ़ना या तर्क करना वास्तविक ज्ञान नहीं है। ऐसा ज्ञान व्यक्ति को मुक्त नहीं करता, बल्कि बंधन बढ़ा सकता है। जब ज्ञान में ध्यान और साक्षीभाव जुड़ जाते हैं, तभी भीतर चेतना जागृत होती है और सत्य का अनुभव संभव होता है। इस प्रकार देखा जाए तो ध्यान ही वास्तविक योग है। कर्म, भक्ति और ज्ञान तब तक योग नहीं हैं, जब तक उनमें ध्यान का समावेश न हो। व्यक्ति की प्रकृति चाहे जो भी हो, अंततः ध्यान ही एकमात्र मार्ग है जो उसे आत्मबोध और मुक्ति की ओर ले जाता है। ध्यान के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है।

**कूट शब्द -** योग, ध्यानयोग, ओशो, ज्ञान परम्परा, ध्यान विधि

**प्रस्तावना -**

भारतीय ज्ञान और आध्यात्मिक परंपरा में "ध्यान योग" का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन काल से ही ऋषि-मुनियों ने ध्यान को आत्मज्ञान और मुक्ति का प्रमुख साधन माना है। आधुनिक युग में भी कई संतों और विचारकों ने ध्यान के महत्व को पुनर्स्थापित किया है, जिनमें ओशो का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ओशो ने ध्यान को न केवल एक आध्यात्मिक अभ्यास के रूप में प्रस्तुत किया, बल्कि इसे आधुनिक मनुष्य की मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक समस्याओं के समाधान के रूप में भी देखा। इस शोध पत्र में ओशो के अनुसार ध्यान योग की अवधारणा, उसके प्रकार, महत्व, प्रक्रिया तथा आधुनिक संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता का विस्तृत विश्लेषण किया जाएगा।

**ध्यान का अर्थ व परिभाषा -**

जिस योग में ध्यान का प्राबल्य होता है या साधक अपने को ध्यान की शक्ति से जोड़ता है, तब ध्यान का योग होकर ध्यानयोग होता है और ध्यान की अग्नि हमारे कुत्सित विचारों को यानि कर्मों को जलाकर उन्हें जैसे अग्नि स्वर्ण को चमका देती है, ऐसे ही उन विचारों को, कर्मों को, मल को जलाकर कुन्दन बना देती है। योग में जहाँ योग के विविध अंगों की साधना कर सिद्धियाँ प्राप्त की जाती हैं, वहीं 'ध्यान' रूपी सातवें अंग की साधना कर योगी साधक परमोत्कर्ष को प्राप्त करता है। ध्यान का सामान्य अर्थ विचार करना , मनन करना , चिंतन करना आदि से लिया जाता हैं। ध्यान शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'ध्यै' (ध्यैचिन्तायाम्) धातु में 'ल्युट्' प्रत्यय लगाने से हुई है, जिसका अर्थ है चिंतन, मनन, या एकाग्रता। महर्षि पतंजलि के अनुसार, एकाग्र वस्तु पर निरंतर ध्यान का प्रवाह ध्यान है। 'धै' धातु से बने इस शब्द का अर्थ ध्येय विषय पर मन को निरंतर केंद्रित करना है।[1] जो वैदिक ग्रंथों की दृष्टि को भी संदर्भित करता है।[2] बौद्ध परंपरा की पाली भाषा में इसे 'झान' (Jhana) कहा जाता है, जो मानसिक स्पष्टता और शांति की अवस्था है। ध्यान को अंग्रेजी भाषा में मेडिटेशन (Meditation) कहते हैं, यह लैटिन के शब्द meditatum (विचार करना) से आया है, जो 'ध्यान' के एक अर्थ (मनन) के समान है।[3] थॉमस बेरी कहते हैं कि ध्यान "निरंतर एकाग्रता" और "मन को एकाग्रता के चुने हुए बिंदु पर लगाना" है।[4]

सप्तम योगाङ्ग ध्यान, उपासना के साधनों में विशेष महत्वपूर्ण है। ध्यान की अपनी उत्कृष्टता के कारण ही अष्टाङ्ग योग से युक्त राजयोग को 'ध्यानयोग' भी कहा जाता है। ध्यानयोग द्वारा इस चक्रभ्रमण रूप वासना प्रवाह का सर्वथा निवारण करके जब जीव परमात्मा से प्रीति करता है, तब योग को प्राप्त होता है। इस कथन से सिद्ध है कि योगसिद्ध होना या परमात्मा के ज्ञान तथा मोक्ष की प्राप्ति का मुख्य साधन ध्यान ही है। जिस स्थान पर धारणा की जाती है, उसी स्थान पर वृत्ति का निरन्तर बने रहना ध्यान है। व्यास जी कहते हैं कि "ध्यान की स्थिति में चित्तवृत्तियाँ पूर्णतः निरुद्ध रहती हैं। "रागोपहतिर्ध्यानम्"( सांख्य० ३/३०)राग का रुक जाना 'ध्यान' है। अर्थात् ईश्वर का ध्यान करते समय अन्य किसी भी विषय में राग का न होना 'ध्यान' है। "ध्यानं निर्विषयं मनः" (सांख्य० ६/२५) अर्थात विषयों में मन का न जाना 'ध्यान' है।[5] मण्डलब्राह्मणोपनिषद् में भी इसी प्रकार चैतन्य में एकाग्रता को ध्यान कहा गया है।[6] उपनिषद् में ध्यान को साक्षात् ब्रह्म ही माना है। अर्थात् जो यह मानकर उपासना करता है कि 'ध्येय ही ब्रह्म है', उसके ध्यान की गति इतनी विस्तृत हो जाती है जितनी ब्रह्म की।[7] सांख्य में कहा है कि 'मन का विषय विकारों से रहित होना ध्यान है और रोगों का निराकरण ही ध्यान है। इसीलिए ध्यान की इसी महत्ता के कारण इसे 'ध्यानयोग' की भी संज्ञा दी जाती है। ध्यान योग साधना को योगेश्वर कृष्ण ने गीता के षष्ठ अध्याय में वर्णित किया है। ध्यान का मुख्य ध्येय है चित्त या मन को स्थिर करना, संयत करना, बहिर्मुखी वृत्तियों से अन्तर्मुखी करना हैं। गीताकार का कथन है कि ध्यान के साधना पथ पर चलने वाला योगी साधक या योगारूढ़ व्यक्ति नियत आहार-विहार (यम-नियम-आसन) आदि के तीक्ष्ण व्रतों के बिना योगमार्ग का पथिक नहीं बन सकता। उसके लिए तो यह योग दुःख बढ़ाने वाला ही है। 'दुःखहा' दुःख दूर करने वाला नहीं।[8]

ध्यान के विषय में ओशो कहते हैं कि- स्वय के भीतर झाँकना ही ध्यान है। स्वय के पूर्ण सत्य को अभी और यही (Here and Now) जानना ही ध्यान है। ध्यान ही वह द्वारहीन द्वार है जो कि स्वयं को ही स्वयं से परिचित कराता है। ध्यान है अमृत। क्योकि, ध्यान है जीवन। यदि मन समस्या है तो ध्यान समाधान है। मन का अभाव ध्यान है। जो भी मार्ग है, वे सब

ध्यान (Meditation) के ही रूप हैं। प्रार्थना भी ध्यान है। पूजा भी। उपासना भी। योग भी ध्यान है। साख्य भी । ज्ञान भी ध्यान है। भक्ति भी। कर्म भी ध्यान है। सन्यास भी । ध्यान का अर्थ है चित्त की मौन,निर्विचार, शुद्धावस्था ।[9]

**ध्यान हेतु उपयुक्त स्थान व आसन :**

प्रायः योग के सम्बन्धित सभी ग्रन्थों में योग के लिए उपर्युक्त स्थान व आसन की चर्चा की गयी है। क्योंकि योग एक ऐसा विषय है जो प्रकृति के सान्निध्य से मनुष्य के अन्तर्मन को ध्यानयोग के द्वारा परमतत्त्व से जोड़ता है। विविध योगपद्धतियाँ योग के लिए उपयुक्त स्थान व आसन को प्राप्त करके ही लाभ देती हैं। स्थान आदि, की चर्चा करते हुए स्वात्माराम मुनि कहते हैं कि योगाभ्यासी को ऐसे स्थान में रहना चाहिए जहाँ किसी तरह की अशान्ति, चोरी या झगड़ा न हो और योगी के आहार योग्य भोजन उपलब्ध हो तथा योगाभ्यास के लिए कुटिया ऐसे स्थान पर बनाए जहाँ आग, पत्थर और पानी (सीलन) न हो। कुटिया एकान्त स्थान में हो। साथ ही योगाभ्यासी के लिए मठ या कुटिया कैसी हो? इसके लिए कहा है कि कुटिया का दरवाजा छोटा हो। कुटिया में कोई छेद, खिड़की, गड्ढा या बिल नहीं होना चाहिए। कुटिया बहुत ऊँची या बहुत नींची जगह पर नहीं होनी चाहिए।[10] इसी प्रकार घेरण्ड ऋषि भी कहते हैं कि दूर देश में अविश्वास होता है, अरण्य में रक्षक शून्य, जनसमूह में प्रकाश होने का भय होता है। अतः इन तीनों स्थानों का परित्याग करना चाहिए।[11]

श्रीमद्भागवत पुराण में भी योगाभ्यास हेतु उपयुक्त स्थान की चर्चा करते हुए कहा गया है कि- साधक ,पुण्यतीर्थों के जल में स्नान करे और शुद्ध एकान्त स्थान में विधिपूर्वक बिछाए हुए आसन पर आसीन हो तथा शुचि देश में आसन लगाकर आसन को जीते, फिर स्वस्तिकासन लगाकर सीधा शरीर करके ध्यान का अभ्यास करे। श्वेताश्वतरोपनिषद् में उपयुक्त स्थान के विषय में कहा है कि-साधक ऐसे स्थान पर आसन लगाये या बैठे जहाँ की भूमि समतल हो, ऊँची-नीची, टेढ़ी-मेढ़ी न हो। जो सब प्रकार से शुद्ध हो, जहाँ पर कूड़ा-कर्कट आदि न हों, झाड़-बुहार कर साफ किया हुआ हो, जहाँ कंकड़, बालू न हो और अग्नि या धूप की गर्मी भी न हो, यथावश्यक जल प्राप्त हो सके, जो मन के अनुकूल हो तथा जहाँ का दृश्य नेत्रों को पीड़ा पहुँचाने वाला भययुक्त न हो। ऐसे गुहा आदि वायुशून्य एकान्त स्थान में पहले बताये हुए प्रकार से आसन लगाकर अपने मन को परमात्मा में लगाने का अभ्यास करना चाहिए।[12]

ध्यान के लिए उपयुक्त स्थान व आसन का वर्णन गीता में भी संकेतित है। आसन के विषय में गीता में कहा है कि जिस आसन पर बैठकर साधना की जाए वहाँ की भूमि शुद्ध पवित्र हो, उस पर दर्भासन (कुशासन) बिछाया जाए, उस पर मृगछाला (कृष्णाजिन) फैलाया जाए। यदि भूमि अच्छी सम न हो तो नीचे लकड़ी का फट्टा या चौकी रख कर उस पर पूर्वोक्त आसन बिछाए जाएं। आसन कैसा हो? इस विषय में कहा है कि 'वह आसन न बहुत ऊँचा हो, न बहुत नीचा हो। आसन की स्थिति बताने के उपरांत कहा है कि 'स्थिरमासनम्' अर्थात् आसन स्थिर हो, हिलने-डुलने वाला न हो।[13]

**ओशो के अनुसार ध्यान हेतु उपयुक्त स्थान व आसन :**

उपर्युक्त मठ व कुटिया की जो चर्चा की गयी है, वह आज के सन्दर्भ में उपयुक्त नहीं बैठती, कौन आज कुटिया में रहना पसन्द करेगा, कौन गोबर से लिपेगा। ध्यान के लिए उपयुक्त स्थान और आसान आदि के संदर्भ ओशो कहते हैं कि- अगर ध्यान के लिए एक नियत जगह चुन सकें - एक छोटा सा मंदिर, घर में एक छोटा सा कोना, एक ध्यान-कक्ष- तो सर्वोत्तम है। परंतु फिर उस जगह का किसी और काम के लिए उपयोग न करें। क्योंकि हर काम की अपनी तरंगें होती हैं। उस जगह का

उपयोग सिर्फ ध्यान के लिए करें। यदि ध्यान के लिए एक नियत समय चुन सकें तो वह भी बहुत उपयोगी होगा, क्योंकि हमारा शरीर, हमारा मन एक यंत्र है। अगर हम रोज एक नियत समय पर भोजन करते हैं, तो हमारा शरीर उस समय भोजन की मांग करने लगता है। क्योंकि हमारा शरीर और मन एक यंत्र की भांति कार्य करते है। अगर हम एक नियत जगह पर, एक नियत समय पर रोज ध्यान करें, तो हमारे शरीर और मन में ध्यान के लिए भी एक प्रकार की भूख निर्मित हो जाती है। जब तक कि ध्यान हमारे लिए इतना सहज न हो जाए, तब तक मन और शरीर की इन यांत्रिक व्यवस्थाओं का उपयोग करना चाहिए। जैसे- कमरे में अंधेरा हो, अगरबत्ती या धूपबत्ती की खुशबू हो, एक सी लंबाई के व एक प्रकार के कपड़े के वस्त्र पहनें, एक से कालीन या चटाई का उपयोग करें, एक से आसन का उपयोग करें। इससे ध्यान नहीं हो जाता, लेकिन इससे मदद मिलती है।[14]

**ध्यानाभ्यास कैसे करें-**

आसन में आसीन होने के पश्चात् शास्त्रों में ध्यानविधि और उसका महत्त्व भी बता दिया गया है। पतञ्जलि कहते हैं कि मन को ध्यानस्थ करने के लिए गन्ध आदि विषयवाली उत्पन्न हुई वृत्ति एकाग्रता में कारण होती है। अन्त में कहा है कि 'अपनी इच्छानुकूल (शास्त्रसम्मत) किसी अन्य वस्तु का ध्यान करने से भी मन एकाग्र हो जाता है।[15] शास्त्रों और वेदों के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि ध्यान की अनेकों पद्धतियाँ हैं। "नदी-नद आदि जल जैसे समुद्र में ही समा जाते हैं, वैसे ही परमेश्वर में ध्यान करने वाले अपनी इन्द्रियों को समेट कर परमात्मा के आनन्द में निमग्न हो जाते हैं। तेजोमय परमात्मा का ध्यान करने की पद्धति का वेद निर्देश करता है कि – " मानव यज्ञार्थ भौतिक अग्नि को प्रदीप्त करता हुआ अपनी मननशक्ति द्वारा अपनी धरणावती बुद्धि को इस प्रकार सम्बुद्ध करे अर्थात् ध्यानावस्था में विचार करे मैं तो विविध स्थानों पर पहुँचने वाली, अन्धकार को दूर करने वाली किरणों का ज्ञान-ज्योतियों द्वारा ज्योतिस्वरूप परमेश्वर को ही प्रदीप्त कर रहा हूँ। यजुर्वेद में निर्देश है कि नाड़ियों में ध्यान करके परमानन्द की बृद्धि करो। मुण्डकोपनिषद् में कहा गया है कि ज्ञानप्रसाद के द्वारा विशुद्ध सत्त्व होकर ध्यान करता हुआ आत्मा को देखें।" उपनिषदों में प्रायः ओङ्कार की एक, दो तथा तीन मात्राओं के ध्यान तथा उनके फलों का पृथक् पृथक् वर्णन स्पष्टतया उपलब्ध होता है। कैवल्योपनिषद् में कहा गया है कि एकान्त देश में सुखासन पर बैठकर पवित्र होंकर सिर, ग्रीवा तथा शरीर को एक सीध में करके हृदयकमल में अचिन्त्य, अव्यक्त, अनन्त तथा शान्त स्वरूप शिव का ध्यान करें। ब्रह्मविद्योपनिषद् में ध्यान करने का स्थान भ्रूमध्य बतलाया गया है।' व्यासभाष्य में धारणा के प्रसङ्ग में विविध स्थलों का उल्लेख करते हुए भ्रूमध्य को भी धारणा व ध्यान का स्थल माना गया है। हंसोपनिषद् में कहा गया है कि मूलबन्ध लगाकर क्रमशः स्वाधिष्ठान, मणिपूर तथा अनहद चक्रों को पार करके विशुद्धचक्र में प्राणों को रोककर आज्ञाचक्र में तथा ब्रह्मरन्ध्र में ध्यान करें। योगतत्त्वोपनिषद् में दो प्रकार का ध्यान कहा गया है – सगुण तथा निर्गुण। प्राणायाम द्वारा वायु को रोककर अपने इष्टदेवता का ध्यान करना सगुण ध्यान है। निर्गुण ध्यान के द्वारा समाधि लाभ होता है। शाण्डिल्योपनिषद् में भी इसी प्रकार के दो भेद करते हुए मूर्ति के ध्यान को सगुण ध्यान कहा है तथा आत्मस्वरूप दर्शन को निर्गुण ध्यान कहा है।[16]

श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा गया है कि- साधक ध्यान के समय आसन जमाकर सुखपूर्वक या सुखासन से बैठे उस समय अपने सिर, गले और वक्षःस्थल को ऊँचा उठाये रखे। शरीर स्थिर व सीधा रहे। तदनन्तर ॐकार का जप और उसके वाच्च्य पर ब्रह्म परमात्मा का ध्यान करे। इसी उपनिषद में अन्यत्र भी ध्यान लगाने के विषय में कहा है कि मन एवं प्राण की सविता-देवता की ज्योति में लगाये। अग्नि की ज्योति का अवलोकन करे। उसे सूक्ष्म शरीर के क्षेत्र में स्थापित करे। प्रथम अध्याय के एक मन्त्र में कहा है कि अपने देह को अरणि और प्रणव को उत्तरारणि करके ध्यानरूप मन्थन के अभ्यास से

स्वप्रकाश परमात्मा को छिपे हुए (अग्नि) के समान देखे।[17] गीता में आसन पर बैठने के पश्चात श्री कृष्ण ध्यानी के लिए तीन बातें कहते हैं 'तत्र एकाग्रं मनः कृत्वा' अर्थात् ध्येय वस्तु में मन की वृत्तियों को भलीभाँति उसी में लगा देना। मन की एकाग्रता है। दूसरा 'यत चित्तेनद्रिय क्रियः' अन्तःकरण की क्रियाओं को और (इन्द्रिय) श्रोत्रादि इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में कर ले तो आत्मशुद्धि और मन या अन्तःकरण की शुद्धि हेतु योग में जुट जाए। इसके पश्चात् 'काया, सिर और गले को सीधा अर्थात् एक सीध में तथा अचल रखकर, नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाकर, चित्त एकाग्र कर, परमात्मा से सम्बन्ध जोड़कर बैठ जाए। तथा ध्यान में बैठते समय साधक निर्भय होकर व आत्मा में प्रसन्नता (हर्ष, शोक, काम, क्रोध की वृत्तियों से दूर रहे) रखकर बैठे और भगवान् में ही चित्त लगाये (मच्चितः, मत्परः) अर्थात् ईश्वरप्रणिधान (ईश्वर की शरण) में ही रहे।[18]

**ओशो द्वारा प्रदत्त ध्यान विधियां -**

ओशो की ध्यान विधियों की संख्या व प्रकार इस जगत को ओशो की सबसे बड़ी देन है उनकी 'ध्यान विधियां'। ओशो ने अनगिनत ध्यान विधियां दीं। अनेक संतों की वाणी समझाते हुए ओशो ने कोई न कोई ध्यान विधि अवश्य बताई है। उदाहरण के लिए गीता दर्शन में अनेक विधियां, महावीर वाणी के प्रथम 14 प्रवचन में बारह तप की व्याख्या, विज्ञान भैरव तंत्र में शिव द्वारा रचित 112 विधियों की व्याख्या, दर्शन डायरी में 200 से अधिक ध्यान विधियां इत्यादि । इसके अलावा ध्यान सूत्र, ध्यान विज्ञान, हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यानम् नामक पुस्तकें ओशो द्वारा रचित अनेक ध्यान विधियों का संकलन है।[19] यदि ओशो की पुस्तक "ध्यान विज्ञान" की बात करें तो इसमें 115 विधियों का वर्णन किया गया है। जिनके नाम निम्न प्रकार से है।[20]

**सुबह के समय करने वाली ध्यान विधियां :**

1 सूर्योदय की प्रतीक्षा 2 उगते सूरज की प्रशंसा में 3 सक्रिय ध्यान 4 मंडल ध्यान 5 तकिया पीटना 6 कुत्ते की तरह हांफना 7 नटराज ध्यान 8 इस क्षण में जीना 9 स्टॉप ! ध्यान 10 कार्य – ध्यान की तरह 11 सृजन में डूब जाएं 12 गैर-यांत्रिक होना ही रहस्य है 13 साधारण चाय का आनंद 14 शांत प्रतीक्षा 15 कभी, अचानक ऐसे हो जाएं जैसे नहीं हैं 16 'मैं यह नहीं हूं' 17 अपने विचार लिखना 18 विनोदी चेहरे 19 पृथ्वी से संपर्क 20 श्वास को शिथिल करो 21 'इस व्यक्ति को शांति मिले' 22 तनाव विधि 23 विपरीत पर विचार 24 'अद्वैत' 25 'हां' का अनुसरण26 वृक्ष से मैत्री 27 'क्या तुम यहां हो?' 28 निष्क्रिय ध्यान 29 आंधी के बाद की निस्तब्धता 30 निश्चल ध्यानयोग

**दिन के समय करने वाली ध्यान विधियां :**

31 स्वप्न में सचेतन प्रवेश 32 यौन-मुद्राः काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की एक सरल विधि 33 मूलबंध: ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि 34 कल्पना-भोग 35 मैत्रीः प्रभु-मंदिर का द्वार 36 शांति-सूत्रः नियति की स्वीकृति 37 मौन और एकांत का इक्कीस दिवसीय प्रयोग 38 प्राण-साधना 39 मंत्र-साधना 40 अंतर्वाणी साधना 41 संयम साधना – 1, 42 संयम साधना – 2, 43 संतुलन ध्यान – 1, 44 संतुलन ध्यान-2, 45 श्रेष्ठतम क्षण का ध्यान 46 'मैं-तू' ध्यान 47 इंद्रियों को थका डालें

**अपराह्न में करने वाली ध्यान विधियां :**

48 श्वासः सबसे गहरा मंत्र 49 भीतरी आकाश का अंतरिक्ष यात्री 50 आकाश सा विराट एवं अणु सा छोटा 51 'एक' का अनुभव 52 आंतरिक मुस्कान 53 'ओशो' 54 देखना ही ध्यान है 55 शब्दों के बिना देखना 56 मौन का रंग 57 सिरदर्द को देखना 58 ऊर्जा का स्तंभ 59 गर्भ की शांति

**संध्या के समय करने वाली ध्यान विधियां :**

60 कुंडलिनी ध्यान 61 झूमना 62 सामूहिक नृत्य 63 वृक्ष के समान नृत्य 64 हाथों से नृत्य 65 सूक्ष्म पर्तों को जगाना 66 गीत गाओ 67 गुंजन 68 नादब्रह्म ध्यान 69 स्त्री-पुरुष जोड़ों के लिए नादब्रह्म 70 कीर्तन 71 सामूहिक प्रार्थना 72 मुर्दे की भांति हो जाएं 73 अग्निशिखा

**रात के समय करने वाली ध्यान विधियां :**

74 प्रकाश पर ध्यान 75 बुद्धत्व का अवलोकन 76 तारे का भीतर प्रवेश 77 चंद्र ध्यान 78 ब्रह्मांड के भाव में सोने जाएं 79 सब काल्पनिक है 80 ध्यान के भीतर ध्यान 81 पशु हो जाएं 82 नकारात्मक हो जाएं 83 'हां, हां, हां' 84 एक छोटा, तीव्र कंपन 85 अपने सुरक्षा-कवच उतार दो 86 जीवन और मृत्यु ध्यान 87 बच्चे की दूध की बोतल 88 भय में प्रवेश 89 अपनी शून्यता में प्रवेश 90 गर्भ में वापस लौटना 91 आवाजें निकालना 92 प्रार्थना ध्यान 93 लातिहान ध्यान 94 गौरीशंकर ध्यान 95 देववाणी ध्यान 96 प्रेम 97 झूठे प्रेम खो जाएंगे 98 प्रेम को फैलाएं 99 प्रेमी-युगल एक-दूसरे में घुलें-मिलें 100 प्रेम के प्रति समर्पण 101 प्रेम-कृत्य को अपने आप होने दो 102 कृत्यों में साक्षीभाव 103 बहना-मिटना-तथाता ध्यान 104 अंधकार, अकेले होने, और मिटने का बोध 105 स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश 106 सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि 107 मृतवत हो जाना 108 जाति-स्मरण के प्रयोग 109 अंतर्प्रकाश साधना 110 शिवनेत्र 111 त्राटक-एकटक देखने की विधि 112 त्राटक ध्यान- 1, 113 त्राटक ध्यान-2, 114 त्राटक ध्यान – 3, 115 रात्रि-ध्यान

**ध्यान विधि का चुनाव -**

ओशो का कहना है कि- हमेशा उस विधि से शुरू करें जो रुचिकर लगे। ध्यान को जबरदस्ती थोपना नहीं चाहिए। क्योंकि जिस दिशा में मन की सहज रुचि हो, उस दिशा में ध्यान सरलता से घटता है। स्मरण रहे, जो हमें रुचिकर लगता है उसी में हम गहरे जा सकते हैं। तो जब कोई विधि रुचिकर लगे तो फिर और-और विधियों के लोभ में न पड़ें, फिर उसी विधि में और-और गहरे उतरें। उस विधि को प्रतिदिन, या अगर संभव हो तो दिन में दो बार अवश्य करें। जितना हम इसे करेंगे, उतना आनंद बढ़ता जाएगा। किसी भी विधि को तभी छोड़ें जब आनंद आना बंद हो जाए। उसका मतलब है कि इस विधि का काम पूरा हो गया, अब दूसरी विधि की तलाश की जाए। कोई भी अकेली विधि हमें अंत तक नहीं ले जा सकती। हर विधि हमें एक अमुक अवस्था तक पहुंचाएगी। उसके बाद उसका कोई उपयोग नहीं है। उसका काम पूरा हो गया। लेकिन बहुत सी विधियां एक साथ करने की भी जरूरत नहीं है, क्योंकि हम उलझन में पड़ सकते हैं। तो कोई भी दो ध्यान की विधियां चुन लें और फिर उन्हें सतत करें। असल में, मैं (ओशो) तो चाहूंगा कि कोई एक ध्यान ही चुनें, यह सबसे अच्छा होगा। जो ध्यान हमें भाए, उसे दिन में कई बार करना ज्यादा बेहतर है। इससे उसमें गहराई आती है।[21]

**ओशो की ध्यान विधियों की विशेषताएं –**

ओशो ने सक्रिय और निष्क्रिय दोनों प्रकार की ध्यान विधियां दीं। ओशो की ध्यान विधियां, विश्रांति और जागरुकता के प्रयोगों तथा शारीरिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य के प्रयोगों, स्वयं के भीतर के रहस्यों की खोज के प्रयोगों का संकलन हैं। ओशो ने ऐसी ध्यान विधियों की संरचना की है जो हर प्रकार के लोगों द्वारा उपयोग में लाई जा सकती है- उनमें शरीर का पूरा उपयोग है, भाव का भी पूरा उपयोग है और होश का भी पूरा उपयोग है, तीनों का एक साथ उपयोग है और वह अलग-अलग लोगों पर अलग-अलग ढंग से काम करती हैं। वे शरीर पर शुरू होती हैं, वे हृदय से गुजरती हैं, वे मन पर पहुंचती हैं और फिर वह मनातीत में अतिक्रमण कर जाती हैं। ओशो ध्यान की उन विधियों के प्रस्तोता हैं, जो आज के गतिशील जीवन को ध्यान में रखकर रची गई हैं। जैसे -ओशो ने एक वैज्ञानिक की तरह 21 वीं सदी के अतिक्रियाशील मन के लिए एक नवीन प्रारंभ बिंदुः 'ओशो सक्रिय ध्यान' का आविष्कार किया है।[22] ओशो ने ध्यान को आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़ा। उन्होंने किसी विशेष धर्म या परंपरा का बंधन नहीं रखा। तथा ध्यान को गंभीरता के बजाय उत्सव के रूप में प्रस्तुत किया।

### ध्यान की तीन अनिवार्यताएं-

ध्यान में कुछ अनिवार्य तत्व हैं, विधि कोई भी हो, वे अनिवार्य तत्व हर विधि के लिए आवश्यक हैं। पहली है एक विश्रामपूर्ण अवस्थाः मन के साथ कोई संघर्ष नहीं, मन पर कोई नियंत्रण नहीं; कोई एकाग्रता नहीं। दूसरा, जो भी चल रहा है उसे बिना किसी हस्तक्षेप के, बस शांत सजगता से देखो भर शांत होकर, बिना किसी निर्णय और मूल्यांकन के, बस मन को देखते रहो। ये तीन बातें हैं। विश्राम, साक्षित्व, अ-निर्णय और धीरे-धीरे एक गहन मौन तुम पर उत्तर आत्ता है। तुम्हारे भीतर की सारी हलचल समाप्त हो जाती है। तुम हो, लेकिन 'मैं हूं' का भाव नहीं है- बस एक शुद्ध आकाश है। ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं; मैं उन सभी विधियों पर बोला है। उनकी संरचना में भेद है, परंतु उनके आधार वही हैः विश्राम, साक्षित्व और एक निर्विवेचनापूर्ण दृष्टिकोण।[23]

### सावधानियां-

अगर हम कई ध्यान एक साथ करते हैं- एक दिन एक, दूसरे दिन दूसरा। और हम अपने ही ध्यान भी गढ़ लेते हैं तो ऊहापोह बढ़ेगा। ओशो कहते हैं कि- मेरे द्वारा निर्मित ध्यान की ये विधियां कोई मनोरंजन नहीं है। ये कभी-कभी खतरनाक भी हो सकती हैं। इसलिए इन विधियों में कोई हेर-फेर न करें और अलग-अलग विधियों को मिला कर अपनी ही कोई खिचड़ी विधि न ईजाद करें। कोई भी दो विधियां चुन लें और कुछ सप्ताह उनका प्रयोग करके देखें।[24] ध्यान को कुतूहल नहीं, मुमुक्षा, बहुत गहरी प्यास, अभीप्सा अगर बनाएंगे, तो ही प्रवेश कर पाएंगे। अगर न जा पाते हों ध्यान में, तो संकल्प की कमी है, इसकी खोज करें।

### ओशो ध्यान विधियां- एक पूर्ण चिकित्सा पद्धति-

मनुष्य का मनोविश्लेषण कर ओशो ने ध्यान की एक अनूठी व्यवस्था को जन्म दिया। जो न सिर्फ आधुनिक मनुष्य की मनोपृष्ठभूमि पर आधारित है, बल्कि इस तरह से संयोजित है कि बच्चे, जवान और वृद्धों सभी को भाती है। ओशो ने अनेक ग्रुप थेरेपीज की रचना की जैसे- मिस्टिक रोज ग्रुप, नो माइंड, बॉर्न अगेन, हू इज इन आदि। ये तीन दिन से लेकर 21 दिन तक के बहुत सशक्त समूह कोर्स हैं जहां साधक को अपने भावों, विचारों, अचेतन जड़ता आदि में उतरने का अवसर प्राप्त होता है। अनेक एनकाउंटर थेरेपीज को भी ओशो ने साधकों पर आजमाया और व्यक्तिगत रूप से हजारों लोगों को उस व्यवस्था में भी

दिशा दी। वैसे तो ओशो द्वारा सृजित ध्यान व्यवस्था का फलक बहुत बड़ा है और वर्गों में बंटता नहीं।व्यक्गित रूप से मिलने वाले व्यक्तियों को ओशो ने सैकड़ों ध्यान की अनूठी विधियां सुझाईं जो ध्यान-चिकित्सीय पद्धति के नए-नए द्वार खोलती प्रतीत होती है। ये सभी चर्चाएं 60 के आस-पास 'दर्शन डायरीज' में संकलित है। मन के क्रिया-कलापों की सटीक और महीन व्याख्या जैसी ओशो के यहां मिलती है, कहीं और नहीं मिलती।[25] व्याख्या के लिए मौलिक रूप से तीन वर्गों में ओशो के ध्यान को रखा जा सकता है।

| क्र. स. | ध्यान के वर्ग | ध्यान विधियों के नाम |
|---|---|---|
| 1 | सक्रिय विधियां | सक्रिय ध्यान, कुंडलिनी ध्यान, नटराज ध्यान, मण्डला ध्यान, नो- डायमेंशन आदि। |
| 2 | अक्रिय विधियां | स्वर्ण प्रकाश ध्यान, चक्रा साउंड, चक्रा ओवर-टोन आदि। |
| 3 | ग्रुप थेरेपीज | मिस्टिक रोज, बॉर्न अगेन, नो-माइंड आदि। |

**महत्व -**

ध्यान का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए कहा है कि ऋषियों ने ध्यान के द्वारा उस कारणभूत ब्रह्म शक्ति का साक्षात्कार किया। ध्यानयोग की सहायता से साधक अदृश्य का दर्शन करता है एवं ब्रह्म सत्ता के गूढ़ रहस्यों को देख सकना ध्यान धारणा से ही सम्भव होता है।[26] महर्षि पतञ्जलि चित्त की शान्ति व पवित्रता के लिए अर्थात् ईश्वरसिद्धि हेतु ध्यानविधि को उत्कृष्ट बताते हैं। साधक परम सूक्ष्म परमाणु से लेकर परम महत् किसी भी सत्तावान् वस्तु पर अभिकेन्द्रित या स्थिर कर सकता है। ध्यान की इसी साधना-पद्धति का यानि ध्यानयोग का श्वेताश्वतर उपनिषद् में अन्यतम महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। योगशिखोपनिषद् में ध्यान करने को सर्वश्रेष्ठ मानकर कहा गया है कि यह ध्यान हजारों अश्वमेधादि की अपेक्षा भी उत्कृष्ट है।[27] ओशो की अनेकों विधियां हैं जो सबसे पहले हमारे शरीर व मन में इकट्ठे हो गये दमित आवेगो, तनावो व रुग्णताओ से हमे मुक्त करती है। और इस भॉति हमे स्वस्थ बना अन्तत गहरे ध्यान की दिशा में ले जाती है। तथा चित्त को तनावमुक्त करती है।

**ओशो रचित ध्यान विधियों का शरीर, मन व आत्मा पर प्रभाव -**

ओशो रचित ध्यान प्रयोग में हमारे दबे हुए, दमन किए हुए भावों से मुक्त होना सिखाया जाता है। आचार्य रजनीश कहते है कि भावनाओ के भीतर दमिन होने के कारण शरीर मे भी विकार तथा ग्रन्थियो का निर्माण हो जाता है। इनका निर्माण इस प्रकार होता है जैसे-कभी हममें क्रोध की ऊर्जा जग जाती है परन्तु उपयोग में नहीं आई, वह एक गांठ के रूप में स्थापित हो जाएगी। शरीर में बनी ऐसी ग्रन्थियों से शरीर अशुद्ध हो जाता है। ओशो निर्मित ध्यान विधियों से ग्रन्थियों का विसर्जन शुरू होकर शरीर शुद्ध होने लगता हैं।[28] ओशो निर्मित सक्रिय ध्यान की विधि से फेफडो पर सकारात्मक प्रभाव पडता है। जिससे व्यक्ति अधिक जीवंत महसूस व स्वस्थ अनुभव करता है। ओशो की ध्यान विधियों के प्रयोगो के मध्य भीतर उठे झंझावात के क्षण में एहसास होता है कि शरीर व आत्मा दो अलग-अलग है। ओशो की सक्रिय ध्यान विधियों के द्वारा शरीर व मन की कैंथार्सिस होकर मनोग्रन्थियों का विसर्जन या रेचन हो जाता है। जिस के परिणामस्वरूप काम ऊर्जा अंतर्मुखी होकर आध्यात्मिक शक्ति बन जाती है। इसे तुम प्रत्यक्ष अनुभव करोगे कि तुम बदलने लगे, तुम दूसरे होने लगे, एक नये आदमी का आर्विभाव होने लगा।[29] ओशो कहते है कि- शरीर, हृदय, मन-मेरी सभी ध्यान विधियां इसी श्रृंखला में काम करती हैं।

**ओशो का ध्यान योग पर दृष्टिकोण :**

ओशो का दृष्टिकोण पारंपरिक ध्यान पद्धतियों से कुछ अलग है। वे मानते हैं कि आधुनिक मनुष्य का मन अत्यधिक अशांत और जटिल हो गया है, इसलिए पारंपरिक शांत बैठने वाली ध्यान विधियाँ हर व्यक्ति के लिए उपयुक्त नहीं हैं। उन्होंने ध्यान को सक्रिय (Dynamic) और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया। ओशो के अनुसार-

1- मन को दबाना नहीं, समझना आवश्यक है- ओशो कहते हैं कि ध्यान का उद्देश्य मन को नियंत्रित करना नहीं, बल्कि उसे समझना है।
2- स्वीकार्यता (Acceptance)- व्यक्ति को अपने विचारों, भावनाओं और इच्छाओं को बिना किसी विरोध के स्वीकार करना चाहिए।
3- वर्तमान में जीना- ध्यान का मूल उद्देश्य वर्तमान क्षण में जीना है, क्योंकि अतीत और भविष्य केवल मानसिक कल्पनाएँ हैं।

**निष्कर्ष :**

योगसिद्ध होना या परमात्मा के ज्ञान तथा मोक्ष की प्राप्ति का मुख्य साधन ध्यान ही है। आचार्य रजनीश के द्वारा रचित ध्यान की विधियां एक प्रकार से अलग हट कर हैं। उन्होने ऐसी ध्यान-विधियों की संरचना की है जो तीनों (शरीर के तल पर ज्यादा संवेदनशील,भाव-प्रवण,बुद्धि-प्रवण,) प्रकार के लोगों द्वारा उपयोग में लाई जा सकती हैं।ध्यान योग के क्षेत्र में ओशो का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी है। उन्होंने ध्यान को एक नई दिशा दी और इसे आधुनिक जीवन के लिए प्रासंगिक बनाया। उनका मानना था कि ध्यान केवल साधना नहीं, बल्कि जीवन जीने की एक कला है। ओशो के अनुसार ध्यान का वास्तविक उद्देश्य स्वयं को जानना और जीवन को पूर्णता के साथ जीना है। उनके द्वारा विकसित ध्यान विधियाँ आज भी लाखों लोगों के जीवन में परिवर्तन ला रही हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि ध्यान योग के क्षेत्र में ओशो का दृष्टिकोण न केवल आध्यात्मिक, बल्कि वैज्ञानिक और व्यावहारिक भी है, जो आधुनिक युग के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है।

**संदर्भ सूची**

1-https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/103637/1/Unit-14.pdf

2-विलियम महोनी (1997), द आर्टफुल यूनिवर्स: एन इंट्रोडक्शन टू द वैदिक रिलीजियस इमेजिनेशन, स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस, ISBN 978-0791435809पृष्ठ 171-177, 222

3- https://positivepsychology.com/history-of-meditation/

4- थॉमस बेरी (1992), भारत के धर्म: हिंदू धर्म, योग, बौद्ध धर्म, कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, ISBN 978-0231107815पृष्ठ 101

5-परिव्राजक स्वामी सत्यपति, योगदर्शनम, 2003, दर्शन योग महाविद्यालय साबरकांठा, गुजरात, पृष्ठ संख्या-216

6- बन्धु डॉ०मनुदेव 2010,उपनिषद् वाङ्मय में योगविद्या,प्रतिभा प्रकाशन,दिल्ली पृ.स.95-96

(i) तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् । योगदर्शन 3/2

(ii)तस्मिन् देशे ध्येयालम्बनस्य प्रत्ययस्यैकतानता सदृशः प्रवाहः प्रत्ययान्तरेणापरामृष्टः ध्यानम् ।योगदर्शन 3/2 पर व्यासभाष्य

(iii) सर्वशरीरेषु चैतन्यैकतानता ध्यानम् । मण्डलब्राह्मणोपनिषद्

7-पोद्दार हनुमान प्रसाद, शास्त्री चिम्मनलाल गोस्वामी (सं. २०६८, ११वाँ पुनर्मुद्रण), उपनिषद् अंक, गीताप्रेस गोरखपुर, पृ. सं.463

तपोध्यानं ब्रह्मेत्युपास्ते यावद् ध्यानस्य गतं तत्रास्य यथा कामाचारो भवति यो ध्यानं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति । छान्दोग्योपनिषद् ७.६.२

8-दास स्वामी रामसुख (संवत् २०६०, ४६वाँ संस्करण) श्रीमद्भगवद्गीता साधक संजीवनी, गीता प्रेस गोरखपुर पृ. सं.-३०७, ४१५

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा। श्रीमद्भगवद् गीता ६.१७

9- ओशो , 1977, रजनीश ध्यान योग, ओम् रजनीश ध्यान केन्द्र प्रकाशन, ३१, भगवान भुवन, इजरायल मोहल्ला, मस्जिद बन्दर रोड, बम्बई ४०० ००९,पृ. सं. 34-39

10-दिगम्बर स्वामी, झा पिताम्बर (२००१), हठप्रदीपिका, कैवल्यधाम योग संस्थान, पृ. सं. 68

(i)सुराज्ये धार्मिके देशे सुभिक्षे निरुपद्रवे। धनुः प्रमाणपर्यन्तं शिलाग्निजलवर्जिते । एकान्ते मठिकामध्ये स्थातव्यं हठयोगिना।। हठप्रदीपिका १.१२

(ii)अल्पद्वारमरन्ध्रगर्तविवरं नात्युच्चनीचायतम्। सम्यग्गोमयसान्द्रलिप्तममलं निःशेषजंतूज्झितम् । बाह्यमण्डपवेदिकूपरुचिरं प्राकारसंवेष्टितं प्रोक्तम्। योगमठस्य लक्षणमिदं सिद्धैर्हठाभ्यासिभिः ॥ हठप्रदीपिका १.१३

(iii)गुरूपदिष्टमार्गेण योगमेव समभ्यसेत् ॥ हठप्रदीपिका १.१४

11-सरस्वती स्वामी निरञ्जनानन्द (२०११) घेरण्ड संहिता, योग पब्लिकेशन ट्रस्ट मुंगेर बिहार, पृ. सं. २८९

अविश्वासं दूरदेशे अरण्ये रक्षिवर्जितम्। एवं विधे मठे स्थित्वा सर्वचिन्ताविवर्जित। लोकाकुले प्रकाशश्च तस्मात् त्रीणि विवर्जयेत्।। घेरण्डसंहिता ५.४

12-पोद्दार हनुमान प्रसाद, शास्त्री चिम्मनलाल गोस्वामी (सं. २०६८, ११वाँ पुनर्मुद्रण), उपनिषद् अंक, गीताप्रेस गोरखपुर, पृ. सं. ३८०

13-दास स्वामी रामसुख (संवत् २०६०, ४६वाँ संस्करण) श्रीमद्भगवद्गीता साधक-संजीवनी, गीता प्रेस गोरखपुर पृ. सं. ४०९

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः । नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्।। श्रीमद्भगवद् गीता ६.११

14-ओशो, 2013, ध्यान विज्ञान, ओशो मीडिया इंटरनेशनल, कोरेगांव पुणे, पृ. सं. 13-14

15-तीर्थ स्वामी ओमानन्द (संवत् २०६१, २३वाँ संस्करण) पातञ्जलयोगप्रदीप, गीता प्रेस गोरखपुर, पृ. सं. २४९, २५४

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनी।। योगदर्शन १.३५

यथाभिमतध्यानाद वा। योगदर्शन १.३९

16-बन्धु डॉ०मनुदेव 2010,उपनिषद् वाड्मय में योगविद्या,प्रतिभा प्रकाशन,दिल्ली पृ.स.97-98

(i)-युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।

वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितु परिष्टुतिः ।। ऋग्वेद 5/81/1, यजुर्वेद 11/4, श्वेताश्वतरोपनिषद् 2/4

(ii)- प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् । अग्ने रथं न वेद्यम् ।। सामवेद 5

(iii)-अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः। अग्निमीन्धे विवस्वभिः ।। ऋग्वेद 8/102/22

(iv)-ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वस्ततस्तु तं पश्येत् निष्कलं ध्यायमानः। -मुण्डकोपनिषद् 3/1/8

(v)-यः पुनरेतं त्रिमात्रेणौमित्येतेनैवाक्षरेण परं पुरुषमभिध्यायीत, स तेजसि सूर्ये सम्पन्नः। यथा पादोदरस्त्वचा विनिर्मुच्यते, एवं ह वै स पाप्मना विनिर्मुक्तः, स सोमभिरुन्नीयते ब्रह्मलोकम्। स एतस्माञ्जीवघनात्परात्परं पुरिशयं पुरुषमीक्षते। तदेतौ श्लोकौ भवतः । प्रश्नोपनिषद् 5/5

(vi)-विविक्तदेशे च सुखासनस्थः शुचिः समग्रीवशिरः शरीरः। अत्याश्रयस्थः सकलेन्द्रियाणि निरुध्य भक्त्या स्वगुरुं प्रणम्य ।।

हत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम् । अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ।। कैवल्योपनिषद् 7-8

(vii)-ज्योतिर्लिङ्ग भुवोमध्ये नित्यं ध्यायेत्सदा। ब्रह्मविद्योपनिषद् श्लोक 80

(viii)-अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च। सुषुम्णाध्यानयोगस्य नार्हन्ति षोडशीम् ।। योगशिखोपनिषद् श्लोक 43

(ix)-सगुणं ध्यानमेतत्स्यादणिमादिगुणप्रदम् । निर्गुणध्यानयुक्तस्य समाधिश्च ततो भवेत् ।। शाण्डिल्योपनिषद् 1/71

(x)-सत्यार्थप्रकाश, महर्षि दयानन्द सरस्वती, सप्तम समुल्लास

17-पोद्दार हनुमान प्रसाद, शास्त्री चिम्मनलाल गोस्वामी (सं. २०६८, ११वाँ पुनर्मुद्रण), उपनिषद् अंक, गीताप्रेस गोरखपुर, पृ. सं. ३७६-३७७,३७९

(i)-त्रिरुन्नतं स्थाप्य समं शरीरं हृदीन्द्रियाणि मनसा संनिरुध्य। ब्रह्मोडुपेन प्रतरेत विद्वान् स्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि।। श्वेताश्वतरोपनिषद् २.८

(ii)युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः । अग्नेज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत ।। श्वेताश्वतरोपनिषद् २.१

(iii)- स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणिम्। ध्याननिर्मथनाम्यासाद्देवं पश्येन्निगूढवत्॥ श्वेताश्वतरोपनिषद् १.१४

18- दास स्वामी रामसुख (संवत् २०६०, ४६वाँ संस्करण) श्रीमद्भगवद्गीता साधक संजीवनी, गीता प्रेस गोरखपुर पृ. सं. ४११-४१२

(i)समं काय शिरो ग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः। सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्। श्रीमद्भगवद् गीता ६.१३

(ii ) प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः। मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत् मत्परः॥ श्रीमद्भगवद् गीता ६.१४

19-सदैव शशिकांत, (2020), ओशो का इस जगत को योगदान, प्रभाकर प्रकाशन पांडव नगर, ईस्ट दिल्ली, पृष्ठ संख्या-60

20-ओशो, 2013, ध्यान विज्ञान, ओशो मीडिया इंटरनेशनल, कोरेगांव पुणे, पृ. सं. 20-117

21-ओशो, 2013, ध्यान विज्ञान, ओशो मीडिया इंटरनेशनल, कोरेगांव पुणे, पृ. सं. 15-16

22- सदैव शशिकांत, (2020), ओशो का इस जगत को योगदान, प्रभाकर प्रकाशन पांडव नगर, ईस्ट दिल्ली, पृष्ठ संख्या-60-70

23-ओशो,1990, ध्यानयोग,रेबल पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.,50 कोरेगांव पार्क, पुणे, पृ. सं.-24

24- ओशो, 2013, ध्यान विज्ञान, ओशो मीडिया इंटरनेशनल, कोरेगांव पुणे, पृ. सं.- 15-16

25-सदैव शशिकांत, (2020), ओशो का इस जगत को योगदान, प्रभाकर प्रकाशन पांडव नगर, ईस्ट दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 56 - 57

26-पोहार हनुमान प्रसाद, शास्त्री चिम्मनलाल गोस्वामी (सं. २०६८, ११वाँ पुनर्मुद्रण) उपनिषद् अंक, गीताप्रेस गोरखपुर, पृ. सं. ३७९

ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन्देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम्। यः कारणानि निखिलानि तानि कालात्मयुक्तान्यधितिष्ठत्येकः॥ श्वेताश्वतरोपनिषद् १.३

27- बन्धु डॉ०मनुदेव 2010,उपनिषद् वाङ्मय में योगविद्या,प्रतिभा प्रकाशन,दिल्ली पृ.स.-97

अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च। सुषुम्णाध्यानयोगस्य नार्हन्ति षोडशीम्॥ योगशिखोपनिषद् श्लोक 43

28-सत्यार्थी स्वामी आनंद, (2010, चतुर्थ संशोधित संस्करण), सरल ध्यान विधियां भाग-2,ओशो दर्शन आश्रम, सदरपुर गढ़शंकर-144527 (पंजाब), पृष्ठ संख्या-6

29- सत्यार्थी स्वामी आनंद, (2010, चतुर्थ संशोधित संस्करण), सक्रिय ध्यान के रहस्य ,ओशो दर्शन आश्रम, सदरपुर गढ़शंकर-144527 (पंजाब), पृष्ठ संख्या-13, 31, 62

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 175-177

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# स्वामी दयानंद सरस्वती के सत्यार्थ प्रकाश में निहित शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में उपादेयता

**प्रीति मीणा,** शोधकर्त्री

**डॉ. मन्जू देवी,** सहायक आचार्या,

श्री बालाजी टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, जयपुर।

**सारांश (Abstract) :**

यह शोध–पत्र स्वामी दयानंद सरस्वती के ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' में निहित शैक्षिक विचारों का समकालीन परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण प्रस्तुत करता है। स्वामी दयानंद ने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम न मानकर व्यक्ति के सर्वांगीण विकास (शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति का) साधन बताया है। इस अध्ययन में पाया गया कि उनके विचार आधुनिक शिक्षा के अनेक सिद्धांतों जैसे–समग्र शिक्षा, नैतिक शिक्षा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा स्त्री शिक्षा से गहराई से जुड़े हुए हैं।

उन्होंने अंधविश्वास, रूढ़िवादिता एवं सामाजिक कुरीतियों का विरोध करते हुए तर्क, विवेक और सत्य की खोज पर बल दिया, जो आज के ज्ञान–आधारित समाज में अत्यंत प्रासंगिक है। सत्यार्थ प्रकाश में मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा, अनुशासन, ब्रह्मचर्य तथा चरित्र–निर्माण को शिक्षा के प्रमुख आधार के रूप में स्वीकार किया गया है। वर्तमान शिक्षा नीति (NEP 2020) में भी इन सिद्धांतों की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि स्वामी दयानंद सरस्वती के शैक्षिक विचार समयातीत हैं और वर्तमान युग में गुणवत्तापूर्ण, मूल्य–आधारित एवं सामाजिक रूप से उत्तरदायी शिक्षा प्रणाली के निर्माण में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

## 1. प्रस्तावना (Introduction)

महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती (1824–1883) एक क्रांतिकारी विचारक, समाज सुधारक और आर्य समाज के संस्थापक थे। उनके द्वारा रचित 'सत्यार्थ प्रकाश' न केवल एक धार्मिक ग्रंथ है, बल्कि शिक्षा, राजनीति और समाज सुधार का एक व्यापक मार्गदर्शक भी है। वर्तमान विश्व में युद्ध, आतंकवाद, मानसिक तनाव और मानवीय मूल्यों के ह्रास की स्थितियां (जैसे रूस–यूक्रेन या मध्य पूर्व संकट) विद्यमान हैं। ऐसी स्थिति में, सत्यार्थ प्रकाश में निहित शैक्षिक विचार, जो चरित्र निर्माण, नैतिकता, और आत्मसंयम पर जोर देते हैं, अत्यधिक प्रासंगिक हो जाते हैं।

## 2. तकनीकी शब्दावली :

स्वामी दयानंद सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश निहित शैक्षिक विचार, वर्तमान युग, उपादेयता।

**3. जीवन परिचय :**

स्वामी दयानन्द का जन्म'' 12 फरवरी सन् 1824 में गुजरात के काठियावाड़ की मौरवी रियासत के टंकारा कस्बे में एक अत्यन्त धार्मिक ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। इनके पिता श्री कर्सन जी त्रिवेदी सामवेदी और औदीच्य ब्राह्मण श्री लालजी के पुत्र थे और शिवोपासक थे। बचपन मे दयानन्द जी का नाम 'मूलजी' अथवा 'मूलशंकर' था। इनकी माता का नाम अमृता बाई था। 30 अक्टूबर 1883 को दीपावली के दिन इस महान तपस्वी, ऋषि, योगी व समाज सुधारक की मृत्यु हो गयी। स्वामी जी ने अपने जीवन के 59 वर्षो तक देशवासियों को देशप्रेम, राष्ट्रीय एकता तथा स्वराज्य पाठ पढ़ाया तथा समाज मे फैले हुए अंधविश्वासों व कुरीतियों का दमन करते हुए अपना सर्वस्व देश हित में बलिदान कर दिया। आज भी स्वामी जी देशवासियों के ह्रदय मे एक प्रेरणादयाक महापुरूष व शिक्षाशास्त्री के रूप में जिंदा है।

**4. सत्यार्थ प्रकाश में निहित मुख्य शैक्षिक विचार :**

स्वामी दयानंद ने शिक्षा को चरित्र निर्माण का साधन माना है, न कि केवल साक्षरता का।

- **सर्वांगीण विकास** :– शिक्षा का उद्देश्य शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास करना है।
- **ब्रह्मचर्य का पालन** :– उन्होंने शिक्षा प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य (अनुशासन और आत्मसंयम) को अनिवार्य माना।
- **अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा** :– स्वामी जी ने राज्य और माता–पिता को सभी बच्चों (लड़के–लड़कियों) के लिए शिक्षा अनिवार्य करने पर जोर दिया।
- **मूल्य-आधारित शिक्षा** :– शिक्षा को नैतिकता, सद्भावना और सेवा के संस्कारों से युक्त होना चाहिए।
- **वेदों की ओर लौटो** :– उन्होंने वैदिक ज्ञान को विज्ञान के साथ जोड़कर, तर्कसंगत शिक्षा का समर्थन किया।

**5. वर्तमान युद्ध की परिस्थितियां :**

वर्तमान में विश्व 'युद्धजन्य' स्थितियों से जूझ रहा है –

- **हिंसा और रक्तपात** :– राष्ट्रों के बीच संघर्ष।
- **मानवीय मूल्यों का ह्रास** :– स्वार्थ, घृणा और अविश्वास में वृद्धि।
- **अशांति और भय** :– परमाणु युद्ध का खतरा और असुरक्षा का माहौल।

**6. वर्तमान युद्धजन्य परिस्थितियों में उपादेयता :**

सत्यार्थ प्रकाश के शैक्षिक सिद्धांत इन विषम परिस्थितियों में निम्नलिखित तरीकों से उपादेय (उपयोगी) हैं –

- **युद्धोन्माद को कम करना** :– स्वामी दयानंद जी ने ''सत्य को स्वीकार करने और असत्य को त्यागने'' पर बल दिया है। युद्ध अक्सर गलत सूचनाओं और असत्य पर आधारित होते हैं। सत्यार्थ प्रकाश का तार्किक शिक्षा दृष्टिकोण युवाओं को युद्धोन्माद से बचाकर, शांतिपूर्ण संवाद की ओर प्रेरित कर सकता है।
- **नैतिक मूल्यों की स्थापना** :– युद्ध में अमानवीय कृत्य सामान्य हो जाते हैं। सत्यार्थ प्रकाश में निहित 'यम–नियम' (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) का पालन करने वाली शिक्षा, मानव मात्र के प्रति दया और प्रेम विकसित करती है, जो हिंसा को रोकने का सबसे प्रभावी हथियार है।

- **'विश्वबंधुत्व' की भावना :–** स्वामी जी ने वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना के साथ 'आर्य' (श्रेष्ठ) समाज का निर्माण करने की बात की थी, जो द्वेष को दूर कर विश्व में प्रेम और शांति स्थापित करने का उद्देश्य रखता है। यह युद्ध की मानसिकता को 'अविद्या' (अज्ञानता) मानती है।
- **आत्मसंयम और चरित्र निर्माण :–** युद्ध के माहौल में युवा अक्सर अनैतिक कार्यों की ओर प्रवृत्त होते हैं। सत्यार्थ प्रकाश में निहित ब्रह्मचर्य शिक्षा, युवाओं को मानसिक रूप से मजबूत, अनुशासित और चरित्रवान बनाती है, जिससे वे विध्वंसक शक्तियों के चंगुल में नहीं फंसते।
- **स्त्री शिक्षा और सशक्तिकरण :–** युद्ध में महिलाएं और बच्चे सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। स्वामी जी ने समानता के आधार पर स्त्री–शिक्षा का पुरजोर समर्थन किया था, जो युद्ध जैसी स्थितियों में समाज को लचीला बनाती है।

**निष्कर्ष :**

स्वामी दयानंद सरस्वती के 'सत्यार्थ प्रकाश' में निहित शिक्षा दर्शन केवल 19वीं सदी के लिए नहीं, बल्कि 21वीं सदी के संघर्षपूर्ण समय के लिए भी अत्यंत प्रासंगिक है। उनके विचार युद्ध, घृणा और स्वार्थ की जगह शिक्षा के माध्यम से प्रेम, तर्क और नैतिकता को स्थापित करते हैं। वर्तमान समय की मांग है कि हम आधुनिक तकनीकी शिक्षा के साथ–साथ सत्यार्थ प्रकाश में निहित 'वेदों की ओर लौटो' के संदेश को अपनाएं, ताकि एक शांतिपूर्ण और समृद्ध विश्व का निर्माण हो सके।

**सन्दर्भ ग्रंथ सूची :**


1. डॉ. ताराचन्द, ''भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास'', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा संस्करण द्वितीय खण्ड, पृ.सं. 373
2. डॉ. वर्मा विश्वनाथ प्रसाद, ''आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन'' लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, संस्करण 1975, पृ.सं. 40, 41, 42
3. महर्षि सरस्वती दयानन्द ''सत्यार्थ प्रकाश'' आर्श साहित्य प्रचार ट्रस्ट, नई दिल्ली, संस्करण 2008, पृ. सं. 258
4. प्रो. चतुर्वेदी मधुकर श्याम ''प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक'' कॉलेज बुक हाउस, जयपुर, संस्करण 2017, पृ. सं. 170–171
5. अथैया मधुर ''स्वामी दयानन्द सरस्वती'' ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली, पृ. सं. 88–89
6. श्रीमती गुप्ता पुष्पा, ''सत्यार्थ प्रकाश एवं सरल व्याख्या'' वैदिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2022, पृ. सं. 6–8
7. भारतीय भवानी लाल, ''वेदाशंकर हरिदत्त'' आर्य समाज का इतिहास'' आर्य स्वाध्याय केन्द्र, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1986, पृ. सं. 219
8. गुप्त विश्व प्रकाश, गुप्त मोहिनी, ''स्वामी दयानन्द (व्यक्ति और विचार) राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2002, पृ.सं. 169
9. नन्द सत्येन्द्र प्रकाश ''महर्षि दयानन्द सरस्वती'' (जीवन, कार्य, दर्शन) आलोक प्रकाशन, पाठन कोट, संस्करण 2010, पृ. सं. 38
10. www.vskgujart.com


ई–मेल : preetimeena@gmail.com, ई–मेल : thorimanju82@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642
**Bohal Shodh Manjusha** ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 178-181
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# समकालीन हिंदी कहानियों में वर्णित वृद्ध विमर्श की परिकल्पना

**डॉ. नीतू शर्मा**
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

मानव जीवन में साहित्य का विशेष महत्त्व है क्योंकि वह समाज का यथार्थ वर्णन करता है। साहित्य के माध्यम से ही सदैव समाज में घटित घटनाओं, परिस्थितियों, प्रवृतियों आदि को वर्णित किया जाता है। साहित्य किसी समाज की आधारशिला होता है। साहित्य के बल पर सामाजिक परंपराओं और समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित होता है। समकालीन हिंदी साहित्य में क्रमशः दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, स्त्री विमर्श, किन्नर विमर्श के बाद आज वृद्ध विमर्श के स्वर गूँजने लगे हैं। वर्तमान समय में सर्वत्र युवा पीढ़ी का वर्चस्व है। इस दृष्टि से यहाँ वृद्ध विमर्श पर चर्चा करना सर्वथा उचित है।

वस्तुतः वृद्धावस्था एक धीरे–धीरे आने वाली एक ऐसी अवस्था है जो कि स्वाभाविक और प्राकृतिक घटना मानी जाती है। 'वृद्ध' शब्द का शाब्दिक अर्थ है पका हुआ अर्थात् परिपक्व। 'अंग्रेजी–हिंदी कोश' के अनुसार "वृद्ध शब्द व्यसक शब्द का हिंदी पर्याय माना जाता है। वयस्क का अर्थ–बूढ़ा, वृद्ध, पुराना आदि होता है।"[1] प्रत्येक मनुष्य के जीवन में शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था के बाद वृद्धावस्था आती है। शैवावस्था में बच्चा दूसरों पर यानि घरवालों पर निर्भर रहता है। किशोरावस्था में वह जोश, ऊर्जा शक्ति आदि से भरपूर होता है। प्रौढ़ावस्था में वह अपनी जिम्मेदारियों को निभाता है, पूरा करता है और धीरे–धीरे वृद्धावस्था तक आते आते मानव शरीर शिथिल हो जाता है। इस विवशता के कारण ही व्यक्ति स्वयं को कमजोर तथा जीवन से हारा हुआ महसूस करता है। लेकिन वृद्ध व्यक्ति के पास ज्ञान और अनुभवों का संचित भंडार होता है। अपने असीम ज्ञान के भंडार से वह हमें सभ्यता, संस्कृति, आचरण, सदव्यवहार आदि का ज्ञान करवा सकता है। वृद्ध व्यक्ति को यदि उचित सम्मान, आदर सत्कार मिले तो वह समाज को नित नई गति दिशा प्रदान कर सकता है। वृद्धावस्था वास्तव में हमारे जीवन की एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें उम्र मानव जीवन की औसत काल के समीप या उससे अधिक भी हो जाती है।

वृद्ध विमर्श से अभिप्रायः है वृद्धावस्था की परिस्थितियों, घटनाओं आदि का चिंतन करना अर्थात् वृद्धावस्था की समस्याओं को समझते हुए उनके सर्वोचित समाधान अथवा उपाए बताना। समकालीन दौर में इस पर चिंतन करना नितांत आवश्यक है क्योंकि आज हम जिंदगी की दौड़ में इतने व्यस्त हो गए हैं कि हमारे पास बुजुर्गों को समझने का समय ही नहीं है। जिसका मूल कारण है संयुक्त परिवारों का टूटना। इसकी वजह से हम न तो बुजुर्गों की की ओर अधिक ध्यान दे पा रहें हैं और न ही उनके तजुर्बे अर्थात् अनुभव एवं ज्ञान का भरपूर लाभ

उठा पा रहे हैं। व्यावसायिक जीवन की व्यस्तता के कारण हमारे पास पुरानी और नई पीढ़ी में सामंजस्य स्थापित करने का वक्त ही नहीं है। इसके कारण आज हमारी पीढ़ियों के बीच अंतर बढ़ता जा रहा है। यह गहरी होती खाई हमें अपनी संस्कृति से भी दूर करती जा रही है। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि हम अपने बुजुर्गों के ज्ञान के भंडार और अनुभव को दू सरी पीढ़ी में सही ढंग से हस्तांतरित नहीं कर पा रहें हैं क्योंकि वृद्धावस्था बचपन से जवानी और जवानी से बुढ़ापे तक के अनुभवों तथा गुणों का पुंज या खान होती है। परंतु एकल परिवारों के कारण हमारे समाज से सभ्यता और संस्कृति का धीरे धीरे लोप हो रहा है। वर्तमान समय में समाज वृद्धावस्था को एक बड़ी समस्या के रूप में देखता है और उन्हें एक बोझ मानता है। समाज में उचित सम्मान नहीं मिलने के कारण वृद्ध व्यक्तियों का जीवन निरंतर घोर निराशा की ओर अग्रसर होता जा रहा है।

साधारणतः साहित्य में वृद्ध विमर्श प्राचीन समय से लेकर आज तक खोजा जा सकता है। परंतु आधुनिक साहित्य में समाज में वृद्धों की बदलती हुई स्थिति तथा उनकी सामाजिक समस्याओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। वृद्ध व्यक्ति जो कभी अपने पूरे परिवार का ध्यान रखता था, बोझ उठाता था, वह आज स्वयं को कमजोर और लाचार समझने लगा है। आधुनिक हिंदी कथा साहित्य में कहानीकारों ने इस समस्या पर विचार करते हुए वृद्ध विमर्श को अपनी कहानियों के केंद्र में रखा है। वृद्ध व्यक्तियों के जीवन की चिंता और उनकी दुविधाओं को अपने शब्दों में व्यक्त किया है ताकि युवा पीढ़ी वृद्धों की मनोदशा को समझकर उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार कर सके। भारतीय हिंदी साहित्य में वृद्धों को केन्द्र में रखकर काफी कहानियाँ लिखीं गई हैं और उनमें वृद्धों की मनोदशा को रेखांकित करने करने का पर्याप्त प्रयास भी किया गया हैं। जीवनभर अर्थात् उम्रभर के संघर्षों और कष्टों के बाद वृद्ध शारीरिक और मानसिक स्तर पर कमजोर हो जाते हैं और वे अपने बच्चों के आश्रय के आकांक्षी बन जाते हैं परंतु जब यह आश्रय उनसे छीनता है किसी भी वजह से तो तब उनके हृदय की बेबसी, उनकी आह बन जाती है। हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकार मुंशी प्रेमचंद ने वृद्धावस्था को बाल्यावस्था का पुनरागमन माना है जिस प्रकार बालक सामाजिक चिंताओं से मुक्त भोजन का अभिलाषी होता है उसी प्रकार वृद्धों में भी अमूमन सभी अभिलाषाओं से परे जिह्वा स्वाद की अभिलाषा विशेष हो जाती है। इसकी पूर्ति न होने पर उनकी दुर्बलता रोने–कुढ़ने तक को विवश करती है। 'बूढ़ी काकी' कहानी में प्रेमचंद ने इसका बड़ा ही हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। उदाहरणस्वरूप "जिह्वा स्वाद के सिवा और कोई चेष्टा शेष न थी और न अपने कष्टों की ओर ध्यान आकर्षित करने का रोने के अतिरिक्त कोई दूसरा सहारा ही। समस्त इन्द्रियाँ–नेत्र, हाथ और पैर जवाब दे चुके थे।"[2]

आज मनुष्य को संपत्ति लोभ किस कदर संकीर्ण और स्वार्थी बना देता है जब मन की चंचलता विवेक पर हावी हो जाती है और व्यक्ति उचित तथा अनुचित में अंतर ही नहीं देख पाता है क्योंकि जहाँ एक ओर बूढ़ी काकी अपनी संपति अपने भतीजे 'बुद्धिराम को दे देती है। वहीं दूसरी ओर खाला भी अपनी सम्पत्ति 'जुम्मन शेख' को वसीयत कर देती है। जिसके परिणामस्वरूप दोनों ही भरपेट भोजन के लिए तरस जाती हैं। यह अमानवीय व्यवहार युवा पीढ़ी की सम्पत्ति लोलुपता का ही परिणाम है जिसमे वे असंवेदनशील हो जाते हैं और उसी थाली में छेद करने को तैयार हो जाते हैं, जिसमें वे भोजन करते हैं। प्रेमचंद जी यहाँ बतलाते हैं कि युवाओं का विवेक कैसे खो जाता है और उनका विवेकहीन मस्तिष्क कड़वे और अमर्यादित शब्दों के प्रयोग को भी रोक नहीं पाता है। इस संदर्भ में प्रस्तुत कहानी में बुधिराम कहता है–"बुढ़िया न जाने कब तक जिएगी। दो–तीन बीघे ऊसर

क्या दे दिया, मोल ले लिया है। जितना रुपया इस पेट में झोंक चुके, उतने से तो अब तक गाँव मोल ले लेते।"[3]

इसी प्रकार भीष्म साहनी रचित 'चीफ की दावत' कालजयी कहानी हिंदी कथा साहित्य में चर्चित वृद्ध विमर्श के विविध आयामों को अपने कलेवर में समेटती है। अतः'चीफ की दावत 'कहानी में वृद्ध विमर्श की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है। यहाँ अपनी माँ के प्रति मिस्टर शामनाथ का जो वस्तुवादी दृष्टिकोण रहता है वह आज के समाज की घृणित सच्चाई का बखान करता है क्योंकि इस कहानी में वृद्ध माँ अपने पुत्र के लिए एक समस्या बन चुकी है। उसके दफ्तर का चीफ आज उसके घर रात्रि भोजन के लिए आ रहा है ऐसी स्थिति में माँ के रात के किसी भी कृत्य से मसलन खर्राटे लेने से, उकड़ूँ बैठने से, बेतरतीब ढंग से कपड़े पहनने से चीफ के सामने मिस्टर शामनाथ की इज्जत की मिट्टी पलीत हो सकती थी। वे समस्या का निदान करते हुए कहते हैं –"और माँ हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ जाएँ, तो तुम घुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना।"[4] प्रस्तुत गद्यांश से स्पष्ट होता है कि आज की पीढ़ी पिछली पीढ़ी के साथ संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ी नहीं दिखती। कहानी में हर स्तर पर माँ की पीड़ा, संत्रास, दहशत और भय परिलक्षित होता है। जो माँ चीफ के आने से पहले तक समस्या थी वही तब जरूरी बन जाती है जब चीफ को उसकी बनाई फुलकारी पसंद आ जाती है। वस्तुतः आत्मीय रिस्तों के बीच हो रहे बिखराव को भीष्म साहनी ने इस कहानी में यथार्थ रूप में वर्णित किया है। माँ की पीड़ा की चरमपरिणती निम्नलिखित गद्यांश में मुखर हुई है–"नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहु के साथ जैसा मन चाहो, रहो। मैंने खा पहन लिया। अब यहाँ क्या करूँगी। जो थोड़े दिन जिंदगी के बाकी हैं, भगवान का नाम लूँगी। तुम मुझे हरिद्वार भेज दो।"[5] वृद्ध माँ की व्यथा और दर्द की इन पंक्तियों में पराकाष्ठा नजर आती है। वह पुत्र जिसकी पढ़ाई के लिए उसने अपने गहने तक बेच दिए, बस इस आस या उम्मीद में कि यही तो बुढ़ापे की लाठी यानि सहारा बनेगा। ठीक इसी प्रकार उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' के गजाधर बाबू पैंतीस साल की रेलवे की नौकरी से रिटायर्ड होने के उपरांत जब अपने घर वापस आते हैं तो हम देखते हैं कि पहले जब वह घर आते थे तो काफी खुुश रहते थे परंतु अब अपने ही घर में रिटायर्ड होने के उपरांत वह सम्मान और स्नेह नहीं मिल पाता है। जिस जीवन की उन्होंने कल्पना की थी वह सब उन्हें यथार्थ रूप में मिथ्या सा प्रतीत होता है और अंततः गजाधर बाबू दूसरी नौकरी ढूंढ़कर घर से चले जाते हैं। एक वृद्ध पिता की मनोव्यथा का परिचय हमें इस कहानी में मिलता है, अपनी सारी क्षमता, संपूर्ण समर्पण परिवार और समाज को दे देता है फिर भी वह अकेला और उपेक्षित–सा रह जाता है। उसके अकेलेपन को दूर करने की कोई चेष्टा भी नहीं करता है।[6]

आगे चलकर चित्रा मुदगल ने भी अपनी 'गेंद' कहानी में वृद्धों के जीवन में आ रही उपेक्षा से उत्पन्न पीड़ा का मार्मिक चित्रण किया है।

आज के भौतिकतावादी युग में हर मनुष्य विकास के पीछे दौड़ रहा है। उसकी यह दौड़ कभी न समाप्त होने वाली दौड़ है। इस दौड़ में वह स्वयं को आधुनिक मानकर आर्थिक समृद्धि की लालसाओं में वह अपने परिवार से कटता जा रहा है, यह आज के युग की विडंबना है। इस भौतिकतावादी युग में वृद्ध विमर्श को अभिव्यक्त करने वाली यह 'गेंद' कहानी नौकरी से रिटायर्ड सचदेवा के जीवन की पीड़ा को बयान करती है। सचदेवा नौकरी से रिटायर्ड एक वृद्ध पिता है, जिनका पुत्र नौकरी के लिए इंग्लैंड चला गया और वहीं शादी करके बस गया। पिता के अंतिम वर्ष ठीक से बीते इसलिये उन्होंने पिता की व्यवस्था वृद्धाश्रम में तो कर दी

लेकिन पिता के प्रति अपने पारिवारिक स्नेह और भावनिक साहचर्य को लेकर कभी सोचा नहीं। वृद्धाश्रम में बिस्तर से लगे बुजुर्गों को टट्टी, पेशाब कराने वाले मनेसुर का यह कहना कि– "एक तो हम कब्र में पाँव दिये इन बूढ़े–बुढ़ियों को माई–बाप कबूल कर तन–मन से इनकी सेवा–टहल करें, ऊपर से इनका भस्मासुरी क्रोध भी झेलें। कोई पूछे इनसे, तुम्हारे अपने जाये तो तुम्हारा हगना–मूतना उठाने को राजी नहीं हैं और जो उठा रहे हैं उन्हीं को रेतने को तुम तरिया रहे हो?"[7] उक्त गद्यांश में वृद्धों की यथार्थ स्थिति को दर्शाया गया है। चित्रा मुदगल ने प्रस्तुत कहानी में भौतिकतावादी युग की चेपट में आयी मानवीय संवेदना को अभिव्यक्त किया है।

सारांशतः कहा जा सकता है कि वृद्ध विमर्श आज के युग की आवश्यकता है क्योंकि आज वृद्धों को बोझ मानकर वृद्धाश्रमों में छोड़ दिया जाता है। साहित्य के क्षेत्र में वृद्ध और युवा आमने–सामने की अपेक्षा सह–अस्तित्व के परिदृश्य में होने चाहिए। वृद्ध विमर्श को आधार बनाकर हम समाज में व्याप्त वृद्धों की समस्याओं की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित कर सकते हैं। वृद्ध व्यक्ति को जीवन की निराशा में न धकेल कर उन्हें जीवन को उत्साह से जीने का अधिकार दिया जा सकता है। वैसे तो वृद्ध विमर्श प्रारंभ से ही साहित्य में शामिल रहा है, आज भी इसका प्रयोग साहित्य में हो रहा है। वृद्ध विमर्श का साहित्य में प्रयोग वृद्धों के लिए बहुत सम्मान का मार्ग है तथा युवा पीढ़ी के लिए उसकी सफलता का मार्ग है। वृद्धों के अनुभवों एवं संस्कारों से युवावर्ग के जीवन मूल्यों में हो रहे विघटन को रोका जा सकता है। यदि वृद्ध विमर्श पर और भी अधिक ध्यान दिया जाए तो संभव है कि वृद्धों के जीवन की सभी समस्याओं को उजागर करके लोगों के मन में उनके प्रति खोया हुआ प्रेम, सम्मान और विश्वास पुनः जागृत हो जाए। संभव है कि इससे लुप्त होते जा रहे मानव मूल्य भी हमारे समाज में फिर से स्थापित हो सकेंगे। जिससे भारतीय समाज निरंतर उन्नति करेगा और खुशहाल रहेगा।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**


1. डॉ. हरदेव बाहरी, 'लोकभारती राजभाषा शब्दकोश' (हिंदी–अंग्रेजी), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 6, 2008, पृष्ठ संख्या–466
2. प्रेमचंद, मानसरोवर, भाग–8 ,2005, पृष्ठ संख्या –99
3. प्रेमचंद, मानसरोवर, भाग–7, 2005, पृष्ठ संख्या–98
4. भीष्म साहनी, प्रतिनिधि कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, पन्द्रहवाँ संस्करण, 2023, पृष्ठ संख्या–16
5. उपरिवत्, पृष्ठ संख्या–22
6. उषा प्रियंवदा, वापसी, कथा–सरित डॉ. लक्ष्मण प्रसाद सिन्हा, जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008, पृष्ठ संख्या–107–112
7. संपादक डॉ. बालाजी भूरे, डॉ. व्यंकट पाटिल–कहानी संकलन, संस्करण, दिव्य डिट्रीब्यूटर्स, कानपुर, 2019, पृष्ठ संख्या–69

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
April 2026 Page No. : 182-192

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भारतीय साहित्य में अनुवाद की भूमिका

**लेफ्टिनेंट (डॉ.) शबाना हबीब**
सह.आचार्या, राजकीय महिला महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम।

**शोध सार :**

भारतीय साहित्य केवल एक भाषा का नहीं, बल्कि विभिन्न भारतीय भाषाओं में रचित साहित्य का एक ऐसा समुच्चय है जो भारतीय समाज की अंतःचेतना और बहुआयामी स्वरूप को व्यक्त करता है। भारत एक बहुभाषिक देश है जहाँ अनुवाद ही वह एकमात्र प्रभावी माध्यम है जो भाषाई विविधता के बीच सेतु का कार्य करता है और सांस्कृतिक व राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाता है।

आलेख में प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर मध्यकालीन भक्ति आंदोलन और आधुनिक नवजागरण काल तक अनुवाद के ऐतिहासिक महत्त्व को रेखांकित किया गया है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि' और शरतचंद्र की कृतियों के उदाहरणों के माध्यम से अनुवाद की वैश्विक व क्षेत्रीय शक्ति को दर्शाया गया है। अंततः, यह शोध अनुवाद की प्रक्रिया में आने वाली चुनौतियों, जैसे – संस्थागत प्रयासों का अभाव और व्यावसायिक दृष्टिकोण, पर प्रकाश डालते हुए इसे भारतीय अस्मिता की पहचान के लिए अनिवार्य उपकरण सिद्ध करता है।

**बीज शब्द :**

भारतीय साहित्य, अनुवाद, बहुभाषिकता, सांस्कृतिक एकता, नवजागरण, साहित्य अकादमी, अंतर्संबद्धता।

**मूल आलेख :**

भारतीय साहित्य की मूलभूत अवधारणा भारत में प्राचीन काल से विकसित एवं पल्लवित विभिन्न भाषाओं के सामूहिक स्वरूप से निर्मित हुई है। 'भारतीय साहित्य' शब्द का आशय भारत की सभी भाषाओं में रचित लिखित तथा मौखिक साहित्य की व्यापक परंपरा से है। संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त 22 भाषाओं का साहित्य मिलकर भारतीय साहित्य का एक समेकित रूप प्रस्तुत करता है।

वस्तुतः भारतीय साहित्य एक ऐसा समुच्चय है, जिसमें विविध भारतीय भाषाओं में सृजित साहित्यिक कृतियाँ एक साथ संगठित रूप में विद्यमान हैं। यह केवल भाषाई विविधता का परिचायक नहीं है, बल्कि भारतीय समाज के बहुआयामी स्वरूप 'राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आंचलिक' का सजीव चित्रण भी करता है। अतः वही साहित्य भारतीय साहित्य की श्रेणी में आता है, जो भारतीय समाज और उसकी अंतःचेतना को अभिव्यक्त करता है।

भारतीयता की समग्र अभिव्यक्ति ही भारतीय साहित्य की पहचान है। इस दृष्टि से वह साहित्य भी भारतीय साहित्य के अंतर्गत माना जाएगा, जो विदेशों में रहते हुए भारतीय जीवन, संस्कृति और समाज की

अंतर्धारा को प्रस्तुत करता है। साथ ही, केवल संविधान में उल्लिखित भाषाएँ ही नहीं, बल्कि विभिन्न भारतीय बोलियों और उपभाषाओं में रचित साहित्य भी भारतीय साहित्य के व्यापक दायरे में सम्मिलित है।

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में अंग्रेजी भाषा का उल्लेख नहीं है, तथापि भारतीय लेखकों द्वारा रचित अंग्रेजी साहित्य भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग बन चुका है। भारतीय अंग्रेजी साहित्य ने अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित की है और इसे वैश्विक स्तर पर व्यापक लोकप्रियता प्राप्त हुई है। इस प्रकार, भारतीय साहित्य के अंतर्गत न केवल भारतीय भाषाओं का साहित्य, बल्कि भारतीय अंग्रेजी साहित्य भी समाविष्ट हो गया है।

भारतीय साहित्य की एकता को सुदृढ़ एवं प्रमाणित करने के उद्देश्य से सन् 1954 में साहित्य अकादमी की स्थापना की गई। इस संदर्भ में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि "भारतीय साहित्य एक है, यद्यपि वह अनेक भाषाओं में लिखा गया है।" इसी प्रकार डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी ने अपनी कृति Languages and Literatures of India में भारतीय साहित्य के लिए 'बहुवचन' शब्द का प्रयोग करते हुए इसकी बहुभाषिक एवं बहुआयामी प्रकृति को रेखांकित किया है।

सामान्यतः हम 'भारतीय भाषा' का उल्लेख एकवचन में करते हैं, किंतु वस्तुतः भारतीय भाषाओं की वास्तविकता बहुवचनात्मक है। भारतीय साहित्य में विषयवस्तु की एकता और शैली की विविधता साथ–साथ विद्यमान है। इसके अंतर्गत सांस्कृतिक विशिष्टताओं का एक व्यापक और बहुरंगी संसार तथा समृद्ध साहित्यिक परंपराओं के अनेक उदाहरण मिलते हैं। यह तथ्य निरंतर प्रतिपादित किया जाता रहा है कि भारत एक बहुविविध देश है, जहाँ अनेक जातियाँ, सभ्यताएँ, प्रदेश, धर्म और भाषाएँ सह–अस्तित्व में हैं।

भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि किसी एक क्षेत्र की साहित्यिक परंपरा दूसरे क्षेत्र की खोज का मार्ग प्रशस्त करती है। उदाहरणतः हिंदी का भक्ति काव्य हमें तमिल आलवारों की परंपरा तक ले जाता है, जिससे भारतीय साहित्य की अंतर्संबद्धता का बोध होता है। मध्यकालीन भक्ति आंदोलन इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जो 6–7वीं शताब्दी में तमिल क्षेत्र से प्रारंभ होकर कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात और राजस्थान होते हुए 13–14वीं शताब्दी में कश्मीर तक तथा 15–16वीं शताब्दी तक मध्य भारत में विस्तृत हुआ। श्री चैतन्य के प्रभाव से यह आंदोलन बंगाल, असम और मणिपुर तक फैल गया।

यह आंदोलन केवल धार्मिक ही नहीं, बल्कि एक व्यापक सांस्कृतिक नवजागरण भी था, जिसने जनमानस की चेतना को उद्वेलित किया। भक्ति साहित्य में विभिन्न भाषाओं का प्रयोग हुआ, जिससे विविध सांस्कृतिक विशेषताओं की अभिव्यक्ति संभव हुई। यद्यपि यह साहित्य विभिन्न भाषाओं में रचा गया, तथापि उसमें निहित आस्था, विश्वास, मिथक और लोकपरंपराएँ विषयवस्तु की एकता को स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं।

आधुनिक काल में भी नवजागरण की प्रक्रिया में समान प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं। जहाँ यूरोपीय नवजागरण वैज्ञानिक दृष्टि, व्यक्तिवाद और मानवतावाद से प्रेरित था, वहीं भारतीय नवजागरण में राष्ट्रवाद, समाज–सुधार और पुनरुत्थानवाद प्रमुख रहे। समाज–सुधार को केंद्र में रखकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रारंभिक उपन्यासों की रचना इसका प्रमाण है – तमिल में सैमुअल वेदनायकम पिल्लई, तेलुगु में कृष्णम्मा चेट्टी, मलयालम में चंदु मेनन, हिंदी में लाला श्रीनिवास दास तथा बांग्ला में मेरी हचिन्सन के उपन्यासों में समान सामाजिक सरोकार दृष्टिगोचर होते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्य की विभिन्न धाराएँ परस्पर अंतर्संबद्ध हैं। अतः किसी एक भाषा के साहित्य के आधार पर भारतीय साहित्य का सम्यक् अध्ययन संभव नहीं है। इस बहुभाषिक एवं बहुसांस्कृतिक विविधता को समझने और समन्वित करने का सबसे प्रभावी माध्यम 'अनुवाद' है। वास्तव में, भारतीय साहित्य की भाषिक विविधता को दूर करने तथा उसके अंतर्संबंधों को स्पष्ट करने में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण और अनिवार्य है।

भारतीय साहित्य की अवधारणा को केवल भाषा और साहित्य के पारंपरिक समीकरण के आधार पर नहीं समझा जा सकता, क्योंकि भारत मूलतः एक बहुभाषिक देश है। यहाँ अनेक भाषाएँ सह–अस्तित्व में हैं, और अनेक रचनाकार एक से अधिक भाषाओं में सृजन करते रहे हैं। इस कारण भारतीय साहित्य को किसी एक भाषा के साथ संबद्ध कर उसकी पहचान निर्धारित करना संभव नहीं है।

जब 'भारतीय साहित्य' की चर्चा की जाती है, तब वह केवल भाषाई परिप्रेक्ष्य तक सीमित नहीं रहती, बल्कि एक व्यापक भौगोलिक क्षेत्र और राजनीतिक एकता की ओर भी संकेत करती है। तथापि, भौगोलिक सीमाओं की अपेक्षा 'भारतीयता' का आदर्श अधिक महत्वपूर्ण है, जो इस साहित्य की आत्मा का निर्माण करता है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार भारत पारंपरिक अर्थों में एक 'नेशन–स्टेट' नहीं, बल्कि एक सतत राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में स्थित समाज है। इसी प्रकार रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने राष्ट्र को केवल भौतिक या भौगोलिक सत्ता न मानकर एक जीवंत सांस्कृतिक और आध्यात्मिक चेतना के रूप में देखा है। उनके अनुसार राष्ट्र 'मृण्मय' नहीं, बल्कि 'चिन्मय' सत्ता है। भारतीय राष्ट्रवाद का स्वरूप भी बहुलवाद, आध्यात्मिक परंपरा, सत्य, सहिष्णुता तथा गांधीवादी विचारधारा के साथ–साथ नेहरू के समाजवादी और गुटनिरपेक्ष दृष्टिकोण से निर्मित हुआ है।

भारतीय साहित्य की अवधारणा का एक महत्वपूर्ण आधार जनता और साहित्य के पारस्परिक संबंध में निहित है। वास्तव में, भारतीय साहित्य को केवल भाषा, भूगोल या राजनीतिक संरचना के आधार पर नहीं, बल्कि उस समाज की जन–चेतना और सांस्कृतिक अनुभवों के आधार पर समझा जाना चाहिए, जिसके बीच वह विकसित हुआ है।

भारतीयता का वास्तविक स्वरूप उसके बहुलवादी संदर्भों में ही परिलक्षित होता है। यह विविधता अंततः एक व्यापक वैचारिक एकता की ओर ले जाती है। यह एकता भाषाई न होकर वैचारिक और सांस्कृतिक है। उदाहरणस्वरूप, सम्राट अशोक के शिलालेख विभिन्न भाषाओं और बोलियों में उपलब्ध हैं, किन्तु उनमें व्यक्त बौद्ध धर्म के नैतिक और दार्शनिक आदर्श एक ही हैं।

महाकवि कालिदास के नाटक अभिज्ञानशाकुंतलम् में संस्कृत के साथ–साथ शौरसेनी, महाराष्ट्री तथा मागधी प्राकृत का प्रयोग मिलता है, किंतु इन भाषिक विविधताओं के बावजूद उसमें एक ही वैचारिक दर्शन की अभिव्यक्ति होती है – यह कि मनुष्य की आध्यात्मिक यात्रा का प्रारंभ सांसारिक अनुभवों से ही संभव होता है। इसी प्रकार विद्यापति ने अपने काव्य–विचारों को अवहट्ट, संस्कृत तथा मैथिली जैसी विभिन्न भाषाओं में व्यक्त किया है। गुरु ग्रंथ साहिब भी एक बहुभाषिक कृति है, जिसमें विविध भाषिक स्वरूपों के माध्यम से एक ही 'सत्' की अभिव्यक्ति की गई है।

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि भारत में विभिन्न भाषाओं के आश्रय से एक समृद्ध और व्यापक साहित्यिक संसार का निर्माण हुआ है। इस देश में भाषिक एवं गैर–भाषिक विविधताओं के होते हुए भी पिछले एक सहस्राब्दी में रूपकों, बिंबों, मिथकों, अनुश्रुतियों, परंपराओं और साहित्यिक मानदंडों का एक समान निकाय विकसित हुआ है। परिणामस्वरूप विभिन्न भाषाओं के साहित्य में पारस्परिक अभिसरण संभव हुआ है, जो एक ही परिवार की भाषाओं के अंतर्संबंधों की तरह प्रतीत होता है।

भारतीय साहित्य वस्तुतः अनेक भाषाओं में अभिव्यक्त भारत की सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों और उनके परिणामों का एक विशाल भंडार है। इन विविध भाषाओं में रचित विपुल साहित्य के परस्पर आदान–प्रदान के लिए एक सशक्त भाषिक उपकरण की आवश्यकता होती है। 'अनुवाद' ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा भारतीय साहित्य की समृद्ध परंपरा और समकालीन सृजनशीलता को एक–दूसरे के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है।

अनुवाद के माध्यम से भारतीय साहित्य को एकभाषिक संप्रेषणीयता से आगे बढ़ाकर द्विभाषिक अथवा बहुभाषिक संप्रेषणीयता की स्थिति में स्थापित किया जा सकता है। यह अंतरभाषिक साहित्यिक संवाद को सशक्त बनाने का सबसे प्रभावी साधन है। साहित्य के दोनों प्रमुख रूपों– सृजनात्मक साहित्य (गद्य, पद्य तथा आलोचनात्मक साहित्य) और ज्ञानात्मक साहित्य (समाज विज्ञान, मानविकी, विज्ञान, प्रबंधन, जनसंचार, वाणिज्य, प्रौद्योगिकी आदि) में अनुवाद की व्यापक संभावनाएँ निहित हैं।

इस प्रकार अनुवाद न केवल भाषिक विविधता को सेतुबंधित करता है, बल्कि विभिन्न भाषाओं के बीच उत्पन्न अलगाव को दूर कर साहित्यिक और सांस्कृतिक एकता को भी सुदृढ़ बनाता है।

भारतीय भाषाओं में रचित साहित्य का अक्षय भंडार अत्यंत व्यापक और विविधतापूर्ण है। इस विपुल साहित्य के अंतरभाषिक रूपांतरण के लिए 'अनुवाद' की प्रक्रिया ही सर्वाधिक प्रभावी और अनिवार्य साधन के रूप में स्वीकार की जाती है। अनुवाद के माध्यम से ही विभिन्न भाषाओं के मध्य विद्यमान संप्रेषणीय अवरोधों को दूर किया जा सकता है। इस दृष्टि से अनुवाद एक अपरिहार्य उपकरण है, जो भारतीय साहित्य की विषयवस्तु तथा उसके भाव–सौंदर्य के व्यापक आस्वादन को संभव बनाता है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर को उनकी प्रसिद्ध काव्यकृति गीतांजलि के उस अंग्रेजी अनुवाद के लिए, जिसे उन्होंने स्वयं बांग्ला से रूपांतरित किया था, सन् 1913 में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। यह उदाहरण अनुवाद की शक्ति और उसके वैश्विक प्रभाव को स्पष्ट रूप से प्रमाणित करता है। वस्तुतः अनुवाद की क्षमता असीम और प्रभावशील है, जो किसी भी साहित्यिक कृति को भाषाई सीमाओं से परे ले जाकर विश्व–साहित्य का अंग बना सकती है। भारतीय साहित्य में अनेक कालजयी कृतियों के अनूदित संस्करण इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि एक सशक्त और प्रामाणिक अनुवाद मूल कृति के भाव और प्रभाव को विश्वसनीय रूप में संप्रेषित कर सकता है। उदाहरणस्वरूप, शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की देवदास, चरित्रहीन, श्रीकांत तथा बिराज बहू, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का आनंदमठ, रवीन्द्रनाथ ठाकुर का गोरा और महाश्वेता देवी की जंगल के दावेदार जैसी कृतियों के अनूदित रूप इस दिशा में उल्लेखनीय और प्रामाणिक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

इस प्रकार अनुवाद न केवल भाषाओं के मध्य सेतु का कार्य करता है, बल्कि भारतीय साहित्य की वैश्विक पहचान को भी सुदृढ़ बनाता है।

**भारतीय साहित्य के अनुवाद की आवश्यकता :**

भारतीय साहित्य की बहुभाषिक एवं बहुसांस्कृतिक प्रकृति को देखते हुए अनुवाद की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य हो जाती है। अनुवाद न केवल भाषाई संप्रेषण का माध्यम है, बल्कि यह सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय एकता के सुदृढ़ीकरण का भी प्रभावी साधन है। भारतीय साहित्य के संदर्भ में अनुवाद की आवश्यकता को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है :–

1. सांस्कृतिक चेतना के जागरण हेतु।
2. देश में सांस्कृतिक एकता के प्रसार हेतु।
3. राष्ट्रीय चेतना के विकास के लिए।
4. विभिन्न प्रान्तों और भाषाओं के प्रति संवेदनशीलता एवं सजगता उत्पन्न करने के लिए।
5. विविध भाषा–समुदायों के मध्य भावनात्मक एकता स्थापित करने के लिए।
6. सांस्कृतिक आदान–प्रदान को प्रोत्साहित करने के लिए।
7. विभिन्न क्षेत्रों की लोकसंस्कृति और सामाजिक संस्कारों के ज्ञान के लिए।
8. भारतीय साहित्य में निहित मूलभूत एकता के तत्वों से परिचित कराने के लिए।
9. गौरवशाली साहित्यिक परंपराओं के संरक्षण एवं पुनर्जीवन के लिए।
10. समकालीन संदर्भ में प्रांतीय विभेदों को कम करने के लिए।
11. समाज के विभिन्न वर्गों के बीच स्नेह, सौहार्द्र और समन्वय की भावना विकसित करने के लिए।

अनुवाद के माध्यम से वर्तमान युवा पीढ़ी को भारतीय साहित्य की अमूल्य धरोहर से परिचित कराया जा सकता है, जो आज की आवश्यकता भी है और सांस्कृतिक उत्तरदायित्व भी। भारतीय साहित्य में संस्कृत से लेकर आधुनिक भारतीय भाषाओं तक की समृद्ध साहित्यिक परंपराएँ समाहित हैं। इसमें प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर समकालीन रचनाओं तक गद्य और पद्य की सभी विधाओं का व्यापक समावेश है।

भारतीय साहित्य केवल संविधान में उल्लिखित भाषाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि अंग्रेजी, उर्दू और फारसी जैसी भाषाओं में रचित साहित्य भी इसके अंतर्गत आता है। संस्कृत में रचित वेद, उपनिषद, आगम, ब्राह्मण ग्रंथ तथा अन्य दार्शनिक और धार्मिक साहित्य आज हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में मुख्यतः अनुवाद के माध्यम से ही उपलब्ध हैं। इसके फलस्वरूप वे पाठक, जो संस्कृत से परिचित नहीं हैं, भी इन अमूल्य ग्रंथों से ज्ञानार्जन कर पा रहे हैं।

वस्तुतः वैदिक साहित्य, पुराण, निगम–आगम और अन्य ज्ञानपरक ग्रंथों का व्यापक प्रसार अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुआ है। यदि अनुवाद न होता, तो इस प्रकार का ज्ञान–प्रसार संभव नहीं हो पाता। अनुवाद ने न केवल भारतीय समाज को अपनी परंपराओं से जोड़ा है, बल्कि भारतीय साहित्य की अमूल्य धरोहर को वैश्विक स्तर पर भी पहुँचाया है। विदेशी भाषाओं में हुए अनुवादों के माध्यम से विश्व समुदाय भारतीय संस्कृति, दर्शन और साहित्य की गहराइयों से परिचित हो सका है। इस प्रकार अनुवाद भारतीय साहित्य के वैश्विक प्रसार और सांस्कृतिक संवाद का सशक्त माध्यम सिद्ध होता है।

मध्यकालीन भारतीय साहित्य का व्यापक प्रचार–प्रसार मुख्यतः अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुआ। भक्ति तथा संत साहित्य, जो विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय भाषाओं में रचा गया था, अनुवाद की प्रक्रिया के द्वारा देश

के विभिन्न भागों में प्रसारित हुआ। भक्ति साहित्य का एक बड़ा भाग अलिखित अथवा जनश्रुति पर आधारित रहा है, जिसकी परंपरा मौखिक थीय ऐसे साहित्य का व्यापक प्रसार विभिन्न भाषाओं में अनूदित रूपों के माध्यम से ही संभव हो सका।

उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम भारत के संतों एवं आचार्यों द्वारा प्रतिपादित दार्शनिक सिद्धांतों का विस्तार और प्रभाव भी अनुवाद के माध्यम से ही व्यापक स्तर पर स्थापित हुआ। यद्यपि इन विचारों में वैचारिक समानता विद्यमान थी, तथापि भाषिक विविधता के कारण इनके आदान–प्रदान में बाधाएँ उत्पन्न होती थीं। इस संप्रेषणीय अवरोध को अनुवाद–प्रक्रिया ने प्रभावी रूप से दूर किया।

इसी के परिणामस्वरूप कबीर, जायसी, सूरदास, तुलसीदास और मीराबाई जैसे संत–कवियों के पद, जो मूलतः अपनी–अपनी भाषाओं में रचे गए और गेय परंपरा का हिस्सा थे, अन्य भारतीय भाषाओं में भी उपलब्ध हुए और समान रूप से लोकप्रिय बने। इसी प्रकार दक्षिण भारत के अन्नमाचार्य, त्यागराज, पोतना, वेमना, आंडाल, अक्का महादेवी, मोल्ल और अव्वैयार जैसे संतों तथा आलवारों के संकीर्तन, तमिल संगम साहित्य आदि की प्रतिष्ठा भी अनुवाद के माध्यम से सर्वभारतीय स्तर पर स्थापित हुई।

दार्शनिक परंपरा के संदर्भ में रामानुजाचार्य, रामानंद, वल्लभाचार्य, शंकराचार्य, मध्वाचार्य और निम्बार्काचार्य जैसे आचार्यों के विचार भी अनुवाद के माध्यम से ही पूरे भारत में ग्राह्य और प्रभावी बन सके। इसी प्रकार उत्तर भारत के संतों और महात्माओं के संदेश दक्षिण भारत तक अनुवाद के द्वारा ही पहुँचे।

उपनिषदों के दार्शनिक विचार उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवाहित होकर शंकराचार्य के अद्वैतवाद तथा रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैतवाद के रूप में विकसित हुए, वहीं भक्ति आंदोलन ने दक्षिण से उत्तर की ओर अपना विस्तार किया। कश्मीर का शैव सिद्धांत तमिल क्षेत्र में प्रतिष्ठित हुआ, जो इस अंतरभाषिक संवाद का एक सशक्त उदाहरण है।

आधुनिक संदर्भ में भी अनुवाद की यह भूमिका उतनी ही महत्वपूर्ण बनी हुई है। महात्मा गांधी के सत्य और अहिंसा के प्रयोगों की गूँज अनुवाद के माध्यम से पूरे देश में फैल सकी। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रकृति और मानव–सौंदर्य संबंधी अवधारणाएँ सर्वभारतीय चेतना का हिस्सा बनीं। फकीर मोहन सेनापति द्वारा प्रतिपादित सामाजिक यथार्थवाद को प्रेमचंद ने आगे बढ़ाकर राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया। इसी प्रकार दलित साहित्य गुजरात और महाराष्ट्र से कर्नाटक होते हुए हिंदी क्षेत्र में प्रसारित हुआ।

इस प्रकार, अनुवाद के माध्यम से विभिन्न भाषाओं में रचित कृतियाँ और उनके रचनाकार एक व्यापक भारतीय साहित्यिक परंपरा का अंग बन जाते हैं। इस प्रक्रिया में भाषिक भिन्नता राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक संवेदना के प्रसार में बाधक नहीं बनती, बल्कि सेतु का कार्य करती है।

साहित्यिक अनुवाद के शैलीगत प्रकारों में भावानुवाद, सारानुवाद तथा शब्दानुवाद प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इन विभिन्न विधियों के माध्यम से मूल कृति के अर्थ, भाव और शैली को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित किया जाता है। विशेषतः पद्य कृतियों का सरल एवं बोधगम्य रूप प्रस्तुत करने के लिए उनका सारानुवाद गद्य के रूप में किया जाता है, जो सामान्य पाठकों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है।

भारतीय साहित्य के अनुवाद में सारानुवाद की प्रवृत्ति विशेष रूप से प्रमुख रही है। कालिदास, बाणभट्ट, भास आदि संस्कृत के महान कवियों के महाकाव्यों और पद्य नाटकों का गद्यानुवाद तथा सारानुवाद, मूल कृतियों

के भावार्थ को सरलता से समझने में सहायक रहा है। इसी प्रकार, विलियम शेक्सपियर के नाटक, जो मूलतः पद्य शैली में रचित हैं, उनके गद्य रूप में किए गए सारानुवादों ने पाठकों को उनके साहित्यिक सौंदर्य का सहज आस्वादन करने में समर्थ बनाया है।

भारतीय साहित्य की अमूल्य धरोहर 'संस्कृत में रचित रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य' आज विभिन्न भारतीय भाषाओं में मुख्यतः अनुवाद के माध्यम से ही व्यापक पाठकवर्ग तक पहुँचे हैं। इसी प्रकार भगवद्गीता, जिसका मूल पाठ संस्कृत में है, अनुवाद के माध्यम से उन पाठकों तक भी पहुँची है जो संस्कृत से परिचित नहीं हैं, और वे उसके दार्शनिक संदेशों को समझकर अपने जीवन में आत्मसात कर रहे हैं।

पद्य का अनुवाद मूल कृति के अनुरूप छंदबद्ध तथा छंदमुक्त – दोनों रूपों में किया जाता है, जिससे उसकी सौंदर्यात्मकता और भाव–गहनता को यथासंभव सुरक्षित रखा जा सके।

इस प्रकार, भारतीय साहित्य की प्राचीन धरोहर आज अनुवाद के माध्यम से ही जीवंत बनी हुई है और समाज में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों तथा परंपराओं के प्रति नवचेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में रचित पद्य साहित्यकृविशेषतः काव्य और महाकाव्य के अनूदित रूप अन्य भाषाई समुदायों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। हिंदी में रचित प्रियप्रवास, वैदेही वनवास, कामायनी, साकेत, उर्वशी तथा कुरुक्षेत्र जैसे महाकाव्य विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनूदित होकर व्यापक पाठक–वर्ग तक पहुँचे हैं। इस प्रकार भारतीय साहित्य की प्रमुख कृतियों का अन्य भाषाओं में रूपांतरण देशवासियों को भारतीय सांस्कृतिक अस्मिता की समरूपता और अंतर्निहित एकता से परिचित कराता है।

गद्य साहित्य के क्षेत्र में कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, जीवनी, आत्मकथा और निबंध जैसी विधाओं का अंतरभाषिक अनुवाद भारतीय समाज की बहुआयामी संरचना को समझने में अत्यंत सहायक सिद्ध हुआ है। हिंदी, जो राजभाषा होने के साथ–साथ व्यापक रूप से समझी और बोली जाने वाली भाषा है, अनुवाद की प्रक्रिया में एक सेतु–भाषा के रूप में उभरती है। परिणामस्वरूप हिंदी से अन्य भारतीय भाषाओं में तथा अन्य भाषाओं से हिंदी में व्यापक स्तर पर साहित्य का अनुवाद हुआ है और यह प्रक्रिया निरंतर जारी है।

तथापि, भारतीय साहित्य के अनुवाद के क्षेत्र में एक प्रमुख समस्या अंतरभाषिक अनुवाद की है अर्थात् हिंदी को छोड़कर अन्य भारतीय भाषाओं के मध्य प्रत्यक्ष अनुवाद अपेक्षाकृत कम हुआ है। वर्तमान समय में इस प्रकार के अनुवाद की आवश्यकता अत्यधिक अनुभव की जा रही है, जिससे विभिन्न भाषाई समुदायों के बीच साहित्यिक संवाद और अधिक सुदृढ़ हो सके।

उदाहरणस्वरूप, हिंदी के प्रमुख कथाकार प्रेमचंद के साहित्य का अनुवाद लगभग सभी भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। इसी प्रकार बांग्ला के बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय और शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के कथा–साहित्य के अनुवाद हिंदी सहित अनेक भारतीय भाषाओं में व्यापक रूप से प्रचलित हैं। बांग्ला साहित्य के अनेक प्रमुख रचनाकारों की कृतियाँ 'पद्य और गद्य दोनों ही रूपों में' हिंदी तथा अन्य भाषाओं में अनूदित होकर राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय हुई हैं।

हिंदी का विशाल पाठक–वर्ग भी इस प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कारक है, जिसके कारण क्षेत्रीय भाषाओं की अनेक रचनाएँ पहले हिंदी में अनूदित होती हैं और तत्पश्चात अन्य भाषाओं में पहुँचती हैं। इस संदर्भ में

साहित्य अकादमी की भूमिका भी उल्लेखनीय है, जो हिंदीतर कृतियों का हिंदी में तथा हिंदी कृतियों का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराकर साहित्यिक आदान–प्रदान को प्रोत्साहित करती है।

वर्तमान समय में भारतीय अंग्रेजी साहित्य भी अत्यंत लोकप्रिय हो गया है और भारतीय अंग्रेजी रचनाकारों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। चेतन भगत, अनीता देसाई, अरुंधती राय और आमिश त्रिपाठी जैसे समकालीन लेखकों के उपन्यास व्यापक पाठक–वर्ग द्वारा पढ़े जा रहे हैं। इनकी कृतियों के हिंदी अनुवाद भी समान रूप से लोकप्रिय हो रहे हैं, जो यह सिद्ध करते हैं कि अनुवाद भारतीय साहित्य के प्रसार और उसकी सर्वग्राह्यता में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

**भारतीय साहित्य के अनुवाद की समस्याएँ :**

भारतीय साहित्य की बहुभाषिक प्रकृति के कारण अनुवाद की आवश्यकता जितनी अनिवार्य है, उतनी ही इसकी प्रक्रिया अनेक चुनौतियों से भी घिरी हुई है। इन समस्याओं को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर समझा जा सकता है –

1. भारतीय साहित्य के अनुवाद के लिए सरकारी एवं गैर–सरकारी स्तर पर संगठित संस्थागत प्रयासों का अभाव है। यद्यपि साहित्य अकादमी इस दिशा में कार्यरत है, तथापि उसका कार्यक्षेत्र सीमित है और भारतीय साहित्य की व्यापकता की तुलना में यह प्रयास अपर्याप्त प्रतीत होते हैं।
2. भारत में अनुवाद कार्य प्रायः स्वैच्छिक रूप से नहीं किया जाता। कुछ सीमित अनुवादक ही अपनी व्यक्तिगत रुचि या आत्मसंतोष के लिए इस क्षेत्र में सक्रिय हैं।
3. साहित्यिक अनुवाद को अपेक्षित प्रोत्साहन प्राप्त नहीं है। सरकारी और गैर–सरकारी दोनों स्तरों पर इसे पर्याप्त सम्मान नहीं दिया जाता, और न ही इसे एक स्वतंत्र पेशे (Profession) के रूप में व्यापक मान्यता मिली है।
4. कुछ प्रकाशक व्यापारिक दृष्टिकोण से चुनिंदा कृतियों का अनुवाद अवश्य कराते हैं, किन्तु यह प्रयास सीमित और उद्देश्यतः व्यावसायिक होता है। इसमें भारतीय साहित्य के संवर्धन या सांस्कृतिक चेतना के प्रसार की अपेक्षा बाजार–केन्द्रित दृष्टि अधिक प्रभावी रहती है।
5. जनसामान्य में अनूदित साहित्य के प्रति अपेक्षित अभिरुचि का अभाव देखा जाता है।
6. भारतीय साहित्य के प्रति व्यापक स्तर पर उदासीनता की प्रवृत्ति भी एक महत्वपूर्ण बाधा है।
7. भारतीय साहित्य की संकल्पना स्वयं अभी पूर्णतः स्पष्ट और स्थापित नहीं हो सकी है, जिसके कारण जनसामान्य में इसकी समग्र छवि विकसित नहीं हो पाई है।

भारतीय भाषाओं का अस्तित्व केवल भाषिक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि उनका एक सांस्कृतिक आयाम भी है, जो भाषा की सीमाओं का अतिक्रमण करता है। यही कारण है कि फारसी और अंग्रेजी जैसी भाषाएँ, मूलतः भारतीय न होते हुए भी, उनमें रचित साहित्य भारतीय साहित्य के अंतर्गत स्वीकार किया जाता है।

वस्तुतः भारतीय साहित्य भारतीय जन–जीवन की समग्र अभिव्यक्ति का इतिहास है– यह उनकी साहित्यिक परंपराओं, परिवर्तन, उत्थान–पतन और पुनरुत्थान की सतत प्रक्रिया का दर्पण है।

भारतीय साहित्य की मूलभूत संकल्पना को साकार रूप देने के लिए अंतरभाषिक अनुवाद की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी और सुदृढ़ बनाना आवश्यक है। राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक समन्वय के प्रसार के लिए अनुवाद

को एक सशक्त माध्यम के रूप में विकसित करना होगा।

भारतीय साहित्य, जो कि भारत की सभी भाषाओं में रचित कृतियों का समेकित स्वरूप है, प्रत्येक भारतीय के लिए आत्मसात करने योग्य सांस्कृतिक धरोहर है। यह किसी एक भाषा का साहित्य नहीं, बल्कि एक व्यापक, समावेशी और बहुआयामी साहित्यिक परंपरा है, जो समूचे भारत की अस्मिता को अभिव्यक्त करती है।

भारत में नवजागरण का स्वरूप उन्नीसवीं सदी के दूसरे दशक में स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आया। इस काल में वैचारिक उद्वेलन की प्रक्रिया प्रारंभ हुई और परंपरागत मान्यताओं को नए संदर्भों में व्याख्यायित करने की आवश्यकता अनुभव की गई, जिसने सांस्कृतिक आधुनिकता को जन्म दिया। इन सभी कारकों ने मिलकर भारतीय समाज को नई दिशा प्रदान की और नवजागरण के मार्ग को प्रशस्त किया। हिंदी नवजागरण वस्तुतः भारतीय समाज के सांस्कृतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक पुनर्जागरण का युग था, जिसमें अनुवाद ने अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

अनुवाद ने हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में केंद्रीय स्थान ग्रहण किया। हिंदी साहित्य की परंपरा में सामाजिक समस्याओं, विविध विषयों और नए विचारों को अभिव्यक्त करने वाली अनेक रचनाएँ अनुवाद के माध्यम से संभव हुईं। अनुवाद ने न केवल नई साहित्यिक विधाओं को जन्म दिया, बल्कि हिंदी की साहित्यिक निधि को भी समृद्ध किया। संस्कृत, उर्दू, अरबी–फारसी तथा अंग्रेजी जैसी भाषाओं से शब्दों के आगमन ने हिंदी की शब्द–संपदा को विस्तृत किया। साथ ही, हिंदी भाषा के विकास, लिपि–निर्धारण और मानकीकरण जैसे महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के समाधान में भी अनुवाद की उल्लेखनीय भूमिका रही।

संस्कृत, बांग्ला तथा पाश्चात्य साहित्य के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं की कृतियों के अनुवाद ने हिंदी साहित्य को समृद्ध और बहुआयामी बनाया। अनुवाद के माध्यम से विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों का समन्वय हुआ, जिससे हिंदी साहित्य को एक समेकित स्वरूप प्राप्त हुआ। यह प्रक्रिया केवल साहित्यिक उन्नति तक सीमित नहीं रही, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक चेतना के विकास में भी सहायक सिद्ध हुई। अनुवादकों ने अपने वैचारिक दृष्टिकोण के अनुरूप कृतियों का चयन और प्रस्तुतीकरण किया, जिससे समाज में नई चेतना का संचार हुआ।

इस संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन उल्लेखनीय है कि अंग्रेजी और हिंदी के 'सिंटैक्स' में मौलिक अंतर है, अतः अनुवाद एक विशिष्ट कला है, जो निरंतर अभ्यास से विकसित होती है। अन्यथा भाषा में अनुवाद का कृत्रिमपन बना रहता है और मूल भाषा की छाया समाप्त नहीं होती। उनके अनुसार, अनुवाद में भाषा की स्वाभाविकता और मुहावरेदारी का विशेष ध्यान रखा जाना आवश्यक है।

अनुवाद के माध्यम से हिंदी में नए शब्दों का निर्माण और प्रयोग संभव हुआ, जिससे भाषा अधिक अभिव्यक्तिपूर्ण और सक्षम बनी। यह प्रक्रिया केवल भाषा–निर्माण तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसके माध्यम से एक नए साहित्य और समाज का भी निर्माण हुआ। अनुवाद ने हिंदी को व्यापक, संप्रेषणीय और सर्वग्राह्य स्वरूप प्रदान किया।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का सन् 1877 का 'हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान' इस संदर्भ में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया कि अंग्रेजों ने अनुवाद के माध्यम से अपनी भाषा को समृद्ध किया और अन्य देशों के ज्ञान–विज्ञान को आत्मसात किया। उन्होंने हिंदी समाज को भी इसी दिशा में प्रयास करने के लिए

प्रेरित किया। उनका यह दृष्टिकोण हिंदी भाषा के विकास में अनुवाद की अनिवार्यता को रेखांकित करता है। भारतीय समाज प्राचीन काल से ही बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक रहा है, जहाँ अनुवाद ने ज्ञान–संप्रेषण, सृजन और संवाद में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्राचीन काल में संस्कृत से पालि तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद हुए, जबकि मध्यकाल में संतों ने लोकभाषाओं में अनुवाद कर जनजागरण का कार्य किया। वैद्यक, ज्योतिष और व्याकरण जैसे विषयों के ग्रंथों के अनुवाद ने भी हिंदी के विकास में योगदान दिया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अनुवाद–कार्य ने विशेष गति प्राप्त की। भारतेंदु हरिश्चंद्र, मैथिलीशरण गुप्त, रामचंद्र शुक्ल, प्रेमचंद तथा हरिवंशराय बच्चन जैसे साहित्यकारों ने विभिन्न भाषाओं से अनुवाद कर हिंदी साहित्य को नई दिशा प्रदान की। अनुवाद के माध्यम से विभिन्न भारतीय भाषाओं के बीच वैचारिक आदान–प्रदान हुआ, जिससे राष्ट्रीय एकता को भी बल मिला।

संस्कृत और पाश्चात्य साहित्य के अनुवादों ने सामाजिक और राजनीतिक चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। उदाहरणस्वरूप, रामचंद्र शुक्ल द्वारा हेक्केल की 'रिडल ऑफ यूनिवर्स' का 'विश्व प्रपंच' नाम से अनुवाद नए वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है। इस प्रकार अनुवाद ने भारतीय समाज में ज्ञान–विज्ञान के प्रसार और सांस्कृतिक जागरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उपनिवेश काल में अनुवाद का उपयोग राजनीतिक और सांस्कृतिक उद्देश्यों के लिए भी किया गया। अंग्रेजी मिशनरियों, विशेषकर विलियम केरी, ने धार्मिक ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद कर उन्हें जनसाधारण तक पहुँचाया। इसी प्रकार, विभिन्न संस्थाओं द्वारा इतिहास और अन्य विषयों के ग्रंथों के अनुवाद ने भारतीय पाठकों को वैश्विक ज्ञान से परिचित कराया। राजा राममोहन राय जैसे सुधारकों ने भी संस्कृत ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद कर ज्ञान के प्रसार में योगदान दिया।

भारतेंदु युग में अनुवाद–परंपरा को नई गति मिली। इस काल में उपन्यास, नाटक और निबंधों के साथ–साथ उनके अनुवाद भी महत्त्वपूर्ण रहे। शेक्सपियर के नाटकों के हिंदी अनुवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने स्वयं 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का 'दुर्लभ बंधु' नाम से हिंदीकरण किया। उनके साथ लाला सीताराम, श्रीधर पाठक, गोपीनाथ आदि अनुवादकों ने भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

द्विवेदी युग में अनुवाद–कार्य और अधिक परिष्कृत रूप में सामने आया। इस काल में शेक्सपियर, गोल्डस्मिथ आदि की कृतियों के अनुवादों ने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। श्रीधर पाठक, मैथिलीशरण गुप्त और हरिवंशराय बच्चन जैसे साहित्यकारों ने अनुवाद के माध्यम से हिंदी साहित्य को विश्व–साहित्य से जोड़ा।

अंततः, यह कहा जा सकता है कि अनुवाद हिंदी नवजागरण का एक सशक्त उपकरण रहा है। इसके माध्यम से न केवल भाषायी सीमाएँ समाप्त हुईं, बल्कि सांस्कृतिक समन्वय, ज्ञान–विस्तार और सामाजिक चेतना का भी विकास हुआ। अनुवाद ने 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को मूर्त रूप प्रदान करते हुए हिंदी भाषा और साहित्य को वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्थापित किया।

## सहायक ग्रंथ सूची (Works Cited)


1. उपाध्याय, शरतचंद्र, देवदास (मूल बांग्ला 1917), हिंदी अनुवाद, राजपाल एंड संस।
2. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, साहित्य सदन, 1931।

3. चटर्जी, सुनीतिकुमार, Languages and Literatures of India, बंगाल संस्कृत एसोसिएशन, 1963
4. चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र, आनंदमठ, (मूल बांग्ला 1882), हिंदी अनुवाद, प्रभात प्रकाशन।
5. ठाकुर, रवीन्द्रनाथ, गीतांजलि, (स्वयं द्वारा अनूदित अंग्रेजी संस्करण), इंडिया सोसाइटी, 1912, (नोबेल पुरस्कार 1913)
6. गोरा, (मूल बांग्ला 1910), हिंदी अनुवाद, साहित्य अकादमी।
7. प्रसाद, जयशंकर, कामायनी, भारती भंडार, 1936
8. प्रेमचंद, गोदान और अन्य कथा साहित्य, (विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद)
9. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, भारतीय साहित्य की एकता, (साहित्य अकादमी की स्थापना के अवसर पर वक्तव्य), साहित्य अकादमी, 1954
10. शुक्ल, रामचंद्र, विश्व प्रपंच, (हेक्केल की 'रिडल ऑफ यूनिवर्स' का अनुवाद), नागरी प्रचारिणी सभा, 1920
11. शेक्सपियर, विलियम, दुर्लभ बंधु, (मर्चेंट ऑफ वेनिस का हिंदी अनुवाद, अनुवादक : भारतेंदु हरिश्चंद्र), 1880
12. हरिश्चंद्र, भारतेंदु, हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान, (बलिया भाषण), 1877

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 8.642

# बोहल शोध मंजूषा
# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 7.834

# Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

# SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज,
भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. सुनीता देवी**

सहायक प्रोफेसर हिंदी, गुरु गोरखनाथ जी राजकीय महाविद्यालय,
हिसार, हरियाणा।

*for the paper titled*

**'आपका बंटी' की प्रासंगिकता : एक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक अध्ययन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 10-14

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**जगदीश कुमार धुर्वे**, शोधार्थी

**डॉ. राखी सक्सेना,** सह प्राध्यापक एवं शोध निर्देशिका

वाणिज्य विभाग, कैरियर महाविद्यालय (स्वशासी) भेल, भोपाल (म.प्र.)

*for the paper titled*

**प्रधानमंत्री आवास योजना और गरीबों का सशक्तिकरण : विकसित भारत 2047 की ओर**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 15-19

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Rakesh Kumar Sharma,** Research Scholar

**Dr. Laxmi Kumari,** Assistant Professor (Research Director)

University Department of Political Science, Veer Kunwar Singh University, Ara, Bihar

*for the paper titled*

## Indian Diaspora as a Bridge of Soft Power in Africa

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 20-27

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**अनूप कुमार** (शोधार्थी),

**डॉ. शैलेन्द्र कुमार** (शोध निर्देशक और एसोसिएट प्रोफेसर)

राजनीति विज्ञान विभाग, जे. पी. महाविद्यालय, नारायणपुर (भागलपुर)

तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर–812007

*for the paper titled*

**गरीबी व पलायान रोकने में मनरेगा की प्रासंगिकता**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 28-31

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. कुमकुम श्रीवास्तव,** असिस्टेंट प्रोफेसर
एमिटी लॉ स्कूल, एमिटी यूनिवर्सिटी,
उत्तर प्रदेश लखनऊ।

*for the paper titled*

**भाषा एवं साहित्य शिक्षण में तकनीक और डिजिटल माध्यम**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 32-37

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**नीलेश कुमार प्रजापति,** शोधार्थी
**डॉ. जी. पी. अहिरवार,** निर्देशक

*for the paper titled*

**महामति प्राणनाथ की यात्रा वृत्तांतों में लोक चेतना**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 38-45

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**कपिल कुमार**, शोधार्थी

**डॉ. नीलम राणा,** असि. प्रोफेसर,

जनता वैदिक कॉलेज, बड़ौत, बागपत।

*for the paper titled*

**हिन्दी प्रदेश की बोलियाँ, उपभाषाएँ तथा जनजातीय भाषाएँ : एक अध्ययन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 46-53

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**Dr. Gajender Singh Saroha,** Research Supervisor
**Kailash Chand Haritwal,** Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

*for the paper titled*

**A Comparative Study of Job Stress among Physical Education Teachers of Rajasthan**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 54-57

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**Dr. Shipra Chakraborty,** Research Supervisor
**Rajendra Kumar Palsaniya,** Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

*for the paper titled*

**A Comparative Study of Anthropometric Characteristics of Softball Players in Rajasthan**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 58-60

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**Dr. Sushil Kumar Daiya,** Research Supervisor,

ASSISTANT PROFESSOR (Commerce and Management)

**Hema,** Researcher

Commerce, Tantia University, Sri Ganganagar.

*for the paper titled*

**वर्तमान समय में सोशल मीडिया द्वारा ब्रांडिंग को दी जाने वाली नई दिशाएं और आकार : एक विस्तृत अकादमिक अध्ययन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 61-64

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Chandan Kumar Yadav,** Ph.D. Research Scholar
Department of Medieval and Modern History, University of Lucknow, Lucknow.

**Prof. Pawan Kumar Yadav**
Department of History (RMP PG College, Sitapur)
University of Lucknow, Lucknow.

*for the paper titled*

## Patterns and Socio-Economic Implications of Migration : A Case Study of Gorakhpur District

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 65-71

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा
# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. नरेश कुमार**

(अतिथि व्याख्याता–समाजशास्त्र) वीरांगना अवंती बाई शासकीय महविद्यालय, छुईखदान, जिला–खैरागढ़–छुईखदान–गण्डई (छ.ग.)

*for the paper titled*

**भारतीय ज्ञान परंपरा का सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्व**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 72-77

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**जयविर वाशिष्ठ**

शोधार्थी, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय (MSU)
बड़ौदा, वडोदरा, गुजरात।

*for the paper titled*

**आधुनिक पारिवारिक विघटन के संदर्भ में 'आपका बंटी' की प्रासंगिकता**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 78-85

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा
# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**विशाल चन्द**, शोधार्थी
समाजशास्त्र विभाग, लक्ष्मण सिंह महर परिसर, पिथौरागढ़,
एस. एस. जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा।

*for the paper titled*

**जनजातीय समुदायों में परंपरागत ज्ञान, स्वच्छता और स्वास्थ्य व्यवहार का समाजशास्त्री विश्लेषण**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 86-91

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Kuldeep Singh**
UGC- Junior Research Fellow
Department of Political Science, University of Delhi

*for the paper titled*

## Sub-Categorization in OBC Quota & the pursuit of Justice : Revisiting the Karpoori Thakur Formula in Context of Bihar

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 92-107

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा
# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**असित दिवाकर**

शोध छात्र, भूगोल विभाग,
रांची विश्वविद्यालय, रांची।

*for the paper titled*

**झारखंड में जनजातियों की पारंपरिक आजीविका के स्रोत (कृषि, वन उत्पाद, शिकार, मछली पकड़ना इत्यादि) से संबंधित चुनौतियों का भौगोलिक विश्लेषण**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 86-91

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**कु. महिमा प्रजापति**

शोध छात्रा, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व,
लखनऊ विश्वविद्यालय।

*for the paper titled*

**अभिलेख : आर्थिक पक्षों के प्रमाण**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 116-121

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा
# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. महेश कुमार शर्मा**

Assistant Professor, Faculty of Education, Principal D.El.Ed. Institute of Advance Studies in Education Gandhi Vidya Mandir, Sardarshahar.

*for the paper titled*

**Comparative study of academic achievement and learning styles of CBSE and State Board students**

**CBSE और राज्य बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं अधिगम शैली का तुलनात्मक अध्ययन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 122-125

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**अमनदीप कौर,** शोधार्थी

**डॉ. सोनिया रानी**

Asst. Prof. of Faculty of Art & Craft Science

टांटिया यूनिवर्सिटी, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

*for the paper titled*

**राजस्थान की प्रसिद्ध महिला चित्रकार डॉ. वीरबाला भावसार का व्यक्तित्व व कृतित्व**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 126-129

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**देवार्चन चक्रवर्ती**

शोधार्थी, हिंदी विभाग,

रवेंशॉ विश्वविद्यालय, कटक, ओड़िशा।

*for the paper titled*

**साहित्य में स्त्री का आत्म-प्रतिबिंब**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 130-133

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**मो. नसरुल्ल मुस्तफ़ा खान,** शोधार्थी

**डॉ. तबस्सुम फरखी,** प्रोफेसर एवं शोध–निर्देशक

इतिहास विभाग, एम. एल. के. पी. जी. कालेज, बलरामपुर।

*for the paper titled*

**नानपारा रियासत : एक अध्ययन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 134-139

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा
# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**पूनम,** शोधार्थी,

**प्रोफेसर संजीव कुमार,** शोध निर्देशक

हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,

अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा।

*for the paper titled*

**श्रीरामचरितमानस का भारतीय परम्परा पर सांस्कृतिक प्रभाव**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 140-144

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा
# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**मालती देवी**
शोधार्थी (हिंदी विभाग),
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय।

*for the paper titled*

**'परिंदे' कहानी : अस्तित्व, आधुनिक चेतना और अकेलापन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 145-148

9 772395 711007

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**सुमन लता,** शोधार्थी

**डॉ. सुनीता सिंह,** शोध निर्देशिका

ओम स्टर्लिंग ग्लोबल यूनिवर्सिटी, हिसार, हरियाणा।

*for the paper titled*

## ज्ञानप्रकाश विवेक के साहित्य में धार्मिक विघटन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 149-154

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**प्रोफेसर (डॉ.) चन्द्रशेखर सिंह**

समाज कार्य विभाग,

महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

*for the paper titled*

**वाराणसी में घाटों पर काम करने वाले बच्चों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 155-162

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**प्रीति रानी**

शोध छात्र, योग विभाग

महाराजा अग्रसेन हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय,

पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड।

*for the paper titled*

**भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में ध्यानयोग : आचार्य रजनीश (ओशो) के विशेष संदर्भ में**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 163-174

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**प्रीति मीणा,** शोधकर्त्री

**डॉ. मन्जू देवी,** सहायक आचार्या,

श्री बालाजी टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, जयपुर।

*for the paper titled*

**स्वामी दयानंद सरस्वती के सत्यार्थ प्रकाश में निहित शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में उपादेयता**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 175-177

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. नीतू शर्मा**

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

*for the paper titled*

**समकालीन हिंदी कहानियों में वर्णित वृद्ध विमर्श की परिकल्पना**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 178-181

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**लेफ्टिनेंट (डॉ.) शबाना हबीब**

सह.आचार्या,

राजकीय महिला महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम।

*for the paper titled*

**भारतीय साहित्य में अनुवाद की भूमिका**

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

April 2026, Vol. 24, Issue -4, Part-2, Page No. 182-192

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152